



# निर्वसना

श्री गोपाल आचार्य



सूर्य प्रकाशन मन्दिर  
बीकानेर

प्रथम मस्करण १८६५

मूल्य पाच रुपये पचास पैसे

जावरण गौतम

© श्री गणेश आचार्य

## प्रकाशकीय

सूय प्रकाशन मन्त्रि के प्रकाशन की श्रृंखला में श्री गोपाल आचार्य का नवोन उपग्राम निवमना एक नवान कडी ह। उपग्राम निवमना आपन हायो म पहुचाने हुए हम अत्यधिक प्रसन्नता हो रही है।

इस अवसर पर हम उन सभा दृष्ट मित्रा और सहयोगियों क जाभारी हैं जिहाने इस अवसर पर सहयोग दिया। विशेषत जाभारी हूँ श्री गौनमजी श्री श्यामजी (सचालक, प्रभान प्रकाशन दिवनी) तथा भाई देवेन्द्रकुमारजी मुदडा या जिहाने इस अवसर पर अत्यधिक सहयोग दिया।

प्रकाशन सम्बन्धी सुभाव अभिनन्दनीय हैं।

राजेंद्र बिस्ता  
व्यवस्थापक



## अपनी ओर से

निवसना एक ऐसी रमणी के जीवन का चित्र है जो परिस्थितियों द्वारा समाज के एक विलासमय जगत में ढकेल दी गई थी। शरीर में गिरने पर भी आत्मा में वह कभी नहीं गिरी। उसने अवसर आने पर जीवन के नये मूल्या पर विचार किया और उन्हें आदम समझकर जीवन में अनुसरण किया। जीवन की वास्तविकता से वह दूर नहीं गई। समाज की प्रस्तुत परिस्थितियाँ में जीवन के मूल्या का बयां महत्व होगा यह स्वयं उदार पाठक निश्चित करें।

गजनेर रोड,  
डीवानेर

श्री गोपाल आचार्य



निर्वसना





## निर्वसना

१

चित्रकार अपनी चित्रशाला में एक नए अपूर्ण चित्र पर काय कर रहा था। उसके दाहिने हाथ में तूलिका थी और बाएँ में विभिन्न रंग लेपा की एक समतल पट्टियाँ। उसके सामने एक आधार पर उसकी कलाकृति उभरी हाथा गन शनैँ विकास पा रही थी और उसमें थाड़ा दूर काष्ठ आश्रित एक पार-दर्शी शीश कक्ष में उसकी प्रेरक प्रतिमा का इस समय आवाम था। कलाकार अपनी कृति के निर्माण में तन्मय था। अपना तूलिका में चित्र को कुछ मद्दुल स्पष्ट करने हुए चित्रकार ने उनका जमर दगने की उत्कठा में अपने आपको कुछ पाव पीछे मरकाया। इस तरह दूरस्थित उसकी दृष्टि अब कभी चित्र पर और कभी मजीब प्रेरक प्रतिमा पर आदानित हान लगी। कुछ ही क्षणों में वह पुनः अपनी कृति के पास मग्व आया। तूलिका और रंग पट्टियाँ को समीपस्थ एक आधार शिला पर रखते हुए उसने कहा—

“पूर्णमा ! जल-कण पुनः सूख चले हैं। तुम्हें एक बार और कष्ट करना होगा। जोर साथ ही अपने चित्र के महार एक ऊँचे आमन पर वह बैठ गया। उसने अपनी जेब से एक सिगरेट निकाली और पाते-पोंत धूम्र विनाद करने लगा। उसकी प्रतिमा अब भी उसके सामने ही थी। दगने देवत कण स्थित मूर्ति में मजीब गति दृष्टिगाचर हुई। उसने सुना—

“आज बहुत देरी लग रही है अगोक बाबू।

‘हा पूर्णमा ! मद्यस्नाता के लिए जनकण सौद्रय विन्दु हैं। यह सौद्रय इतना चञ्चल है कि मस्तिष्क में ठहरता ही नहीं। जब अस्वभाविक होने से डरता हूँ पूर्णमा।’

‘कलाकार कल्पना में काम नहा ल सकता, अगोक बाबू ?’

‘मैं तहा ले सकता, पूर्णमा। मरी अपनी सीमाएँ हैं। मद्यस्नाता के

सौंदर्य को स्मृतिपट पर यथावत सजाव रखने में आज अपने-आपको जस मग्न पा रहा हूँ। दृष्टि से दूर होते ही जा सौंदर्य स्मृतिपट पर आन स इन्कार करे उसकी कल्पना कमे करूँ पूर्णिमा।'

'आह ! साथ ही एक मधुर हास्य चित्रशाला में गुजित हाँ उठा। चित्रकार और उसके चित्र की सजीव प्रतिमूर्ति के बीच अब तक धूमका एक भीना पर्दा-मा चित्र हाँ उठा था। अशोक ने देखा कि पूर्णिमा का दत्त-यक्तिमुक्ता-आभा स भी अधिक जाकपक है। शीश कणक नीलिमा युक्त शुभ्र प्रकाश में उमकी गरीररथी सौगुने प्रभाव स उमके सामने प्रकाशित हो उठी।

पूर्णिमा उठी जोर कुछ ही क्षणा में स्नान कर भरते वेशो वही जाकर यथावत बठ गई। अशोक ने भी अपनी तूलिका और रग सभाल लिये। क्षण भर में ही उसका मुह से शब्द निकले— मुक्त वेशी का वक्षप्रदेश से सभालने की आवश्यकता नहीं, पूर्णिमा।

फिर कैसे ?

जसे बठी हो वस ही ठीक है। अधिक हिली डुली ता फिर स्नान करना होगा। उरोज छिप रहे हैं पूर्णिमा। बाह को कुछ पीछे करा। ग्रीवा को झुकाओ नहीं। पलको को खुला रखो।

और अपनी प्रतिमा को देख देखकर वह पुन अपने चित्र के रग भरने लगा। थोड़ी देर के बाद पूर्णिमा फिर बोल उठी—

और कितनी देर लगेगी अगाव बाबू ?

अधिक नहीं पूर्णिमा। आज इतना कष्ट द ही इसलिए रहा हूँ कि बार-बार देखकर ही गायन इस सौंदर्य को स्मृतिपट पर सुरक्षित रख सक। कल्पना के लिए आधार की आवश्यकता ता हर कलाकार का होती ही होगी पूर्णिमा !

और साथ ही कुछ स्मित रेखाएँ उमके चेहरे पर खेन गई।

इसी क्षण दीवार की घंटी न एक एक करके नौ बजा गिये। ठीक इसी समय द्वार के पास बानी बिजनी की घंटी भी बज उठी। अगाव न तूलिका और रग-मटिया क्षण भर द्वार की ओर देखकर आधार गिला पर गय गिये। पूर्णिमा का आनन्द दन हुआ उमन कहा— वस्त्र पहन ला पूर्णिमा।

तुम्हारी इच्छा पूरी हुई तो। कोई आ ही गया जाखिर।'

और इतना बह उसने अपने समीपस्थ के एक बटन को दबाकर शीश बक्ष में अर्धेरा कर दिया व स्वयं जागन्तुक के लिए द्वार खोलने चल दिया।

द्वार खुले। आगन्तुक पर दृष्टि पड़ते ही अशोक ने शिष्टाचार के साथ उसे अन्दर आने के लिये निवदन किया। आगन्तुक प्रवेग करते-करते ही खोलने लगा—

“क्षमा करना, अशोक बाबू। कुछ काम ही ऐसा था, कि पूरा सूचना दिए बिना ही ऐसे समय आना पड़ा।

“इससे अधिक प्रसन्नता और बधा ही सकती है, कि आप पधार। बड़ा भाग्य! मेरे लिए आया।”

‘बहुत आवश्यक कार्य है अशोक बाबू! इतना आवश्यक, कि उसके पूरा हुए बिना तो काम नहीं चल सकता।’

‘मैं किसी रूप में काम आ सकूंगा तो?’

‘बधा कहने हैं अशोक बाबू! बाह बाह! आपने तो आते ही तबियत खुश कर दी। हमें तो सहारा ही मारा आपका है। बड़े नम्र हैं। परमात्मा खुश रहे।’

दोनों व्यक्ति साथ-साथ चलने लगे। चिकना चमकीला फर्श था। दीवारों पर दानों और कलात्मक ढंग से कलापूर्ण चित्र टंगे थे। विजली की वज्रिया एक विनोद प्रकार से उनपर अपना प्रकाश फैला रही थी।

“काम क्या चल रहा है?”

“बहुत अच्छा। सब आपकी कृपा है।”

कुछ ही क्षणों में दोनों व्यक्तियों ने चित्रशाला के गलियारे को पार कर लिया व वे इसके अन्तर्ग विशाल बक्ष में आ प्रविष्ट हुए। चित्रशाला का यह एक विशाल बक्ष एक कुशल कलाकार की गुरुचि के साथ सजा हुआ था। चित्र तो ये ही, साथ-साथ विशेष स्थानों पर मूर्तिकला के उत्कृष्ट नमूने भी यहाँ दर्शकों को देखने को मिल सकते थे। गलियार के दाहिनी ओर चित्रकार के लिए कार्य करने की जगह थी जिसके पास ही सामने सजीव प्रतिमाओं के लिए शीश-आवास आयाजित था। बाईं ओर मित्रों व आगन्तुकों के बैठने व विश्राम करने के लिए उचित स्थान था जहाँ कुछ कृत्तिया, दो

मजें व दा सापासट गुमज्जित थ । अगोर आगंतुक का इगी दिगा म  
निया पाया और बटने का निवेदन करते हुए बोना —

मेरी अनुपस्थिति कुछ क्षण के लिए क्षमा करें । मैं आपके लिए चाय  
ले आऊं ।

इतना कह अशोक ने अय दिगा म पाव बड़ाप ही थे कि उमे मुताई  
लिया— अभी ठहरिय अशोक बाबू ! उमक लिए अभी इतनी जल्दी  
नहीं है । एक मित्र और आने वाले हैं । मेर साथ ही थे पर राह म कहीं  
उलझ गय । मैं तो आगे इमलिए चला आया कि आपको रोक सकूँ ।

आगंतुक के आग्रेण पर अशोक रवा नहीं । बोला—

‘ मैं आपके चाय प्रेम से सुपरिचित हूँ मनजर साहब ! इसके लिए तो  
आप छोटे-बड़े सभी अपराध क्षमा कर दते हैं ।

और वह चसा गया । आगंतुक ने भी अपने आपको अब स्वतंत्र  
से विंगाल सोफे पर फला दिया । कुछ ही देर म उमके मुह से शब्द निकल  
पडे— ‘ चाय पानी पीना इन दिना तो सब हराम हा रहा है । अब तो  
इच्छा होती है कि एक बार

गोप शब्द वक्ता के मुह म ही रहे कि एक बार जीर द्वार के पास वाली  
विजली की घटी अपने समस्त वेग के साथ बज उठी । पूर्वगतुक यकित  
समलकर अपने स्थान पर एक बार तो उठ बठा पर ज्यो ही चित्रशाला क  
गलियारे को पार कर उसने अपने साथी मित्र को इस विशाल कक्ष के जागे  
मना देखा तो वह बोल पडा—

जागे चल जाइय पडितजा ! मालूम होता है कि आज तो शुभ मुहन  
ने ही घर से विदा हुए थे ।

‘ आपके मित्र यही हैं तो ?

बिलकुल ! और देखिये चाय भी आ रही है ।

आपको और चाहिये ही क्या ।

अशोक बाबू ने दूर से नवागतुक यकित को अनुमान स पहचानने हुए  
हृय जोड अभिवादन किया । पास पहुंचते पहुंचते ता स्वय ही वह अपने  
रिचय म बोल उठा—

नौग मुझे अशोक नाम से पुकारते हैं । कला को बदनाम करता हूँ ।

चित्र मेरी जीविका है।'

नवागन्तुक व्यक्ति अगोक के स्वाभाव की सहज सरलता देख मन मुग्ध  
मा उसकी ओर देखन लगा। पास ही पड़ी एक मेज को नवागन्तुक व्यक्ति  
के आगे रखते हुए अगोक न प्रश्न किया—

'क्या श्रीमान से यह पूछन की घट्टता कर सकता हूँ, कि इस समय  
इस तुच्छ प्राणी को किस महान विभूति की उपस्थिति में खड़े रहने का  
सौभाग्य प्राप्त है।' अब तक अगोक के सवेत पर पाम ही खड़े सेवक ने  
चाय की सामग्री मज पर रख दी थी। अशोक न इस उत्तर में मुना—  
श्रीमान के इस दानाभिलाषी को लोग हृदयेश कहकर पुकारते हैं। इन  
दिनों उसे श्रीमान के ही मित्र की सेवा का गौरव प्राप्त है। इस सेवक की  
जीवनी उसकी लखनी पर आधित है अशाक बाबू।'

'मैं तो सोच रहा था कि एक ही सभ्य सभ्यता की इतिथी कर रहा  
है। पर, आप ता दाना ही न मर अधिकार पर आरो चलादी।' वाली मैन  
जर महोदय की थी। सुनकर हृदयेश ने हसते हुए उत्तर दिया— 'आपा  
रिक्त सवध स्थापित करन में हा ततीय व्यक्ति की आवश्यकता होती है  
मनजर सहाब। पारस्परिक आकषण के सिलसिले में तो आपकी सभ्यता  
का मध्यस्थ ततीय व्यक्ति मर्दव बाधक ही सिद्ध हाता है। क्षमा कीजिए,  
हम ततीय व्यक्ति की आवश्यकता नहीं थी मनजर साहब।'

'इस नई सभ्यता का तो हम देख चुके। अब इस पुरानी को दलो  
जिमसे कुछ हा मिलेगा।' और इतना कहने-कहत मैनजर महोदय ने  
चाय की प्रस्तुत प्याली उठा हा ली। थोड़ी देर में तीनों व्यक्ति हिले मिले  
आराम से चाय पान करन लग। गरम पय के दा-एक घट गले से नीच  
उतारने के बाद मनजर साहब बोल— 'कला कुद है जमाना कुछ और  
चाहा है अगोक बाबू।'

'जमाना कुछ है आप उस कुछ और दना चाहत है यह क्या नहीं, मन  
जर साहब।'

यही तो इ-ह में भी कहता हूँ अगोक बाबू। जमाना कुछ ह आप  
उग कुछ और दना चाहत है मुन लिया मनजर साहब।'

'एक अरसे में यही सुन रहा हूँ। अब समझने भी लगा। पर यह समझने

मन देरी से, बहुत महंगी कीमत पर मिली है अगोब बाबू। अब परिस्थिति ऐसी है कि सब कुछ पास का सो चुका हूँ। उधार के घर भी सारे बन्द हो चुके हैं। सिवाय नाटक कंपनी के और कुछ करने के लायक अब हूँ भी नहीं। मैं तो सबका निराग हो हो चुका था। इतना कह उन्होंने एक बार और चाय की प्याली को अपना होठो से लगा लिया। दो एक चुस्की लेने के बाद वे पुन बोलने लगे— पिछले शनिवार हृदयंगी अचानक ही घर चल आये। इन्होंने अपनी कंपनी के लिए नाटक लिखना स्वीकार कर लिया है। मेरे हृदय में फिर से आशा की किरण प्रकाशित हो उठी है अगोब बाबू। मैं दूर रहा था—किनारे से बहुत दूर, पर, अब किनारा मुझे नजदीक दिखाई दे रहा है। नाव मेरे सहारे आ लगी है। मस्लाह भी उसमें है। पर उसमें पास पतवार नहीं है अशोक बाबू।

दानों व्यक्ति धोना बने मनेजर महोदय की बात सुन रहे थे। प्याली की चाय को समाप्त करते-करते मनेजर महोदय ने फिर से बोलना प्रारम्भ किया— नाटक कंपनी और वेद्यालय में आजकल कोई अंतर नहीं रह गया है अगोब बाबू। भरा अनुभव तो जब यह स्वीकार करने में भी आपत्ति नहीं करता, कि एक नाटक कंपनी चलाने की अपेक्षा एक वेद्यालय चलाना वहीं अधिक आसान है। आजकल देशक रगभूमि पर कलाप्रदर्शन देखना नहीं चाहते। वे चाहते हैं यौवन और सौंदर्य का प्रदर्शन। वह यदि ह तो उन्हें और किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं। यदि वह नहीं है तो और कोई चीज उन्हें सन्तुष्ट नहीं कर सकती।

पर आप कला को यौवन और सौंदर्य से दूर क्यों समझते हैं मनेजर साहब ?

इसलिए कि वह एक दूसरे से दूर ही हैं।

फिर कला ही कला की आप बात भर कीजिए मनेजर साहब। उसका प्रदान का प्रश्न मैं जाने की आपकी आवश्यकता नहीं। इंसान ने अब तक शरीर से जलग जीवन और मृत्यु को नहीं देखा। उससे भिन्न सुख और दुख को नहीं समझा। शरीर के अभाव में जीवित और मृत्यु की सुख और दुख को कल्पना मात्र ही उसने की है। कल्पना और प्रदर्शन में बहुत बड़ा अंतर है मनेजर साहब। रगभूमि पर कला कल्पना का विषय नहीं, प्रदर्शन की

वस्तु है। उसे उसके शरीर, सौन्दर्य और यौवन से अलग नहीं किया जा सकता।

“मानता हूँ, कि कल्पना और प्रदर्शन में अंतर है पर ”

‘आप तो शब्दा के विश्लेषण में पड़ गये, मनेजर साहब। सांस्कृतिक आवरण को छोड़िये। सीधी बात पर आइये। वह पृष्ठभूमि तो अपरिचित व्यक्तिता के लिए सुरक्षित रखी जानी चाहिए।

‘तो सुनिये, अशोक बाबू। हृदयशर्जी की भी यदि यही राय है, तो, फिर वही हो। मैं आपके और हृदयशर्जी के मन से पूर्णतः सहमत हूँ। मेरी तो एक लम्बे अरसे से यही राय रही है कि कला जहाँ प्रदर्शन से संबंधित हो यौवन और सौन्दर्य में अलग नहीं की जा सकती बल्कि यौवन और सौन्दर्य का प्रदान ही कला है। उनकी उपस्थिति ही कलात्मक है। जहाँ प्रदान का प्रश्न हो वहाँ तो सांस्कृतिक कला पर जनरुचि को प्रधानता देनी ही पड़ेगी

‘अब तो आप बहुत स्पष्ट हो रहे हैं।

‘अभी और भी अधिक स्पष्ट होता है, अशोक बाबू। जिस कला के प्रदान के लिए यौवन और सौन्दर्य की आवश्यकता होती है उसी की खोज में आज हम आपके पास आये हैं। हृदयशर्जी अपनी एक कृति में ऐसी परिस्थिति लाय हैं जिसमें आपकी जनरुचि के प्रतीक यौवन और सौन्दर्य अपनी प्राकृतिक अवस्था में जनता के सामने आयेंगे। अब हमारी समस्या भी केवल कलात्मक प्रदर्शन ही नहीं देगी, अशोक बाबू बल्कि, स्वयं कला को भी प्रदान किया करेगी। हम एक ऐसी रमणी की आवश्यकता हैं जो कलारूप में अपने यौवन और सौन्दर्य को बिना आवरण रंगभूमि पर प्रदर्शित कर सके। हृदयशर्जी की राय है और उस राय का मैं भी समर्थक हूँ, अशोक बाबू, कि उस रमणी को बहुत थोड़े अरसे में ही हम सब-श्रेष्ठ कलाकार की शक्ति और सम्पन्नता प्राप्त कराने में समर्थ होंगे।’

नारी—निवसना—रंगभूमि पर ! यही तो आपकी आवश्यकता है, मनेजर साहब !

‘बिलकुल यही, अशोक बाबू ! नारी का रमण रूप। रमण की रमणीयता—उसका यौवन और सौन्दर्य ! जो प्रदानाव है वह प्रदर्शनीय, भी



हाना चाहिए। जा चित्रकार क पं पर आय उग नाट्यकार की रगभूमि पर आने म आपत्ति नहीं होनी चाहिए। ककार की दृष्टि म तो रग-तूनिवा और सन्-तूनिवा क विषय भिन्न हैं भी नहीं, अशोक बाबू।' वाणी हृदय की थी।

यही जनता की भी भाग है अशोक बाबू। हृदयजी का विश्वास है कि पूजा युग म बलानार और प्रगक दोना को ही जीवित रहने क लिए जनता क स्तर पर उतरना होगा। प्रत्येक को पूण रूप स व्यापारिक बनना पडेगा। सांस्कृतिक प्रगन का प्रबध तो सरकार अथवा चदे से चलनवाली सस्थाए ही इम युग म कर सकती है। जन स्तर से दूर जनचि की उोशा का साहस एक व्यापारिक भस्था म नहीं हो सकता अशोक बाबू।

'मुझे क्या करना हागा ?'

प्रत्येक चित्रकार अपनी कता के विकास के लिए सजीव प्रतिमाआ पर आश्रित रहता ही है अशोक बाबू। बहुत सम्भव यही है कि एक उच्च कोटि के चित्रकार का अनका सजीव, सुदर प्रतिमाआ से सुपरिचय क सपक हा। इसी आगा से आपके पास आए हैं जिससे आपकी सहायता स किसी सुयोग्य रमणी मे अपने उद्देश्य की दृष्टि से सम्बध स्थापित कर सकें।

'फिर ऐसी प्रतिमाओ क पते दू ?'

पता से पहले यदि उनके चित्र प्राप्त हो सकते।'

यह भी सम्भव है।

इतना कह अशोक अपने स्थान से तुरत उठ खडा हुआ। थोड़ी ही दूर रकी हुई एक भेज के घर से उमन एक चित्र पुस्तिका निकाली और उम परीक्षाय अपने आगतुक मित्रा के जाग रख दिया। दोना आगन्तुक व्यबिन पाम पाम बठ उस ध्यान से देखने लगे। पुस्तिका जब समाप्ति पर आर्दता अशोक बोना— कुछ लडकियो क चित्र आप चित्रशाला की दीवारो पर भी देख सकत है।

आगतुक चित्र-पुस्तिका ममाप्त कर अशोक के पीछे पीछे चित्रशाता के अयचित्र देखने लगे। थोड़ी देर के बाद एक चित्र को देखते देखते ही मने जर महान्य ने प्रश्न किया— इनम स तयार कौन कौन हो जाएगी ?

इसका उत्तर ता के ही न सकती हैं मनेजर साहब।

“आपकी दृष्टि से ?”

मेरी दृष्टि तो वहाँ तक पहुँचती नहीं।”

“इनसे आपके यहाँ भी मुलाकात हो सकती है ?”

“यदि आप ऐसा पसंद करें।”

‘कब तक ?’

“यदि आना दें तो कुछ एक का ता फोन अभी कर दूँ। समय निश्चित हो जाएगा।”

चित्र देखते व परस्पर म बातें करते-करते अत्र तक वे चित्रशाला के उस स्थान पर आ गये जहाँ अगाक थापी दर पहल अपना नया चित्र पूण कर रहा था। यहाँ पहुँचते ही दानो जागन्तुक यकितिया की आर्से कलाकार की नई कृति पर आरोपित हो गइ। डम दृष्टि जारापण के क्षण भर बाद हा दोना आगतुका ने परस्पर एक-दूसरे की जात्रा म अपनीअथ भरी दृष्टि मे देखा। हृदयश न अगोक का ध्यान आकर्षित करत हुए पूछा—

“यह चित्र, असोक वाव ?”

— “सद्य स्नाता है, हृदयशजी।”

“कल्पना है ?”

‘नहीं, जीवन।’

हमारा सम्बन्ध सम्भव हा सकता है ?”

‘असम्भव नहीं है।’

“इसे भी बुलाया जा सकता है ?”

‘अवश्य।’

‘कब ?’

‘जब भी आप आना करें।’

आगन्तुका की दृष्टि पुन परस्पर मिली। क्षणएक के विरामे क बाद हृदयश क मुह से गद निकल—

जिस मूर्ति के सहारे ऐसी कला सम्भव है वह स्वयं न जान कितनी कलात्मक होगी। यह वह चित्र है, मनेजर साहब, जिमका नायिका की सह्याग प्राप्ति पर आप और हम अपने भविष्य के स्वप्न का सपन बना मन्ते है। मुझे पसन्द है अशाक वावू ! मुझे अपनी पसन्द पर पूण

विश्राम है मनेजर साहब ! आप किसी भी मूल्य पर इस नायिका का सहयोग प्राप्त करने का प्रयत्न कीजिए । समय ही बतायेगा कि मेरी पसन्द की सामग्री से मैं क्या प्राप्त कर सकने में समर्थ हूँ । अभिनय जगत में एक नया जीवन चञ्चल कर उठगा मनेजर साहब ।

और यह कहते सुनते वे सब अपने बठने के पूव स्थान पर आ पहुँचे । अभी यहाँ आकर बैठे उन्हें एक क्षण भी नहीं बीता था कि चित्र-शाला की गार्ति पुन एक सगीतमय स्वर से आदोलित हो उठी । दूर से ही किसी न पुकार था—

'अशोक बाबू ।

स्वर नारी का था । सबका ध्यान उसकी ओर आकर्षित हो गया । पुन गब्द सुनाई दिये— एक मिनट के लिए क्षमा करें । पुकारने वाली बही दूर अपने स्थान पर यथावत खड़ी रही ।

'यदि आपत्ति न हो तो यही तशरीफ ले आइय । उत्तर अशोक की ओर से था । साथ ही उसकी चेहरे पर कुछ स्मित रेखायें प्रहसित हो उठी । उसने मुता— काई विनोप काम नहीं है अशोक बाबू ! बस एक मिनट ।

अब तक अपने पूव स्थान से चलकर वह कुछ आगे बढ़ आई थी । आगतुक्त ने देखा कि रमणी के मुख पर मुसकान की कुछ चञ्चल रेखायें खेल गई हैं । उसकी तन्-शक्ति को अपनी समस्त आभा के साथ चित्रशाला के विनोप प्रकाश में उहाने स्पष्ट रूप से चमकते देला । उसके अल्प व्यवहार में नारी मुलभ सजा विद्यमान थी ।

अशोक बाबू के इस बार के आमन्त्रण ने रमणी का इन बड़े हुओं के बीच ला उपस्थित किया । उसकी समीप पहुँचने-पहुँचते तीना ही व्यक्ति नारी के प्रति सम्मान प्रशान की दृष्टि से क्षण एक के लिए अपने-अपने स्थान पर उठ खड़े हुए । रमणी ने हाथ जोड़ मर नवा उनके अभिवादन का उत्तर दिया । आवाक बोना—

आप हृदयेगजी हैं । बच्चे अत्रे रगक हैं । आजकल हमारे मित्र थी किशोरीवाल्मीकी की नाटक कंपनी का मुगाभित करत हैं । साथ ही बकना न मनेजर साहब की जोर मकत कर दिया ।

'आप ता ? प्रदन हृदय का था।

आप ता आप ही हैं।

'आप ता आप ही हैं अजीब उत्तर है। किसी अपरिचित के समझ म तो यह भाषा आ नहीं सकती। क्या दबी जी ? बबतब्य मनेजर महोदय का था। रमणी बोली—

'आपक अशोक बाबू की विना प्रियता इन दिनों अपनी पराकाष्ठा पर है श्रामान जी। मेरा नाम तो पूर्णिमा है।'

'बहुत अच्छा नाम है। वाणी हृदय की थी। अशोक ने पूछा—  
अच्छा लगा तो आपको ?

'अवश्य।'

'स्वर म सगीत जो है। इसीलिए मैं चुप रहा।

आपकल सुनामद करना बहुत सीख गए।

'जोनों सुनामद पमद जा हुई जा रही हैं।

'ता फिर कही अभ्यास चालू है।'

'जसल बात तो यह है कि जिसके पाम अभ्यास करता हू वह पूर्णिमा ओर आपक के उपरोक्त वार्ता के ठीक बाद मनेजर साहब बोल पड़े— 'अर भाई ! हमे भी तो जाखिर किसी घाट उतारो। इतनी देर मे प्रतीक्षा जा कर रहे है।

'अधीर न हारए श्रामान जी ! यह जो कुछ सुनामद हो रही है सब आपके लिए ही हो रही है।

'अर भाई ! आपको फिर खडा क्यों कर रहा है ?

आप बठिए न। आप भी। आप भी तशरीफ रखें।

मैं ता आना लू। बहुत जल्दी काम है। आपस एक मिनट।

आपक एक मिनट वाला काम ता मैं समझ गया। उसे ता हुआ ही समझिए। मैं अभी चाय हाजिर करता हू। क्यों मनेजर साहब।' और इतना वह उसने अपने पाम ही के एक बिजली के बटन को दबा दिया। मनेजर साहब भी साथ ही तुरन्त बोल पडे— अवश्य, अवश्य, अशोक बाबू ! चाय के लिए कोई समय असमय नहीं होना। दृष्टि से दूर कोने मे खडा सेवक तुरन्त जा उपस्थित हुआ। बाला— जी।

चाय ल आआ। सेवक के चत जान पर हृदयग ने परिचयका प्रमग  
घनात ह्य पूछा— हा ता फिर आप ? '

'अभी भी नही पहिचाना ? ह\* हा गई। आप ही हमारी गय स्नाना  
हैं।

आह ! यही तो मैं देख रहा था।

अब तो मैं भी दग्न रहा हू हृदयग जी। और साथ ही एक मुक्त  
हमी मनजर साह्य वं मुह स बाहर हो गई।

मरवे प्रकृतिस्थ हो वरुन क वा\* अगा\* न पूर्णिमा का मगापन करत  
हूर कहा— मरे मेहरवान मित्र बाबू श्री विशारीलाल जी को अपना नाटक  
कम्पनी के लिए एक नायिका की आवश्यकता है। हृदयग जी का पमल  
आप पर गई है। अवसर है पूर्णिमा। बहुत बडा स्वण अवसर। जीवन म  
अवसर बार-बार नही आते। मरी बात पर गम्भीरतापूर्वक विचार करा।  
यदि कोई विगप आपत्ति न हो ता तुम्हे इनके जाम\*ण का स्वीकार कर  
लेना चाहिए।

'मैं—नायिका—नाटक कम्पनी म। मजाक के लिए आज और कोई  
मिना नही क्या अशोक बाबू ?

मजाक नही पूर्णिमा ! मैं अपनी वान म गम्भार हू। यह मज अपनी  
ओर स मैं कुछ भी नही कह रहा हू।

अशोक बाबू ने तो हमारे ही प्रस्ताव का हमारी इच्छा स आपके  
सामने रखा है दवी जी। यदि आप स्वीकार कर तो हम बडा खगी  
हागी।

आप भी जगाक बाबू की दाताम जा गय मालूम हात हैं हृदयेस  
जी। इनका ता विनोदी स्वभाव है। मैंने कभी कही काम नहीं किया है।  
नाटक कम्पना की नायिका ता एक बहुत बडी हम्नी हाती है।

जिम चाज की हम आवश्यकता है वरुन आपम है देवी जी। बडा हम्नी  
क्या हाती है कम बनती है यह सब हम मालूम है। हमार जाग्न और  
मस्ति\*क दोना है दवी जी ! हम उनम दख भा सकते हैं जा\* समझ भी  
मनते हैं।

पर मैंने कभी कही काम नहा किया है हृदयग जा ! मैं क\*ताकार

हू भी नहा जा आपका काम जा मक् ।

‘ इसकी चिंता तो हम करेंगे, दबी जी ! कौन अभिनता और अभि  
नत्री कलाकार हैं दूसरे के लिखे शब्दों को दोहराने वाले कही कलाकार  
हाने ह दबी जी । यह एक भ्रम ह मार्हीन मिथ्या प्रचार है । विवेकशौ  
व्यक्ति का इस पर कभी ध्यान हा नहीं दना चाहिये । ’

हृदयग जा ।

‘ एक बार फिर कहता हू दबी जी कि दूसरे के लिखे शब्दों को बोलने  
वाले कलाकार नहीं हान । व ता उल्लेख की प्रतिमाए है जा उमक सकेत पर  
धाती हैं और सकनपर हा चुप हा जाती है । क्षण एक विरम कर  
वह वाता— ‘कलाकार तना परतन कभी नहीं होता दबी जी । ’

‘ शब्द ही । आपन भर हृदय म एक नर् आशा को जम दिया पर  
साथ ही उमक मुनहर स्वप्ना का नष्ट कर दिया ।

क्षण एक विरम कर वह वाता—

दूसरे के लिखे शब्दों का वातन वान कलाकार नहीं होते । वे ता  
तपक की प्रतिमाए है जा एक मकन पर बोलता और दूसरे पर चुप हा  
जाती हैं । जाज न जाने कितने व्यक्तियों का भर सामने आपन सारहीन  
कर दिया । यदि प्रतिमा ही रहता ह ता क्या करुगी अभिनेत्री वनक  
हृदयेग जा ?

जीवन की आवश्यकताओं का प्रश्न है दबी जी । पजी युग है । आशा  
और अमाना की पूर्ति का मत्राल है । अवसर उपस्थित है आप हमारे  
प्रस्ताव का गम्भारतापूर्वक सोचें । इतने म नौकर धाय लेकर जा उपस्थित  
हुआ । मनेतर साहब प्याल को पूण करने लग । पूर्णिमा बोली— ‘ एक क्षण  
के त्रिण मान लाजिण कि मैं आपकी जाना म्बीकार कर नेती हू फिर क्या  
नेगा ? ’

जभावो म अवकाश मिलगा । आत्म हीनता दूर हागी । ख्याति  
मिगेगा सम्मान मिलेगा धन मिलेगा । आशा और अरमाना की पूर्तिक  
अवसर प्राप्त होंगे, माध्या की सिद्धि के साधन हथेली म रहेंगे ।

और मुझे करना क्या होगा ?

‘ वही जो अब करना हाता है ।



‘जाय यह बताइए न कि मुझे क्या करना होगा ?’

“वही बता रहा हूँ कुमारी जी। क्षमा कीजिएगा, अशोक बाबू। नारी के लिए हर पुरुष एक जसा है। पुरुष के लिए भी नारी नारी में अंतर नहीं। चित्रकार अशोक की आँखें कुमारी पूर्णिमा में जो रमणीयता देखती है वह लेखक हृदयेश देखेगा। उसी रमणीयता का दर्शन के लिए दोनों क हृदय आतुर होंगे। कुमारी पूर्णिमा जब तक अपने को चित्रकार की प्रतिमा अथवा लेखक की नायिका समझती है वह परतत्र है, दाम है। जिस दिन इस बंधन को तोड़—यदि विशेष के मोह का परित्याग कर वह स्वतंत्र बनेगी उसी दिन उसे अपनी सवशक्ति का पता चलेगा। नारी की रमणीयता ही बला है। उसी का प्रदर्शन हम करेंगे। पर वह सम्भव तभी है जब रमणी पुरुष-पुरुष में भेद न करे। आस आस में अंतर न देवे।

कुछ एक क्षण के लिए चित्रशाला में किसी विचारपूर्ण निणय के पूर्व की शान्ति ने अपना आधिपत्य सा जमा लिया। सभी उपस्थित व्यक्तियों के चेहरो पर अव-पूर्ण मौन हास्य की छाया नाचने लगी। परस्पर में सभी एक दूसरे की भाव भाषा पढ़ने का प्रयत्न करने लगे। आखिर पूर्णिमा ने ही शांति भंग की—बोली—

“अच्छा, अभी तो आना लूँ ?” साथ ही वह अपने स्थान से उठ खड़ी हुई।

हमारा प्रस्ताव ?’

“बल के लिए स्थगित।

‘सुबह ?’

“सुबह नहीं तो शाम।

“मैं आऊँ ?’

‘यदि मेरी ओर से कोई सूचना न मिले तो।’

‘फिर सूचना न भेजने की कृपा ही कीजिएगा।

“आपके पास पहुँचने का बहाना बना रहना चाहिए।’ वाणी मैनेजर महोदय की थी।

पूर्णमा बोली—‘जसी आना ! अशोक बाबू ! एक मिनट !’

‘हाजिर !’ साथ ही अशोक ने एक बंद लिफाफा उसके आगे बना



होठों की मन्द मुस्कराहट न गीघ्र हो स्मित हास्य का रूप ले लिया। वह अपने ही मौ-द्वय को अपनी ही जासो में कुछ क्षण देखती रही। मेज पर पास ही सिगरेट की डिब्बिया रखी थी। उसने एक सिगरेट जलाकर मुह में रख लिया और उसके धूम को किसी विचार में अपनी प्रतिछाया पर फेंकने लगी। एक अथभरी दृष्टि में उसने अपनी प्रतिरूपा की आला में देगा। फिर शीशे के पास सरककर पृच्छा—

‘क्या पूणिमा ? पस है ? इसमें अधिक और कुछ नहा करना पड़ेगा। अवसर है। अवसर बार बार नहा जाते। जा बनना चाहती थी वही है। ‘स्टेज ‘स्त्रीन में विशेष कोई अंतर नया। चढ़ने सभी गिगर पर पहुँचता है। बोल ! हा कहते। आपत्ति ही क्या है। सभी को एसा करना पड़ता है। लेकिन अमत्य नहीं कहता था। नारी की रमणीयता ही उसकी कला है। उसका रमणी रूप का प्रदर्शन ही उसका अभिनय है। भय किसका ? क्या ? अब भी हममें भिन्न क्या करती है ? लोग क्या कहेंगे ? अब भी लाग क्या नहा वक्त। ये कुछ नहीं प्रश्न ही गलत है। लगक टीक कहता था—जीवन की आवश्यकताओं का प्रश्न है। पूजी युग है। जागा और अरमाना की पूर्ति का मवाल है। जभावा में जबकाग मिलेगा। आत्महीनता दूर होगी। स्वाति मिलेगी सम्मान मिलगा धन मिलेगा। जागा और अरमाना की पूर्ति में अवसर प्राप्त हाने। माध्या का मिद्धि में मापन हयली में रहेंगे। न मत्रक पीछे रह्य क्या है ? वही जा लगक में कहा था—नारी की रमणीयता—उस रमणीयता का प्रयाग।

एतन में ही कमरे में बाहर सिगी में पावा की आग मुनाई दी। पूणिमा न बटन दबाकर कमरे में अर्धेग कर लिया। उसने गता उगक कमरे में पाग वान पहोगी गिनमा दगकर आय थ और सिगा ननरी की आता की प्रगमा कर रह थ। उगन मत्र पर की बना जना सी और मत्र पर हाप रगकर हमने सगी। सोधी हा देग में बात्र गड़े पहागिया का बाचना बात्र हा न्या। गीग में पाग मत्र में जाकर उगने कहा—

बात्र एक ही है पानी ! गीग अलग प्रयाग है। और नना का का भयन आदक आग एक बार और हम पही।

आत्र सिगी में गहन में नारी में रमणीयन को रात्रग कर दिया था।

रमणी की सजगता म इम समय उफान था। उस सजगता म आगा, अर मान मपने भागर की लहरा की तरह नाच रहे थे। उमके अग प्रत्यग म चबन लहरों की सी गति थी। रमणी के कमनीय अगा की अनक बारस्पा र करके उसने देखा और फिर एक मतवाली प्रमिका की तरह अपने ही प्रतिस्मिन्नत होठा का चुम्बन कर वह मुस्कराती हुई मेज पर ही गीश क सहारे बैठ गई।

कोने म एक छोटी मेज पर एक प्लट म उमका खाना रखा हुआ था। पास ही पानी की मुराहा पडी थी। उन पर दृष्टि जाते ही उमकी मुग मुद्राओं मे परिवतन-सा आ गया। वह कुछ क्षण एकटक उनकी ओर दसती रही और देखत देखते ही गिथिल हो गई। उसने उठकर जमीन पर पडे अपने पेटिकोट को उठाकर पहन लिया और गले मे एक डीला-मा वस्त्र डाल कोने म रखी मज के सहारे जा खडी हुई।

अब तक कमरे की खिडकी बन्द थी। उमने उसे खाल लिया। मज को पलग के सहार सरकाकर वह खाने के लिए बठ गइ। वही चाग चनातिया और सूखी सजी एक प्लट म रखे थ। भूख थी इमीलिए शायद खाना आवश्यक था। जा कुछ नी था उमन जल्दी जल्दी खाकर पानी पी लिया। खुली खिडकी क पास आकर खडी हुई तो दूर तक गति क इम मध्य प्रहर म भी पूजा युग की आभा को उसने सजीव पाया। जहा तक आख दग्न सक्ती थी उसने विजली की बत्तिया को जगमगाते दखा। मिनमा नाटक घर कारखान अपने को जीवित रखने के लिए काम कर रहे थे। मजदूर जग रहा था जिसमे मालिक सो सके।

वह अपने कमरे की खिडकी क सहारे खडी देखती रही। प्रकाशित मडक पर नीचे रिको चल रहे थे, गाडिया चल रही थी, मोटरें दौड़ रही थी और साथ ही सहारे फुटपाथ पर अनका स्त्री-पुरुष बच्चे मान की चिता म लोट पाट कर रहे थे। उनके ऊपर सडक के दाना ओर गगनचुम्बी अट्टालिकाए, कोठिया, महल खडे थे। किसके लिए बया था कितना था उससे छिपा हुआ नहीं था। युग ही ऐसा था जिसम पूजा को जिंदा रखन के लिए इन्सान मर रहा था।—

यहा इम तरह दखने-देखने अनका विचारा की रेखाए उमके चेहर पर

वा गड । एक हताश व्यक्ति के निश्चय की जाखिरी छाया ने उसे खिड़की के इस स्थान को छाड़ने के लिए विवश किया । वह खिड़की बंद कर पुनः गीने के नामने आ खड़ी हुई । इस समय उसका चेहरा गम्भीर था । मुख पर अपने निश्चय की अमिट छाप थी । हाठ बंद थे । उसने अपनी जाया, म कुछ क्षण के लिए अविरतरूप में दखा । फिर बोली— अभाव और हीनता में छुटकारा पाने के लिए जरूरी है कि युग का धारा के साथ युग क स्तर पर चला जाए ।

माथ ही उसके गम्भीर चेहर पर पुन एक स्मिन् हास्य खन उठा । उसमें खुशी की बजाए विलास की मादकता अधिक थी । उसने पुन एक एक करके अपने सार बस्त्र उतार दिए और अपने अंग प्रत्यंगों को एक नए यौवना के जभिमान से देखने लगी । उमन अपने अनक नारी विशेष अंगों का सहना-सहलाकर उभार उभारकर स्पंग कर-करवे देखा और विभिन्न कोणों में गीने में उनका सौंदर्य सौष्ठव गोलाई आदि परमन लगी । आज इस तरह एकान्त में अपने आपको देखने में उमन आनन्द आरुण्य था । मभवत पहल कभी भी वह अपनी यौवनमयी सौंदर्य सम्पत्ति के प्रति इस तरह इतनी अधिक मात्रा में सजग नहीं हुई थी । आज एकाएक विभीषण प्रेरक सवेतन प्रेरणा बदन अपने प्रति अपनी शक्ति के प्रति— अपने सौन्दर्य और यौवन के प्रति उसे सक्रिय रूप में सचेत कर लिया था । नारा में उम समय अपने रमणी रूप की प्रधानता थी । पूजा युग के समस्त बन्धन और एवय आज उस अपने जग प्रपंगा में सरन साध्य सिगारि लिए । दान के पाम सरकर उमने कहा— पूर्णिमा ! नारी का रमणी रूप ही उमका शक्तिरूप है । यौवन और सौन्दर्य ही उमारी वास्तविक सम्पत्ति है । यदि ममार के बन्धन और एवय का शरीर में भाग चाहती है तो अपना शरीर भी का मुर्ति बन सग । यौवन और सौन्दर्य से भिन्न परिस्थिति ही नारा की दागता है । रमणी से भिन्न नारी ही दास है उमसे भिन्न वह सिर्फ शक्ति है ।

दोर दर कहने-बन उमने अपनी बन्नी को मुक्त करवाना को अपने कथा पर उम तरह सहारा लिया त्रिगुण कुछ काता सते उम उराजा पर प्रा शिरी और कुछ न उमकी मुग्धावृत्ति का पर निश । वृद्ध भी उमने ही

को देख रही थी। इस समय उसकी आभा चतुर्शी के उस शरत्चंद्र की सी थी जो काले बादला से घिरे आकाश प्राणम अपने सौंदर्य की भांकी भर दिखाने आ प्रविष्ट हुआ हो।

वेणी के मुक्त हो जाने पर जब सवप्रथम उसका ध्यान अपने बालों की ओर गया। उसने देखा कि वे आकषक रूप से लम्बे, काले और चिकन थे। बाह्य प्रसाधनों का अभाव रहत हुए भी उनमें अपनी प्राकृतिक चमक व चिकनापन मौजूद था। इनके यथावत् रहते उसे किसी भी सुकेशी से ईर्ष्या करने की आवश्यकता नहीं थी। हथेली में लेकर उसने उन्हें एक बार चूम लिया।—उसने अपनी वेणी बाध ली। लम्बी गदन पर गोल सुन्दर चेहरा उभर-सा आया। उन्नत मस्तक था। पतली भौए कमानी का बाकापन लिए हुए थी। पलकों के राए लम्बे, खड़े और खुले हुए सुशोभित थे।—बालों में चमक थी। उनकी विशालता में हल्की नौलिमा प्रमुख रूप से भाव रही थी। सजीव काली पुतलिया में नसगिक मद छलक रहा था। उसने क्षण एक के लिए अपनी आंखों में देखा और मुस्करा दिया।

अब उसका ध्यान नासिका और होठों की ओर गया। वे भी उसके अनुरूप ही अपनी विनयता लिए हुए थे। प्रकृति ने उसकी नासिका व अग्र भाग और होठों की कोरनी में विशेष रूप से अपनी सौंदर्य विशेषता का परिचय दिया था। उसके लालिमा मुक्त कला पूण होठ अपनी मुस्कराहट में एक बार और खुल पड़े और उनके नीचे द्विपी दंत-पक्ति मुक्ता जाभा की तरह सौगुन प्रभाव व साथ चमक उठी।

अपनी आंखों से अपने को अथपूण दृष्टि से देखते हुए उसने कहा—  
पूणिमा ! विश्वास कर, चित्रकार अशाक अमत्य नहीं कहता था कि तुम्हारे रहते अपनी कला के लिए उसे अब किसी प्रतिमा की आवश्यकता नहीं है। तुम्हारे अग प्रत्यग में उसके लिए कला है।

इतना कह वह कमरे के बीच में आ गई और उसने देखा कि उसके समस्त दारों की घबलिमा में कान्ति प्रतिभण नूतन विकास पा रही है। उसने कुछ एक क्षण तो पुन अपने विभिन्न अंगा को सहलाया उभराया रणा किया और फिर शीशे में अपनी हथेली के अग्र भाग का चुम्बन करने हुए वह पलंग पर लेट गई।

उमन भविष्य देता । उसका जीवन एक नए पथ पर अग्रसर होने वाला था । वह रामभती थी कि बात एव ही है, सिर्फ परिस्थितियां भिन्न भिन्न हैं । चित्रकार की प्रतिभा की जीवन भावी इस मजिल पर उसके लिए एक अतीत की वस्तु हो गई । नई परिस्थिति में उसने आगा देली आकषण देता अनुभव किया । उसके मस्तिष्क पट पर भविष्य के मजीव चित्र आने लगे । रात्रि बहुत धीत चुकी थी मगर उसकी विचार धारा का वंग यथावत चालू था । उसने एक-दो बार यह अनुभव भी किया कि उसकी आखे पलंग पर सटे रहत बन्द हो गई थी । फिर भी अपन मस्तिष्क पर चित्रित घटनाओं की सजीवता में उसे कोई अन्तर मानूम नहीं किया ।

शान्त वह अपनी विचार धारा में बह गई । अब उसने जो भी देखा उसमें स्थान और काल का अधिक महत्त्व नहीं था । दृश्य सजीव अवश्य थे पर साथ ही बहुत अधिक परिवर्तन शील भी थे । जीवन की उस आने वाली कहाना में उसने देखा कि उसका आवागम अब एक सुंदर सजे हुए बगले में है । मुख्य द्वार पर प्रहरी खड़े हैं । बगले के चारों ओर सुंदर बगीचा है जिसमें रंग विरंग सुगंधमय फूल तिल रहे हैं । विशाल प्राणियों में गम फवारों ने बाग की सुंदरता को और भी आकषक बना दिया है । अनेकों जगह ऐसे छोटे भाटे फूल पत्तों से छाये सघन कुज हैं जिनके नीचे बैठकर मानव अपने अज्ञात मन को शांति और गान्त मन को सुख देने की आशा कर सकता है । इन कुजा में सजा पथरीयिया बगीचे के अंग भागा में जाती हैं वे स्वच्छ सुंदर और सुवासित हैं । जिधर भी वह इन पथरीयियों पर निकली है दास दासिया उसके सम्मान में उठकर क्षण एक के लिए अपन हाथ का काम छोड़कर उसके जागे नतमस्तक हो जाते हैं । जिससे वह बोल लेती है वह अपने को धन्य समझती है । जिसके सामने वह मुस्करा देती है वह प्रसन्नता से फूला नहीं समाता ।

अब उम कहा पदल आना-जाना नहीं पडता । हर समय वह अपने को सुंदर बग्गा और बहुभूल्य जाभूषणा से सजे हुए पाली है । उसकी नई कीमती माटर के नम्बर लाग पहचानन लगे हैं । उसके हान की आवाज सुन मन्त्र प्रहरी उसके प्रवेश के लिए द्वार खोल देते हैं । अब वहीं भी उसे इतला करा कर अन्दर जाना नहा पडता । यदि वही वह प्रवेश पाने के लिए सदेश

मेजती है तो आना देने वाला स्वयं हाथ बांधे मामन जा गड़ा होता है। जहाँ भी वह पहुँचती है उस महगूम होता है कि लोगो की आँखें सिर्फ उमरी ही देखती है लोग उमरी की बायीं मुनना चाहते है और जा भी बान होती है उमरी के सम्बन्ध मे हानी है। जिधर स भा वह निकलती है अपनी ही प्रणाम र नारे उमके बाना म पडते हैं। जो भी उमक सम्पक म आता है अपने का गौरवावितन सम्मना है। जो उमक निरट सम्पक म है उनमे लाग ईर्ष्या बरत हैं और व स्वयं अपने भाग्य पर फूने नहीं ममात। मष्टि म अपनी उपस्थिति म अपने ऐश्वर्य और आधिपत्य के अलावा और कुछ भी उम नजर नहीं आता। तस्त्र मुमज्जित प्रहरी तक भी उसकी पहुँच पर ननमस्तक हा मूनि बन जाते हैं और सबत्र सबका स्वागत-अभिवादन, स्वीकार करती हुई स्वेच्छा से ससार मे वह इधर उधर विचरण करती है।

जो मुविधाए, सम्मान, स्वतंत्रता प्रभुता उसक लिए बाहर हैं वे ही बरिफ उमने चढकर उसके लिए अपने घर पर भी मौजूद हैं। उमकी माटर के अपने घर के 'पोच' म पहुँचने से पहल ही सबक उसका द्वार खालन क लिए हाजिर खडा मिलता है। ज्या ही माटर म निकल पारमी गलीचा म सजी अपने बगले की पेडिया पर पाव रखती चलता है उसके सामने के द्वार खुलते रहते हैं। उमके घर म, बगीचे म कोई चाज ऐसी नहीं जिसे देखने मे आत्मा का अस्वि हा। उसके प्रवेश करते ही उमके घर का प्रवेश द्वार बन्द हो जाता है। सामने, दायें बायें तीन गलियारे ह। सामने गलियारे स बगले क मुख्य बडे कमरे को प्रवेश है। बायीं आर के गलियारे को पार करके मोटिया है जो उमके गयन कक्षा की आर जाती है। दायीं आर कमरे अति धिया के लिए हैं। उसके शयन कक्ष की साढिया की रक्षा हेतु एक विशाल काय अलसेमियन कुत्ता बधा खडा है जा उमकी अनुपस्थित मे किसी का भी उन पर पाव नहीं रखने देता। रात्रि म जब वह झुला रहता है किसी की गक्ति नहीं कि शयन कक्ष की ओर मुह करे। इन तीना गलियारो की दीवारें पक्किबद्ध कलापूण चित्रो स मुमज्जित है। इनके पथो के हर उपयुक्त माड पर सुन्दर गीणे लगे हैं जिनम आग-तुक अपनी आभा को, अपने व्यक्तित्व को, स्वयं अपनी आँखो दख मके। फग पर बिछे गलीचो दीवारो, तस्वीरो परदो छना व रोशनी आदि अय सजावट म यवदूत वस्तुओं

रंगों में एक रंगता है। भावार्थ भावृत्ति और रंगों की वाग्मयिक अनुभूतता में मर्त्य के ममत्त्व का वाग्मय म कर्तव्यता का प्रतिपादन कर दिया है। अपनी बर्बाद गति में जब पूर्णिमा दिग्गो भी मग्न पर विचरता करता है तो मान्युस हाता है कि अमर-जीवना कमा थी स्वयं अपने ममत्त्व मोक्ष्य का गाय भवार्थित हुई है। अपना पर म पदुपे ही उग अनुभव होता है कि जहाँ भी यह गड़ी हाती है बटनी है गाती है उग स्पन की शाभा नौगुना बड़ जाती है। गाय ही अपने पर न प्रत्यक्ष स्वयं पर वह अपनी सोक्ष्य-श्री का प्रतिक्षण विकसित हाता हुन पाती है।

और उमन देगा कि एक दिन रात्रि के मध्य प्रहर में वह बाहर स आई है। उमकी मुख्य भविष्या ने उमे मूचना दी कि अनका व्यक्ति उसम मितन का लिए आए थे और अभी अभी उसकी प्रतीक्षा करन करने बापिम लौट हैं। पूर्णिमा ने क्षण एक के लिए मोचा और फिर उम मान का आयेन दे वह अपनी पलग पर लेट गई। एक अय शमी ने उमके हाथ का धला लेकर व गल का शाल उतारकर यथा स्थान रग लिया और बह भी आयेन पा उपरी उपस्थिति से चली गई थी। थोड़ी ही देर में पूर्णिमा न दगा कि उमके कमर में उमकी पलग से सम्मानपूण दूरी पर एक पुरय गड़ा है। पूर्णिमा दम समय कुछ गात-सी थी। लक्ष्मदार मसमली क्षया पर उमका आवाम था। कोमल रेशमी तकिये उमक अगो को यत्र-तत्र आश्रय दे रहे थे। हल्के नीले रंग की रोगनी का कारण मारा कमरा रात्रि की गभीरता का वातावरण लिए हुए था। उमने पुरय को देखा और पहचान लिया। पूछा—

अच्छे हा कुमार ?

बहुत अच्छा ! विनापकर तुम्ह इन स्थिति में पाकर ! तुम ?

मैं भी अच्छी हूँ ।'

मालूम होता है समय बदल गया है।

समय परिवर्तनशील है कुमार।

इतने बड़े स्थान में तुम जपन को अकेली अनुभव नहीं करती पूर्णिमा।

मैं अकेली बहूँ हूँ कुमार ! सारा समार तो मरे साथ है।

तुम हसती हो तो तुम्हारा साथ कौन देता है ?'

“सारा ससार । यहा की दीवारें तक भी ।  
 ‘और रोती हो तो आसू कौन पाछता है, पूर्णिमा ?’  
 “कुमार ।”

पूर्णिमा ! अफमोस है कि प्रभुत्व पाकर तुम जीवन के महामय को  
 फूल गई । तुम्हारा जीवन अप्राकृतिक है । नारी या पुंस्व कोई भी हो, जीवन  
 की मजिल साथी के साथ ही सुख से कटती है । मैं तुम्हारी आम पर था । आज  
 वह आशा भी टूट गई जब तुम्हारे मुह से अपने काना यह सुना कि हँमी म  
 ससार तुम्हारे साथ है । आज दीवारों के इट पत्थर तुम्हारे साथी हा गय  
 और इन्मान का साथ छूट गया ।

“कुमार ।

“तुम्हारा क्षेत्र प्रभुत्व नहीं है पूर्णिमा । तुम ही हँसो और तुम ही देखा  
 तुम ही आसू बहाओ और तुम ही पोछो नारी के लिए यह परिस्थिति  
 अत्यन्त भयंकर और दुःखपण है । तुम पूजा की पान हो । उसके बदले म  
 तुमन प्रभुत्व क्यों अपना लिया, पूर्णिमा ?”

कुमार ।

‘तुम्हे तो ससार अपना साथी मिल गया, पूर्णिमा, परन्तु तुम्ह अपना  
 कहने वाला कुमार आज भी अकेला है । तुम सुखी हो सुखी रहो खैर, मैं  
 चला ।”

इतना कह आगन्तुक चल पडा । पूर्णिमा के मुह स माना एक चील-  
 सी निकल गई । उमने भयभीत हो पुकारा—‘कुमार । कुमार ।’

मगर, वह रुका नहीं । वह उमके पीछे दौड़ी । वह पडिया उतर गया  
 था । वह भी कुमार, ‘कुमार पुकारती हुई उमके पीछे पडिया उतर गइ ।  
 उमने देखा कि सारा बगला सूना पडा ह । उसन मदद के लिए पुकारा ।  
 मगर किसी ने उसकी पुकार सुनी नहीं । वह और भी तज भागी । और  
 भी जोर से उमने पुकारा—“कुमार ।”

इस बार कुमार न पुकार सुन ली । वह टूर गया । उमने पीछे  
 देखा । वह दौड़ी हुई आई और उमस लिपट गई । उसकी आखा म भय था ।  
 मास फूल रही थी । शरीर काप रहा था । उमने उस जोर भी मजबूती म  
 पकड लिया । फिर एक भयानुर व्यक्ति की आवा स दतकर पुकारा—



'कुमार !

कुमार की बाह खुल गई। वह बोला — तुम आ गई पूर्णिमा। साथ ही अपने दोनो हाथों से वह उसकी पीठ का सहलाने लगा। क्षण एक विरम कर उसने कहा — मेरे लिए इतना ही काफी है पूर्णिमा।

कुछ क्षण वे दोनों एक-दूसरे के बाहुपाशों में बंधे रहे। दोनों की आंखें एक-दूसरे को प्यार भरी नज़िरे से देखती रहीं। पूर्णिमा बोली —

जबेल में मुझे भय लगता है कुमार ! तुम मेरे साथ रहो।

गरीर प्रतिक्षण साथ नहीं रहने, पूर्णिमा। प्रतिक्षण साथ रहने के लिए माथी की स्मृति है। किसी इच्छा अथवा काय के सम्पादित होने पर ही सुख की अनुभूति होती है। सम्पादित होने का जय हुआ कि उस इच्छा अथवा काय की स्मृति भर गेप है। स्मृति ही सुख है पूर्णिमा। वही मानव की सुख संपत्ति है। एक कहा भी रहे अरुण भिन्न क्षणा का याद कर किसी भी अवस्था में सुखी हो सक्ता है।

शमा करो कुमार। यह अनुभूति प्राप्त करने में मैं असमर्थ हू।

भूतनी हो पूर्णिमा। विश्व में अनुभवता है। इसकी विभिन्नता में एक रहता है। वास्तविकता में खिले फूल का सौंदर्य और गौरव किसी विशेष भ्रम के लिए ही तो नहीं होने और उसकी खूबिया भी किसी एक व्यक्ति के लाभ अथवा भोग के लिए रचित नहीं होने चाहिए। मानव का समारंभ साथ चलना है। जीवन मजिल में साथ चलने वाले सभी माथी हैं। मजिल पर चलने वालों को चाहिए कि जहां भी जिस किसी के साथ जाराम का अवसर मिले उस ठुकराए नहीं। तुम्हें अनेक पात्रों में तुम्हारे पास आया था। यदि और भी कोई तुम्हारे साथ जाना तो मुझे अपना सुख प्राप्त करने में कोई आपत्ति नहीं पानी। यही सुख का रहस्य है पूर्णिमा। इसमें भिन्न परिस्थितिया ही मानव के सुख का कारण हैं। जीवन में सुख के अवसरों का जाराम के क्षणा का प्राप्त होने पर स्वतंत्रता से उपभोग करना चाहिए।

कुमार की बात सुन पूर्णिमा ने उस और भी अधिर मजदूरी में पड़ लिया। समय उस ऊपर चला गया था। तार मुस्करा रहे थे। वास्तविकता का तार और उनपर मिल गए उनका प्रणय बंधन का माथी के सुख की तरफ निहार रहे थे। — पूर्णिमा की मंथन छतकनी

आखें ऊपर उठा। अतप्त प्यान से उमन कुमार की आवा म देगा। दाना के अघरा पर मुस्कराहट खेल गई। वह उठा। वह भुका। प्रणय चुम्बन की प्रगान्ता म दोना कुछ क्षण के लिए एक हो गए। शान्त निगाकी गुभ्र चान्नी म पूर्णिमा की अदों मीलित मदभरी आखें कुमार के लिए एक बहुत बडा प्रलाभन थी। अघर मुक्न हुए पर इच्छा नही मिटी। आनिगन निविन हाने के बदले जीर भी अधिक प्रगाढ हो चला। इस समय पूर्णिमा की जाखें किमी लठि की अनुभूति म बद थी। कुमार के मुह से पूर्णिमा गद का मबाधन सुन ध एक बार खुली भी मगर फिर बद हो गई। कुमार न लम्बा कि उमका आवा म योवन की मात्कता छनक रही है। उमकी गरम स्वास तीव्र हो चली। अघर पुन वाप उठे। कपोलो की धवलिका मे अग्निमा उतर जाई। उसने अपन अघर उमक कपाला पर लगा दिय।

दमके थाने दर बाद व गाना लना-कुजा म होते हुए एक उपवन म निवल बाण जहा एक विनाल मुत्तर सरोवर था। गीतल सुरभित पवन लहगों क भकारा स टकरानी अनन समस्त योवन के माथ खेल रही थी। व दाना एक दूमरेका हाथ हथैली घाम उस सगरर कंठ पर आ गण। उहाने देखा कि मरावर म कमन खिले थे। कमलिनी के विस्तत पलनवा पर जल बिटु गाभायमान थे जिनका चमक चान्नी के इस गुभ्र प्रकाश मे दिखरा मुपता आभा का भी मोदय म नलनारती थी। पवन की गति म तरगित सरोवर की जनराणि म प्रतिपन चन्द्र किरणा का नाच हो रहा था। कुमार और पूर्णिमा मुत्ति हो प्रकृति क यस स्वच्छद मोदय को देखन लग। कुछ एन क्षणा क बाद पूर्णिमा न वृछा—

दमन सुदर दश्य की भी कल्पना हो सकती है कुमार ?

हा पूर्णिमा। बही सोच रहा हू।

प्रकृति की इस गाभा म तुम्हे अभाव मालूम हाता है ?”

‘हा पूर्णिमा। सोचना हू सौन्दर्य की इस सष्टि म मानव सम्मिलित क्या नहीं है।

हम है ता। मगर जमे कुमार न सुना नहीं। वह बोला—

‘मेरी महादता करो, पूर्णिमा। इसम सुखकर घडी, शायद जावन म फिर न आए। वृषा करो, पूर्णिमा।

वाले में कहना फौरन भेज दे या तुम ही ले जाओ। जाओ जल्दा करो वगम साहबा का बहुत जल्दी है।

राधा सुनकर कमर के बाहर चली गई। बाहर पहुँचकर उसके पात्र मँद पड़ गया। पूर्णिमा के दखन पर राधा ने उस सजेत में बाहर बुलाया। दो चार कदम और दूर ले जाकर उहाँन कुछ बान की। पूर्णिमा के वापिस लौटन पर अस्मत ने उसे फिर कहा—

तुम्हारे ये तक्लुफ मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं।

मुझे तो पीनी है। अभी तुम्हारे सामन ही उठी हू। और यह तो मुझ भा समझना ही चाहिए कि जो बड़ी बड़ी होटल में बड़ी बड़ी दावतें खायें उमे ऐसी बसी साधारण हाटल का उबना पानी कस पसन्द जायगा।

तेरे मेहमान है चाहे जस इज्जत विगाड। पर बान यह है कि जब भी तुम्हारे पास आती हू जिन काम के लिए जानी हू उमे भूल जाती हू। तेरी कसम तेरे मे कुछ बात ही गमी है। अच्छा एक बान बता। उम सँठ से मिलना चाहता है ?

नहीं।

अभी अभी ता उसे याद कर रही था।

वह तो तुम्हें देखकर।

सच बता।

मैं भूठ नहीं कहती।

एक बात बताऊ ?

जरूर।

उसने तुम्हें दल निया है।

सा ?

उमकी तुम्हारे में निश्चस्पी है।

फिर ?

वह तेरे में मिलना चाहता था।

तुम्हारा भापन ?

गया हा समझ सा।

और तुमन हा भगता ?

“भरनी पडी ।’

“रहने दे । यह सब किमी जोर का मिशाना जा तुम्हें जानता न हा । असली बात क्या है ? सुबह मुबह ही इस तरह बन ठनकर निराने का क्या कारण है ?’ सायद अस्मत यह जानती थी कि पूर्णिमा उमका हर बात का विश्वास नहीं करती है और इमीलिण उम पूर्णिमा की बात पर न शोध आया और न आश्चय ही । उमने सुनकर मिफ मुस्करा भर दिया । फिर बोली—

‘हा भरन कि इन्कार नहीं करेगी ।

सुनन म पहिले ही ?

‘और नहीं तो क्या ।

‘रहने दे ।’

अच्छा एक बात बता । आज कल आर परमा तीन दिन कही लगी हुई तो रही है ?’

लगन का क्या ! यह तो काम मिलने पर है ।

यदि काम लगादू तो ?

‘और बह पसन्द न हा फिर ?’

‘पसन्द आगमा फिर ता मजूर है ?’

सोचगी ।’

‘फिर भी साचेगी ? ,

और नहो ता क्या ।

तू हा क्या नहीं भगती है ?’

‘नू बताती क्या नहीं है ?’

‘अच्छा सुन । मगर इनने म हॉटल के नौकर के माय राधा चाय लेकर आ गई । उनके मामान रखकर बाहर जाते ही अस्मत त्रेगम कहने लगी— आज उम मेठ बाबू क कुछ मेहमान आने वाले हैं ।

अच्छा ।’

‘क तीन-चार दिन यहा ठहरेंगे । मुना है वे सब बडी रईम तवियत क हैं ।

‘ फिर तो तेरी मौज बन गई ।

‘सनेगी भी ?

अच्छा आगे कह ।’

उनके उतरने से पहले ही यह परमाइश है कि अबेल वे एक दिन म  
नही रहग ।

समझ गई ।

मेठ बाबू न कहा कि आज ही दो तीन लडकियों को ठीक करनी ।’

कितना को कर जाई ?

तुम्हारा नम्बर दूसरा है ।

और पहला ?

वह एक एकटस हैं ।

और तीसरा ?

वह भी तरी ही पमद की होगी ।

मिलेगा क्या ?’

मिलन की बात छाड ।

असनी बात को छोड दू ? और जिलचस्पी ही क्या है ?

वह सब में ठीक कर दूगा ।

पहले स ही ठीक क्यों नहीं कर लती ?

बोन ! क्या लगी ?

त बना ! तन क्या माचा है ?

बता द ।

जबूर ।

पचास राय । गाना घूमना पीना दखना वह सब अलग ।’

बम ?

बाका अपनी अपनी होगियारा है ।

मर पाम तो पूरे बपडे भा नहा है ।

अब यद्दान मन बना । गारा बात बता नी है ।

\*भूट नहीं कही ?

एदवाग ल ल ।

उमन क्या हागा ?

‘कुछ खरीद ले। फिर उही मे स किमी को किमी बड़ी कम्पनी मे ले जाना और चाहे जो कुछ खरीद लाना। सच, मुझे भी बहुत-कुछ खरीदना है। मुना है, आम वाले बड़े रईस हैं।

‘तू भी नामा के चक्कर म आ गई?’

‘तारों का चक्कर नहीं। यह तो इतला है।’

‘और उम पर विश्वास कर लिया?’

विश्वास न करने की कोई बजह नहीं है। बोल जल्दी बोल। क्या दे दू? और माथ ही चाय की प्यानी नीचे रख उमन अपना हाथ का थला खाल लिया। वाली—“हा ता कहू कितन द दू?”

‘मच बताऊ?’

बोल नी।

‘मुझे पुरमत नहीं है।,

पूणिमा। ” माथ ही जस्मत के चेहरे पर आश्चय का रेखाण खिच

आइ। पूणिमा बोली—

‘मच कहती हू जस्मत बगम। मुझे अभी बिलकुल फुगसत नहीं है। त विश्वास नहीं करेगी। बल ही नीकरा की बात हुई है। देखनी हू किम्मत कहा तन माथ देती है।’

फिर इनती देर मुझे खराब क्यों किया?’

“गैरा क साथ बठने से इन्मान खराब होता है। मैं तो तुम्हारी अपनी हू।

तरी वान का विश्वास नहीं हाता। अच्छा, एक बार और पूछनी हू। शाल, क्या कहती है?’

‘तरी कसम। बिलकुल समय नहा है।’

‘फिर मेरा कसूर न निकानना।’

‘और अधिक शर्मिदा न कर। तरी कसम। भूठ नहीं कहूगी।’

‘अच्छा और किसी को बता।’

‘तू किसे नहीं जानती?’

‘फिर भी।’

बाबू किशोरीलाल के प्रस्ताव की स्वीकृति व उनसे स्वीकृति-पत्र पर हस्ताक्षर करने के दूगरे ही तिन पूणिमा के हाथ में एक हजार रुपये की रकम आ गई। साथ ही मनेजर महोदय उठते अपने साथ ल जाकर जनेरा गाडियां, ताल व बहुत मो अय-जार-पक अनावश्यक वस्तुएं दिलवा लाए। पूणिमा का उद्दिष्ट पहन ही बता दिया था कि उसके निवास के लिए उद्दिष्ट तूह तट के पक्ष में पूण प्रबंध कर दिया है। राधा ने पूणिमा के साथ रहना और नौकरी करना स्वीकार कर लिया था। उससे लिए अब गृह आगन था कि कमरे का सारा सामान ठीक कर सबको सबका हिसाब चुका बहुत क्षीघ्र कम्पनी की कार में नये निवास-स्थान पर जाने के लिए तयार हो जाय। उससे साथ में सहायता देने के लिए मनेजर महोदय अपने साथ ही आदमी ल आयथ जो उद्दिष्ट पूणिमा के साथ बाहर जाने से पहले राधा व पास ही छोड दिये। पूणिमा मनेजर महोदय के साथ अपने नये आवास पर पहुँची उगवे पहले ही उसने राधा को वहा अपनी हाजिरी में मौजूद पाया।

मनेजर महोदय की सूझ व प्रबंध में कोई कसर नहीं रह सकती थी। वार से उत्तरकर बगल में प्रवेश करने के साथ ही 'डाइवर व एक अय-यक्ति ने साथ का सामान राधा की सुपुदगी में दे दिया। राधा को विभिन्न बण्डल खालने का आदेश दे के पूणिमा का मकान और उसकी व्यवस्था दिखाने लगे। सोने के लिए पलंग, बठने के लिए सोफे पढ़ने के लिए कुर्सी मेज यथास्थान पर्याप्त मात्रा में सुगोभित थे। वस्त्रादि रखने के लिए एक कोने में माफ सुधरी बड़ी बड़ी आलमारिया थी और उसी जगह एक और नीनतम प्रसाधना से युक्त एक शृंगार-दशनी रखी थी। पूणिमा ने अपने निवास में रहने साने खाने, उठने, बठने पढ़ने मिलने, स्नान करने आदि के लिए अलग अलग पूण व्यवस्था पाई। मेहमानों और नौकरो

आदि के लिए भी इस मकान में पक्क रूपा से समुचित प्रबंध था। तान, सोने और मिलन के कमरों के फश गलीचा से ढके थे। जिन कमरों में गलीचे नहीं थे उनमें सुंदर मोटी दरिया उनके आगना के अनुकूल बिट्टी हुई थी। बाबू किशारीलाल अपनी व्यवस्था दिग्घात दिग्घाते पूर्णिमा का बरामदे में ले गए। यहाँ बाप्ट के एक सुंदर आधार पर एक टेलीफोन रखा था। उन्होंने नम्बर मिलाए और उठाकर बात करने लगे। पूर्णिमा सुना-मम भने लगी। मनेजर महादय के चेहरे पर हसी थी और वे पूर्णिमा से दृष्टि मिलाए ही अथ व्यक्ति से बात कर रहे थे। पूर्णिमा ने सुना—

“हला कौन साहब हैं ?”

“अच्छा ! आप हैं। मुबारिक हा। जी, हा ! नय मकान से ही बोल रहा हू। आप भी यहीं हैं। और कहा ? यही—मरी बगल में। बात करागे ? मुझे मुबारिक हो ? बहुत खूब ! गुक्रिया। आ भी रहे हो या नहीं ? हम इतजार कर रहे हैं। मैं अपनी ओर में ही नहीं कहता। मकान मालिका की भी श्राहिण है। गुक्रिया जदा करू ? कर दिया। हा, हा। उन्होंने मान भी लिया। अब तारीफ से आदये। अधिक देरी न हो।”

मनेजर महादय ने टेलीफोन यथास्थान रख दिया। पूर्णिमा बातों का पूणरूप से समझ गई था फिर भी व्यक्ति की परिचय प्राप्ति के लिए प्रश्न किया—‘कौन साहब थे ?’

‘हमार हृदयंगजी।’

आ रहे हैं ता ?

अवश्य। आज हमने तय किया था कि यही चाय पीयेंगे। उन्हें विदवास नहीं हो रहा था कि इतनी जल्दी मैं यह सब प्रबंध कर दूंगा।

‘मैं तो सोच ही नहीं सकती थी। आपका बड़ा कष्ट हुआ।’

‘कष्ट बिनकुल नहा। यही तो मेरी खुशी है।’

इतना कह पूर्णिमा की पीठ थपथपाते वे उसे लेकर भान के कमरे में पहुंच गए। एक व्यक्ति पहले से ही इनकी सेवा में यहां मौजूद था। इनके प्रवेश करते ही उसने पर्दे खींच दिए। खिड़किया पहन में ही बन्द थी।



उन पर रंगों की अनुरूपता दीवारा और फश पर बिछे कालीन से शोभा और रंग में मेल गायी थी। आगतुका के मेज के समीप पहुँचते ही सेवक ने बटन दबाकर उस पर लटकते हुए प्रकाश पुज को प्रकाशित कर दिया और बत्तिया बुझा दी। गालाकार मुनहरे प्रकाश में मेज पर बिछे मोटे रेशमी बस्त्र की धवलिमा पर सजी सुराहिया ग्लास प्लेटे प्याले चमच आदि अपने समस्त सौन्दर्य के साथ चमक उठे। सेवक मनेजर महोदय के पास आकर उनकी जाना की प्रतीक्षा में खड़ा हो गया। वे बाले—

‘हृदयेणजी अभी आ रहे हाने। उहे यहा भेजकर फौरन चाय लाना।’

आदेश समझ सेवक ने उसी क्षण कमरा छोड़ दिया और वह उपयुक्त स्थान पर इंतजार में खड़ा हो गया। मनेजर महोदय बोल—

‘यह मेरा और भरी कम्पनी की जान के खिलाफ था कि हमारी मुख्य नायिका किसी ऐसी बसी साधारण जगह में ठहरे। हम आज ही से अपनी तयारियों में जुट गए हैं। थोड़े ही समय में आप भी देखेंगी कि हम सब कहा-ने-कहा पहुँचे हैं। देश भर में तहलका मचा दशा। आज ही से हमारा प्रकाशन कायम प्रारम्भ है। साल भर ही हुआ है कि मेरी पुरानी कम्पनी बन्द हुई थी। दुनिया समझने लगी कि किशोरी नान मर गया। कल परसा में ही उह मालूम होगा कि मैं अभी मरा नहीं जीवित हूँ। सब पूछो तो आपकी एक हा ने मुझे जीवन दिया। मरी कम्पनी बन्द होने का कारण ही वास्तव में यह था कि आप-जसी कोई चीज मुझ मिली नहीं।

‘न जाने आप मुझे कहा चढ़ाकर गिराना चाहते हैं। अभी तो मेरी जाच भी नहीं हुई।’

‘यह आप नहीं जानती। आखा ने देखा, काना न मुना, बुद्धि न परखा, हृदय ने गकर दी। इसमें अधिक और जाच क्या होगी। बर्षों का अनुभव है। इतना आशानी से धार्या नहीं खाना। आप ही बताइये धोखा देंगी?’

मनेजर महोदय को प्रदनक साथ मुस्कराने दग पूर्णिमा भी मुस्करा उठी। मनेजर महोदय बोले—

‘तमान की नज़र का समझने हैं। रात भर में ही चाह जिसका अडि

य कलाकार बनान की कला का रहस्य हम मानूम है। जिस पर हमने  
 रर रग दी, जिसे हमने स्पग कर दिया उसे ही दिन निकलते दुनिया  
 तारा कहने लगी। दंग के कितने ही तारे तारिकाआ पर हमारा एहसान  
 । इस बार की ता वात ही छीड़िय। सौभाग्य से सब ठीक चल रहा है।  
 प मिल गई। हृदयशजी मिल गए। मैं हू ही। क्या सुंदर सयोग मिला  
 । क्या खूब लिखता है हृदयस भी। क्या कहने 'वाह'।

आगव अज है।

'व दगो जज ! तंगरीफ लाइय। बडी उन्न। मचमुच आप ही की  
 लचीन हा रही थी। क्या लेवीजी ?'

'जी।'

'आप इह अभी नहीं जानती। पावो की आहट सुना कि बस ले लिया  
 कसी के साथ मरा भी नाम। क्या, गुरुजी।

'ऐसा ही समझ लो, भाई। मजबूरी है। खुतामद करत हैं, कभी किसी  
 री, कभी किसी की।'

'बहुत खूब।' साथ ही कथे का शाल उतार वह कुर्सी पर बैठ  
 गया।

पीछे-पीछे आना प्राप्त के लिए सेवक ने कमरे में प्रवेश किया। मज  
 से सम्मान पूण दूरी पर द्वार के पास हाथ बाधे उस खडा दख मनेजर महो-  
 दय बाले—

"अब देरी किस बात की। जल्दी स लाजा।

दग्ते दस्तते कुछ ही क्षणा म चाय का पानी आ गया। स्वच्छ जाली-  
 दार चम्र मेज पर पडा खाद्य वस्तुओ में पूण स्यालिकाआ पर से उतार-  
 कर ममेट लिय गए। हृदयग को चाय बनात दख मनजर महोदय  
 बोले—

'यह ता स्त्रिया का काय ह। उह ही पूरा करने दा।'

"नाश्य मैं बना दती हू। साथ ही पूणिमा ने मुस्कराते हुए चाय क  
 बतन की ओर हाथ बढ़ा दिय।

इसने स्वाद म पच थोडे ही आता है।

जापने भी मजब कर डाता हृदयगजी। आपका मालूम होना चाहिए

कि इस तीन व्यक्तिवाक्य समाज में भी ऐसे प्राणी बंठ हैं जो प्याली प्रथम चुम्बन से ही यह बताने का दावा रखते हैं कि पय पुरुष द्वारा प्रस्तुत है या स्त्री द्वारा ?

“और बुद्ध ?”

“यदि वाग्विद बरूता यह भी बता सकता है कि पय प्रस्तुत करने वाली यौवना है या प्रौढा मुदरी है या कोई ऐसी बंसी ?”

मनेजर महोदय की बात सुनकर पूर्णिमा की मुस्कराहट हलकी हस म परिणत हो गई। उसके मुह से शब्द निकल पड़े—

‘कमाल की बात करत हैं।

‘क्या कहने बाह !’

‘मानिए भी ! यह सब रम विज्ञान की पुस्तक में लिखा हुआ नहीं मिलता। स्वादन श्रिया के वर्षों के अभ्यास से यह चमत्कार हासिल होता है।”

अब तक पय प्रस्तुत हो चुका था। पूर्णिमा के बड़त हुए हाथ स चाय की प्याली पकड़ते हुए मनेजर महोदय बोले—

‘क्या कहने इस चाय के। जनाब परमा गए कि स्वाद में फक चाय ही जाता है। मुझे तो सचमुच हमी जा गई। मालूम होता है श्रीमान ने जब तक एक ही स्वाद का अनुभव किया है। जितने हाथा पीजिय उतने ही स्वाद मिलेंगे। आज के इस स्वाद व रग को तो वर्षों बाद भी बताने का दावा कर सकता है।

साय ही प्याली को होठा से स्पग करके वे बान—

क्या कहने ! यह स्वाद तो जीवन में अब तक कभी आया ही नहा।

धयवाद ! साय ही एक क्षण के लिए किशारालाल व पूर्णिमा की आंखें परस्पर मिल गई। दोनों के होठा पर हल्की हसी थी। पूर्णिमा सामने पड़ी स्थालिका में स नमकीन बादाम व पिन्त उठाकर चबान लगी। फिर वे दोनों हृदयगत की जोर दबने लगे। क्षणिक गति का भग करत हुए किशारालाल ने पूछा— जनाब चुप कैसे हैं ? हृदयगत में पहल ही पूर्णिमा ने कह दिया— आपकी ता निगन की आदत है।

और मुझे ?

“अधिक धोवन की।

“और श्रीमतीजी को ?”

“सुनने की।” सुनकर सभी हसन लगे। स्थालिकाआ पर सजा सामान शनै शनै समाप्त होने लगा। प्याले खाली होने पर बार-बार भर जाने लगे। रिक्त पय-पात्रा को पूण करने का काय पूर्णिमा का था। मनजर महोदय विभिन्न स्थालिकाआ को बार बार उठा उठाकर पहल पूर्णिमा व फिर हृदयंग की मनकारें करन लग। रमणी की उपस्थिति—बल्कि उसके यौवन व सौन्दर्य से प्रेरित मौजय व सवाद—स साग स्थानीय वातावरण सजीव हो उठा था। हृदयंग न सोचा—मैनेजर महोदय अपने मौजय प्रदर्शन से पूर्णिमा को प्रभावित कर अपने भविष्य को सुरक्षित करना चाहता पर साथ ही उह यह भी महसूस हुआ कि उनका व्यवहार व बातचीत का कुशल सजीवता एक दिन के अभ्यास की चीज नहीं थी। हृदयंग न हाथ की प्याली को अलग रख ज्या ही अपनी पान की डिबिया पूर्णिमा के जागे वटाइ उमके पहल ही मनजर महोदय का सिगरेट का डिब्बा उमके सामने पेश हो चुका था। पूर्णिमा न दाना क लिए ही हाथ जा दिव।

“बस ?”

मेहरवानी। हृदयंग का हाथ वापिस खिच गया। मनजर महोदय तुरत वापिस हटन वालो भ नहीं थे। उ होंने एक सिगरेट डिब्बे म म निकाल कर अपने हाथ से पूर्णिमा के जागे कर दिया और बोले—

कबूल फरमाइय।

‘मैं जज किया न।’

“अपने जादमिया को इस तरह इन्कार नहीं किया करन। लीजिये।

‘मेहरवानी।’

‘मेहरवानी है सीलिय तो रहे हैं।

आप मानते नहा, मैं पीती नहीं हू।’

“कभी नहीं ?”

‘फिर हमन कौन-सा गुनाह किया है। जीर साथ हा दूसरे हाथ से उहोंने फौरन अपना सिगरेट लाइटर भी जला लिया। पूर्णिमा ने सिगरेट पकड ली और उन सुलगा लिया।—मैनेजर महोदय भी पीन लगे।—क्षण



विचसना

लोगा !”

जी।

मेरे मागिन। जादाबअज ! स्त्र नवागनुका किसी नारी का था।  
ह बिना सवाच सबके जाने बड आई।

जाय मम्म !

मुबारिक हा जनाव को।

गुनिया अब तब जागनुका की दृष्टि पूर्णिमा पर पड चुकी थी।  
पाव से भर तब एक दृष्टिपात करत हुए उमने पूर्णिमा से पूछा—

आपके सहार बठन की इजाजत ले सकती हू ?”

‘सुनी से।’ पूर्णिमा एक किनारे सरक गई।

‘गुनिया। जीर साथ ही वह बठ गई। बोली—

बश्राबी के लिए माफी चाहता हू। पर यह सर हुआ कैसे ? इतन  
बडे-बडे प्राशाम बन गय और हम खबर तक नहीं।’

‘ऐसा बात नहीं थी मडम।

‘बान क्या है, वह तो अब मेरी सम्भ्रम जा रही है। ”

मडम ! गुस्ताखी माफ हो तो अपनी अधूरी जज को पहले पूरा कर  
लें। हम तब बहुत पहले से आए बठे हैं। तैरी न हा जाय इसलिए बहुता  
न अब तक चाय भी नहा पी है। आपकी दास्तान लम्बी है गायद बहुत  
लम्बा। हम पहले जज करने की इजाजत द दें।’

“आप लोगका और भी कुछ कहना है ?’

‘यदि जनाव को मुनन के लिए समय हो।

‘आज की बजाय यदि कल तारीफ ला सकें।”

‘बाई आपति नहीं परन्तु यदि जनाव के आग कल भी यही परसानी  
रही तो हमारा आना एक तरह मे

‘कल तक तो हम आगिरी निश्चय पर जवदय पहुंच जाना है।  
यत य हृदय का था।

और तब तक जनाव अपना परगानिया म भी छुटकारा पा लेंगे।  
ममुगाम म से एक कह उगा—

जकर ! आप तब कब जर्र जायें। अकडा अभी ता सबका

‘अवश्य ।’

‘तई कम्पनी भ अनुभव को स्थान है या नही ?’

योग्यता को स्थान है ।’

रघाति को ?

‘यह हमारी बनाइ हुई वस्तु है ।

पुरान सम्बन्ध को ?

‘अपने लिए ।

जिसन मना किया ? कम्पनी ही तुम्हारी है । मैं खुद तुम्हारा हू ।

मैं कट्रेक्ट चाहती हू ।

यह व्यापार है । जवन आइमिया से मैं व्यापार नहीं करता ।

‘फिर साफ इ कार क्या नहीं कर देते ?’ उसने प्याला को मज पर

रख दिया ।

निणय स पहले ही ।’

मैं कब जाऊ ?

जब भी इच्छा हो ।

कल जाऊ ?

कल जाआ ।

समय ?

दफतर का समय ।

यानि ?

‘दग से पाच ।

‘तो कुछ जासा है ?

‘अवश्य ।

काम बनेगा ?

बन सक्ता है ।

गारटी नहीं ? चादनी न एक बार और अपनी घडी की ओर

दला ।

प्रश्न ही गलत है ।’

‘जाइजल किस मकान म है ?

'उठी म ।

बहा का समय ?'

जम मिल जायें ।'

मिनना मन । समय देने म आपत्ति क्या है ?'

बान म तरह कर रही हा जमे काम स समय की कीमत अधिक  
ये ।

नई कम्पनी खोलने वाले सब इसी तरह जबाब देने हैं ।' उसन फिर  
एक बार अपना घडा की ओर देला । बोली—

अभी ता मैं चलती हू । कल सुबह चाय के समय आपने स्थान पर  
हाजिर हाऊंगी । मेर साथ रजत-पट की एक तारिका भी होगी । उस  
बचारी की काम चाहिए । अच्छा, इजाजत हो ।' उसने हाथ जोड दिए ।  
पूणिमा का सन करन हुए उमने बहा—

आपको भी हमारी सिफारिश करनी है । उत्तर म पूणिमा न सिफ  
मुस्करा भर दिया । क्षण भर मे ही चादनी कमरे के बाहर हा गई ।

कमरे के बाहर उनका व्यक्ति और मुलाकात के लिए आए हुए लड़े  
थे । कुछ ता इनम भी व ही थे जो इजाजत हासिल करन के बाद भी यहा  
स हट नहीं थे । कुछ आ आकर इनम निरतर शामिल होते जाते थे ।  
मनेजर महोदय न एक एक व्यक्ति का मुलाकात के लिए अतर बुलाना  
प्रारम्भ किया । सबप्रथम जिस व्यक्ति ने प्रवेश किया वह एक सुंदर  
और मुर्ति मित-मा नवयुवक था । प्रवाग करने ही इसने एक स्मित हास्य के  
साथ उपस्थित बंद का हाथ जाडकर अभिवादन किया । मनेजर महोदय  
इम जगती म थे कि गोघ्राति-गोघ्र मुलाकात की रूम को पूरी करव अपने  
पूव निश्चिन कामक्रम मे सलग हा और इसीलिए उहोन आगतुक को  
बटन म पल ही परमाइय शब्द स अपनी बात कहन का अवसर दिया ।  
परंतु आगतुक एक काफी होशियार व सुलभा हुआ व्यक्ति मालूम होता  
था । उमके प्रवहार म उस कायकुशल व्यक्ति का सफ्त प्रावहारिकता  
स्पष्ट थी जा अपनी बात का अपने मग स कहन म दक्ष हा । क्षण भर मे  
हा उमको पना दष्टि अपने अध्ययन म उपस्थित समाज पर दौड गई ।  
साथ ही उमके मुह मे शब्द निकल पडे—“अभा जज करता हू । जनाय क



कीमती समय को किसी फिजूल बात से बर्बाद करने की चेष्टा हरगिज नहीं करूंगा। इतना कहते-कहते उसने अपनी जेब से चार पाच का निकास और हर उपस्थित व्यक्ति के हाथ में एक एक धमा किया। साय ही बोला—

यदि श्रीमान को आपत्ति न हो तो क्षण भर के लिए खाली जगह का इस्तेमाल अपने लिए भी कर लू और इतना कहते कहते उसने एक खाली कुर्सी अपने लिए खींच ली। उस पर बैठते हुए अपनी व्यवहार स्वतंत्रता का परिचय देते हुए उसने कहना पारम्भ किया—

महानुभावों के परिचय के जभाव में यदि मैं 'श्रीमान और श्रीमतीजी' के नाम से आपको सम्बोधन करू तो आप मुझे माफ करेंगे। — साथ ही अपने घमड़े के थले को किसी चीज की तलाश में बह देखने लगा। कुछ पत्र सग्रह को बाहर निकालते हुए उसने फिर कहा— एक विशिष्ट कम्पनी में एक बहुत बड़े आत्मी में उनका परिचय पूछने पर एक मज्जन से सरत नाराज हो गये थे। तब से मैं उस परिस्थिति से अपने आपको बहुत दूर रखता हू।

जब तक अपने मुतालब के कागज उसके हाथ में थे। उसने पत्र एक प्रतिलिपि उपस्थित करके हाथ में द दी। प्रत्येक पत्रने लगा। उसकी समाप्ति तक बह मौन बठा रहा।—ज्या ही उसने अनुभव किया कि सब उमकी दी हुई पठन सामग्री का पत्र चुन है बह फिर वाला—

इसमें मैंने वही लिखा है जिसके लिए मैं अपने आपको किसी वाक्य समझता हू। अपनी उन विगपताओं का इसमें उत्तर नहीं है जो श्रीमान के वाक्य में जमझुझित हो। अपना इतना परिचय देने के बाद मैं जाया करता हू कि श्रीमान का चिन्तस्वी मेरे में जम्हर होगी।—मैं उन नारे प्रश्ना का उत्तर देने में अपने आपका मौभाग्याती समझना कि श्रीमान मुझमें चिन्तस्वी लिखाकर पूछने का वृत्ता करेंगे। यदि आपत्ति न हो तो मैं उमके लिए तयार हू।—मैं चान्ता हू कि श्रीमानों में भी मरी परीक्षा प्रारम्भ हो।

बह चुप हो गया। उमके व्यस्तार के वाणी में एक अनुभवगत योग्य व्यक्ति का स्थिरता थी। आम विचारों में उमके मूल व्यक्तित्व में

दृष्ट भत्रक आया। उमने एक एक करके उपस्थित बंद पर अपनी दृष्टि दौड़ा दी। पाय सब एक-दूसरों की ओर देखने में व्यस्त थे। मनेजर महोदय ने सिर्फ उसके चरित्र को सुनकर किनी विचार में अपना आँसू निकाल कर रखी थी। इस वार की मुलाकात सम्भवत एक ऐसी व्यक्ति से थी जो मुलाकातों करत-करते एक कुशल व्यक्तित्व पर पहुँच चुका था। मनेजर महोदय भी वर्षों के अनुभवों से और उठ जा करना होता था उसे बड़ी कुशलता से और शीघ्र करने की क्षमता रखत थे। बतुरत किसी निश्चय पर पहुँच गया स प्रतीत हुए। उनका आँसू खुनी और उहाने बालना गुरू किया—

‘हमें खुशा है कि जनाव ने बहुत थोड़े समय में अपनी योग्यता का बहुत अच्छा परिचय दे दिया। अपने निश्चय पर पहुँचने में अभी हम दूरी लगेगी। शायद मारा सप्ताह ही लग जाय। चुनाव करने समय जनाव का व्यक्तित्व और कुशल निश्चय ही हमारे ध्यान में रहने। इसमें अच्छी और क्या बात हो सकती है कि आप-जस योग्य व्यक्ति का महयाग हम इतनी मुनभता से प्राप्त हो जाय। अच्छा नमस्त।’

साथ ही मनेजर महोदय ने आगतुव के सारे परिचय पत्र बटोरकर उसके एक हाथ में पकड़ा लिये और दूसरा हाथ मितानकर तुरत उम बिदाई का संकेत भी दे दिया।

कार्यालय के बाहर अनेक व्यक्ति और आय हुए खड़े थे। अधिगमकोत्तमीन अदर जाने के लिए अधिन अवसर की प्रतीक्षा में थे। मकाच गुरु व्यक्तियों के लिए प्रवण की कोर बाधा नहीं थी। सबके दखन-रुस्त एक नवागन्तुक और अन्तरचला गया। पारस्परिक अभिवादन के बाद तुरत उसने एक कुर्सी अपने बठने के लिए खींच ली। पूर्णिमा की आर एक अयभरी दृष्टि फेंकते हुए उसने कहा—

‘द्विप द्विपे ही आपने तो बहुत-सी तैयारियाँ कर लीं।’

तयारियाँ कुछ नहीं तुम्हारा हा इस्तजार था। हमारा पत्र मिल गया?’

फिर तो परियत है। हा पत्र आपका मिल गया था परंतु मैंने सोचा कि सबका साथ लाने में पहल बेहतर यही होगा कि आपका उनसे



‘ मैं तो दोना ही नहीं पीती । ’

यह बम्बई है । दोना म से एक का सहारा तो यहा लेना ही पडता है । एक बात और है । सुन्दरता और सेहत किसी पर इनका बुरा असर नहा पडना । विश्वासन करेता हमारी पूर्णिमा से पूछ लीजिए । हा, जल्नी फरमादये क्या हाजिर किया जाय ।” क्षणएक क लिए उपस्थित वन्द पर मौन मुस्कराहट छा गई । मनेजर साहब बोले—

‘ हमारी ‘लायन म तकटलुफ को जाह नहीं है । जल्दी वालिए मडम ।

‘ जमो आपकी मर्जी ।

‘ फिर लिपटन मजूर है ? ’ प्रश्न के साथ ही मनेजर के होठा पर एक अथमरी मुस्कराहट खेल गई जिसका उत्तर उपस्थित बन्द न जोर का हसी से दिया । सिफ पूर्णिमा और वीणा न अपने मुह हसी को रोकने के लिए रुमा ल द लिये । मनेजर चुप रहने वाले नहीं थे । उन्होन फिर कहा—“ मैं कोई काय बिना मजुरी के नहीं करता ’ मुनकर नवागन्तुक पुरप फिर हस पडा । पूर्णिमा और वीणा पर इम बकाय की कोई विशेष प्रतिक्रिया नहीं हुई ।

‘ फिर लिपटन ही सही । जाओ, एक फुन सेट चाय का ले आओ । आना पा नौकर कमरे के बाहर हो गया । अब तक नवागन्तुक पुरप न अपने चमड़े क थल म से तस्वीरो का एक बडा ‘एलबम निकाल लिया । मनेजर महोन्य के आगे उसे रखते हुए वह बोला—

सब कलाकार का परिचय उनकी तस्वीर के नीचे ‘टाइप’ किया हुआ है । जिम काम क लिय चाहिए प्राय सब इसम शामिल है । अनुभव उमर योग्यता, रंग भाषा, कीमन सब प्रत्येक की तस्वीर के नीचे दज है । हर तस्वीर पर नम्बर पडा हुआ है । आप पमन करके मुझे नम्बर नाट कर दीजिये । अपनी आवश्यकता बताना ता आपका काम है और काम बनाना मेरा ।

मनेजर महाशय ने प्रस्तुत चित्र पुस्तिका क पने पलटने प्रारम्भ किये । ज्या ही किमा तस्वीर पर मनेजर की दष्टि आरोपित होती नवागन्तुक पुरप कुछ न कुछ उससे सम्बन्धित ब्यक्ति की तारीफ म कह उठता । अपना

मिश्रित कर दिये। दोनों रमणिया ने पहले पुरपो को प्याले पकड़ा गि और फिर स्वयं उठाकर पीने लगी। नवागतुक पुरया ने दा एक घट अपने गले से उतारने के बाद कहा—

“मैं किस किसकी की बात नहीं कह रहा था। वास्तव में मुझ एक किस्सा स्मरण ही जाया था। बात यह थी कि एक बार एक प्रसिद्ध फिम निर्माता को पावती के ‘रोल के लिए एक लडकी की आवश्यकता हुई। कहानी का वह स्थल महाकवि कालीदास के ‘कुमारसंभवम स संबंधित था। अपनी आवश्यकता और पसंद-यक्त करने की दृष्टि से उन्होंने मरे मामन प्रथम सग के वे छंद पद जिनमें यौवन प्रवेश के समय पावती के गारारिक सौंदर्य का वर्णन था। एक दिन रात को मैं उनके सामने अपनी रस प्रतिमा को जा खड़ा किया। इसे देखते ही वे पावती पावती चिल्लाकर नाच उठे। तब से वे मेरी खोज पर कभी अविद्वान नहीं करते। और

‘परल के पहले ही पावती के रोल के लिए किसी को तुरन्त स्वीकार करने की बात समझ में नहीं आई गुप्ता साहब।

‘बीच की कुछ बात मैं जान-बूझकर छोड़ गया। कारण नारी की उपस्थिति में नारी के मौखिक की चर्चा में प्रायः करता नहीं हूँ। यह मेरा सञ्चति और सञ्कारा की आपत्ति है। खर ! आज महम मुझ माफ करगा। बात इस तरह हुई कि मैं अपने कलाकार को लेकर स्टुडियो में ही पहुँच गया। ‘गूटिंग चन रहा था इसलिए मकप आदि के लिए कोई निष्कन थी नहीं। तपस्विना पावती के रूप में मैंने अपने कलाकार का निमाना के सामने पना किया। कई स्टिन लिए गये। ‘केमरामन का कलाकार सवध स विनाप अगा का विनापनाए व्यवन करने की हिनायन हुए। कलाब तीनमी फिट फिमन पूर किया गया। दूसरे दिन हम सबन राज रस। निमाना दिग्गक केमरामन मर क-मत्र अवाक रह गया। हिमानय की पुत्रा कालीदास की काना मौगुनी थी क माय जमे पत्रे पर उतर आई है। एक एक जग की परीक्षा के लिए बार-बार मरधित शोक पत्रे गये। बार-बार ‘राज रिपोट हुए। मपानि पर सब-मपानि म हमारे कलाकार को पावना के लिए स्वीकार कर लिया गया। टीक आध घंटे बाद कर्षी चाय की खन पर काट्टेन और चक पर स्नवन हा गये। स्वभावतः त्रपुण उन

भाविया को देखना चाहेगा। इसी पुस्तिका के पृष्ठ पञ्चमी से आप उन भाविया का प्राग्भ द्योग। यही वह कलाकार है, पावती के रूप में। महा कवि कालीदास की कल्पना का श्लोक रूप प्रमग के लिए मैं चित्र क नीने लिखता है। उसी अवसर पर, उसी प्रमग में लिए गये चित्र हैं। प्रथम चित्र शरीर की उम अवस्था का साक्षात्कार है जब शरीर की सना जीवन प्रवग में स्वाभाविक शृंगार प्रारम करती है। वमना का जभाव इस चित्र में इसी दृष्टिकान में रखा है ताकि परीक्षक मान जगो का सौन्दर्य एक-दूसरे के सवध से एक साथ जाच सके। मदिता के विना मतवाला बना दन वाला यही सौन्दर्यश्री है। यही कामदेव का पिना फता वाला वाण है। अब आगेपन पलटिये। यहा चरण-स्थल कमल का आभास देंगे। और आगे चलिये। यह और अगला चित्र जाधा और निनम्बा के सौन्दर्य का आपक हृदय तक पहुचा-येगे। और आग चलिये कुछ और जाग। यही है वह चित्र। श्लाक प्रारम होना है—

मध्यन सा वेदविलग्न मध्या वनित्रय चाफ वमार बाता।

आरोहणाथ नवयौवनन कामस्य सापानमिव प्रयुक्तम।

महाकवि कालीदास ने नवयौवन की नाभी पर की तीन मिकुटना को कामदेव के लिए उरोजा तक पहुचान की पडिया के रूप में रखा था। यही वणन दम चित्र में चित्रित है। इसी चित्र से यह भी प्रदर्शित होगा कि सटे हुए उरोजा के बीच इतना स्थान नहीं रह गया है कि कमलनाल का एक सृत भी उमम समा सके। ध्यान से रगिये, परखिये। कल्पना के सौन्दर्य को पथ्या पर लाता हू तब दुनिया मानती है मनेजर साह्य। आपके लिए भी मरी मत्र सवाए हाजिर है। मिक आना ना इतजार है। आवश्यकता मालम हुई नहीं कि मैंने उसे पूरा किया। उम ! अपनी तो इतनी मा ही गारण्टी है।

‘धयवाद ! आपक रहते वे मत्र चित्ताए तो हम हैं भी नहीं।’

रहनी भी नहीं चाहिए। आगिर हम हैं किस लिए।’

‘एक चाय और हा जाय ?’

जब नहीं, सग्वि। इस एलउम को रत्वियगा ?

“चित्रा म ना आप ही चित्र ! नहलाजो। हमता असल के ही गारक

है। साथ ही मनेजर महाम्य न एवम व कर मिसटर गुप्ता को परडा िया।

'वाई पत आई भी ?'

जल्दी क्या है हम यहा है। आप भी दूर गही हैं। फुरतत म वार्ते कर लेंगे।

आपक लिए ता मडम वीणा का भी तयार कर दगा। क्या मडम ?'

मुत्राकात तो ने ही गई है। इगी नात कुछ अधिवार भी हा गया है। वभा-नभी ता तकलीफ ज द हा िया करेंगे।

ता अब क्या जाऊ ?

यह भी बताना पडगा। जय फुगत हो। हमेशा एक रोज छोडकर, दो रोज छाडकर जब जी म जाए।

फिर अभी जाना हो। आइय मडम।

ध-यना।

मिसटर गुप्ता व मडम वीणा का बाहर जाना था कि दो प्रोडाओ ने साथ साथ इसी वमरे म प्रवेश किया। चाल-डाल बेप भूपा व शृगार के प्रसाधना की बहु नता इन पर दूर से यौवन का आभास देते थे परन्तु वास्तव म ये भी बीत यौवनाए ही थी। प्रवेश करते ही एक बोली— नई कम्पनी के मानिको के पास चाहे काटेक्ट के पसे न हा पर चाय पानी के तो मिल ही जाया करत है।

आजकल फीस बहुत कम कर दी मालूम होनी है मडम।

'जाह ! जाव मुन रहे थे। माफ कीजिये मनेजर साहब। मैं तो अपनी सहेली स ऐस ही कुछ कह रही थी।

सहली चुप थी इसलिए मैंने उत्तर द दिया। आपको शुरू से ही अधिक बोलन का शौक है।

और आपको ?

अधिक बुलान का।

पटल तो किसी के प्रवेश करते ही आप चाय विन्कुट का हुकम भेज दिया करते थे।

वह समय बीत गया मडम।

‘चाय बिम्कुट तो नहीं बीन है ?’

‘देखिय ।’

‘देखेंगे ता आप । मैं तो दृक्म दे आई हू ।’

‘इतन में बराने चाय का नया सेट लाकर हाज़िर कर दिया । शण भर म ही पहले वाले बनना का बटोरकर वह कमरे के बाहर हो गया ।  
आगन्तुका बानी—

यदि आपत्ति न हो तो उपस्थित बन्द का पत्रिचय द दीजिये ।

मनेज्ज किगोरीलानन एक एक करके पहले से बैठे हुए ज़ीके नाम बान लिये । आगन्तुका न किमी की आर नेया नहीं बल्कि प्याला म चाय उटनी हुई बाता—

ममको नमस्कार ।

किमी न कोई उत्तर इस नमस्कार का नहीं दिया । शण भर विराम तर दोत्री—

“यदि आपत्ति न हा तो इमारा नाम भी इनके सामने एक बार ल बीजिये ।

आजकल किम नाम से मगह्र है ?

किम नाम म जनाव जनील करना चाहें । साथ ही उसन तयार प्याने पकडाव गुन कर लिये ।

‘यही बेबी अभी तक चलता है ?’

मम्मी की मर्यु व माय बत्री बटकर पुकारने वाल मम चल बम ।

‘उपता प्याना उसने होठा स लगा लिया ।’

‘ता मम्मी कहना प्रारम्भ कर दें ?’

‘वह उम्र मुझ नहीं आर है । पय का घट गने म उतागर उमन बना ।’

‘एक छाटी उम्र ही छाकरी साथ गव ता । नाम लो साधक हा जायगा ।’

गुना बहिनजी । य नागर निनमा बान घाड दिनाके बाग ही हम नागा का मर बट्ट करन गग जान है । आगन्तुका न अपना यह बसन्त्य पूणिमा का सम्पादन करके कहा था । पूणिमा इन्क आन व प्रारम्भ म ही



कुछ अप्रवृत्तिस्य हो उठी थी। अपना अतीत उसका अनुभव मथा। आग तुला का जनीत व सम्प्रथ स जपन भविष्य की स्मरणता अपन मस्तिष्क म उसे चित्रित मी त्रिगार्दनी। उमन नेता कि आग तुला जीर उनकी सटली अपन सामन आण चाय और बिस्कुट को समाप्त करन म मलग्न ह। उसने महसूस किया कि व आवश्यकता स ग्या पी रही हैं। प्रथम प्याल की समाप्ति पर पूणिमा न उनक प्याल एक बार जीर जपन हाथ स पूण कर लिय। मनजर महात्म्य अपना प्रथम प्याला भी अभी समाप्त न कर पाय थ। बोत— मानूम हाता है आज सुगह का राना भी नही खाया। सोचा था आपके यहा सार्येग। सुबह जब हुई है ? हम लागा की सुबह इमी समय हुआ करती है। और गाम ?

हिस्ताव नगा लें।

तुम्हें चाहिये अब जीर कुछ काम कर नो।

यह कीमती सलाह बहुत दरी म नी जनाव न।

पात्रता प्राप्त होने पर ही याम्य सनाह दी जानी चाहिये।

ध यवाण ! जाओ वहिन। जीर इतना कह वह अपनी सटनी का

हाथ पकड कमरे क बाहर चल दी। मनजर महोदय न उनक जाते ही पीछे स हाथ जोड दिय। पूणिमा क लिए हर आग तुल और उसकी वार्ता एक समस्या थी। उसके मस्तिष्क म उनक सम्बन्ध स काल्पनिक घटनाआ का एक अस्पष्ट चित्र उठा और कान धए म परिणा होकर लुप्त हा गया।

मनजर महोदय से पूणिमा की यह मानसिक घटना छिपी न रही। उसन तुरत यह निश्चय कर लिया कि मुलाजात क गम तिलसिल का फौरन बन्द कर दना चाहिये। वह अपनी कुर्सी स उठ बठा और बोला—

चन। स्टज का प्रबन्ध दख ल। उसक यह कहत ही सब उप

स्थित बन्द उठ बठ। पूणिमा सबसे पहले कमरे के बाहर निकली। उसन दखा कि कार्यालय के आग आसपास अब भी अनन्य यकित लड है। मन

जर महात्म्य उम और अपने अन्य माथी को एक मुख्य गोपान स अपन साथ रगमच म उतार न गया।

एक सप्ताह के भीतर भीतर रगमच की सुव्यवस्था हा पूर्वाभ्यास प्रारम्भ हा गया । नए पर्दे बने । नई विजली की व्यवस्था हुई । नए पोशाक मिले । अनेको विनप्तिया तयार हुई । मुख्य मुख्य आकषक दश्या के विनोप कर उनके जिनम पूणिमा अपनी समस्त सौंदयथी के साथ मदमाते यौवन म आदोलित हाती हुई दिखाई जाती थी । कई अचल चित्र लिय गय । लेखक, मनेजर, विनापक पत्र सम्पादक--सबने मनोवचानिक दष्टिकोण से उनक चुनाम म महायता की । पूणिमा की सहमति व स्वीकृति के पश्चात उनकी अनक छोटी रडी प्रतिलिपिया बनाई गई । उही के आधार पर प्रदर्शन के दिन के लिय कई विराट चित्रपट तैयार किय गय । विनप्तियो तथा विनापन चित्रा की एउ सग्रह पुस्तिका भी बनवाई गई । मैनेजर किशोरी लान ने एक दिन रात्रि म इस सग्रह पुस्तिका की प्रतिलिपि को अपनी कम्पनी की मुख्य नायिका नुमारी पूणिमा को सादर व सप्रेम भेंट किया । इमे पाकर जावन म पहली बार पूणिमा न अनुभव किया कि मनुष्यो के समार म उमकी भी कुछ ह्मती है । इसम प्रदर्शित चित्रा म पूणिमा का सौंदय अपने सौगुने प्रभाव से निखर आया था । मैनेजर महोदय के चले जान के बाद रात्रि के एक विलम्बित प्रहर तक आवाग म वह इसम अपनेको दग्ती रही । अनेक चित्रा की मध्यस्यता से अपने चित्रित सौंदय क सरय का विश्वास पाने के लिए उमने अपने आपका अपन सामन के शीने म उत्तारा । उमका यौवन सौंदय सब उसके सामन था । परिचय-पुस्तिका उमकी क्षमता की साक्षी थी । फिर भी न जाने क्या उसका विश्राम हिल जाना था । रह रहकर उसे विचार आता था कि यदि जनता ने उसे, उमक काय को पसन्द नही किया तो उसने नविष्य की सारी आशाया पर पानी फिर आयगा ।

पवाभ्यास की प्रगति के साथ-साथ विनापन के काय को मनजर

आगतुन दशको की अधीरता के वातावरण में नियत समय पर यह निरा रगमचक एक पाश्वर्य में खिंची। क्षण भर के लिए सारी रगशाला चित्र लिखी मी जान पड़ने लगी। विभिन्न गणों की अगवर्तियों ने पहल से ही रगशाला के वायुमंडल को अपन भीने पवित्र धूम्र से सुरभित कर रखा था। सप्त स्वरों की एक मधुर आलाप कानों में आई। साथ ही भगवान गणेश की स्तुति में गायक का स्पष्ट स्वर सुनाई पड़ा। अब तक दशको की जात्रा के आगे दृश्य उपस्थित हो चुका था। जगम्य पहाड़ हिमाच्छादित गिखर, जल प्रपात गंगा की सकीण धारा कदराआ में यत्र-तत्र समाविष्ट सयानी। पृथ्वी जत्र तत्र वायु आकाश, मूय चंद्र तथा हाता के प्रत्यक्ष रूप और ममार के स्वामी महादेव की सदबुद्धि प्रदान करने के लिए प्रायना की गई।

नादी हो चुकने पर सूत्रधार ने मारिप पारिपाश्वर्य को पुकारा। उनके पहुचने पहुचने ही दृश्य परिवर्तन हो गया। मारिप ने मान, सौमिल्लक और कवि-पुत्र के नाटकों की चचा की परंतु मूनवार के यह समझने पर कि क्या जाने में हा कोई अयोध्या नहीं होता और पुराना होने मात्र से ही याम्यत्र नहीं बढ़ जाती। उहान कालीदास के मालविकाग्निमित्र नाटक में अभिनय का ही नियम किया। इस प्रस्तावना की समाप्ति के साथ ही दृश्य परिवर्तन हुआ। बकुलावलि का भूमिका में एक रमणी आई। दूसरे पाश्वर्य में महारानी का अय सविका कुमुदनी का आगमन हुआ। पारस्परिक वार्ता में बकुलावलि यह बता गई कि एक चित्र में महारानी धारिणी के पास बठी हुई मातृविका की दखकर ही महाराजा उस पर मुग्ध हो गये और तभी से महारानी ने उस पर कडा पहरा बठा रखा है। इस कथोपकथन ने दगा का का मातृविका के सौंदर्य के सम्बंध में कल्पना करने उनमें नायिका के सौंदर्य के सम्बंध में एक उच्चस्तरीय उत्सुकता बनाए रखने में महायता की। साथ ही विद्वाना का चतुर चेतक का स्त्री मुलभ ईप्या स्वभाव का संकत भी मिन गया। एवं सफल नाटकवार के प्रमाणस्वरूप लवक प्रारंभ में ही अपनी मुत्तर नायिका का महाराजा की प्रयसी और महाराजा की कोप भावना बना दगाको की सक्रिय सहानुभूति उनके प्रति जाकर्षित कर ल गये।

बकुलावलि का आगे बनी। आय गणनास नाट्याचाय से साप्ताह्य होने

ही उगने उहे महारानी का सदा कह सुनाया और मालविका की कलात्मक प्रगति के विषय में प्रश्न किया ।

लेखक को अपनी नायिका के प्रति अभी अनेकानेक उत्सुकताएँ पदा करना था । बकुलावलि का के प्रश्न के उत्तर में जब नाटयाचार्य गणदास ने यह बताया कि मालविका भाव बता देने के बाद उस और भी अधिक सुंदरता से अज्ञा करती है । दशक मीदय के साथ उसकी कला के प्रति भी सजग हो गये । सुदरी, कलाकार कष्ट में किस भावुक दशक की सहा नुभूति प्राप्त नहीं करगी ? इसी स्थल पर गणदास के प्रश्न पर बकुलावलि का न बताया कि अन्तपाल दुर्ग के रक्षक महारानी धारिणी के एक भाई ने इस कथा का उसके पास सेवा में इस आशा से भेजा है कि वह गाने बजाने की कला को अच्छी तरह सीख सकेगी । कथोपकथन से दशको की मालविका के प्रति उमुक्ता बराबर बढ़ती गई । उसके सौन्दर्य के प्रति, उसकी कला के प्रति, उसकी क्षमता के प्रति । उसकी परिस्थिति ने मानवीय सहानुभूति का वातावरण अपने लिया पैदा कर लिए । सोमनाथ के दुर्ग रक्षक द्वारा गाने बजाने की सेवा के लिए भेजी हुई बाला रक्त-सम्बन्धिनी तो नहीं हो सकती यह तो विवक्षित दशक तुरंत निश्चय कर चुके । फिर ? उत्तर दशक की कल्पना पर आश्रित था । रूपभयो, गुणमयो, पराधीना, निर्दोषा मालविका परन्तु फिर भी महारानी की कोपभाजिका । दशक अपनी उत्सुकता की चरम सीमा पर हृदय में सहानुभूति लिए आतुरता के साथ उसे देखने की इच्छा करने लग । महाकवि कालीदास की कृति मालविका सहज ही में रग शान्ता के ममस्त दशका की नायिका बन गई । उसी नायिका की प्रतीक्षा में रगशाला की आँखें आरौपित थी कि महसा मच पर विषय परिवर्तन हो गया ।

जोर साथ ही दृश्य परिवर्तन भी । महाराज अग्निमित्र अपने समासदा के माय बठ हुए दिखाई दिए । बाहक अमात्य विदभ के राजा का एक पत्र लेकर उपस्थित हुआ । सवाद था कि विदभ के राजा का चचेरा भाई अपने वचन के अनुसार महाराज अग्निमित्र को अपनी बहन व्याहने आ रहा था कि विदभ की सीमा के पास ही उसे बन्दी बना लिया गया । उसकी स्त्री और बहन भी कद कर लिए गये थे, मगर उसकी बहन कथित घर-

पकड़ भ गयी गायब हो गई जिसकी खोज जारी है। विदभ के राजा ने अपने चचेरे भाई माधवसेन को मुक्त करने के बन्ते में महाराज अग्निमित्र द्वारा अपने साले मीथ सचिव को मुक्त करने की शत रखी थी। परामर्श प्रारम्भ हुआ। अमात्य की राय रहा कि क्याकि विदभ का राजा अभी गद्दी पर बैठने के कारण प्रजा में अपनी जड़ नहीं जमा सका है इसलिए उस पर रोपे हुए दुबल पौधे की तरह बड़ी सरलता के साथ उखाड़ा जा सकता है। निणय हुआ कि वीरसेन के नायकत्व में उसे जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए पर्याप्त सेना भेजी जाय।

शस्त्र युद्ध का यह एक निणय अभी पूरा हुआ ही था कि दूसरे कुसुम युद्ध की प्रगति का समाचार देने महाराज के पास उनका जन्तरंग विद्वप मित्र गौतम आया। महाराज अग्निमित्र मालविका को चित्र में देखने के बाद अपनी आँखों से शरीर मूर्तरूप में देखना चाहते थे। महाराज की साथ थी मालविका से मिलन की और यही अपना काय उन्होंने अपने विद्वप मित्र को सौंपा था। प्रेम के सार आचार गुप्त होने हैं इसी तथ्य की निबन्धते हुए रगमच पर दिखाया गया कि काम पूरा हो गया है। महाराज ने कान में इसकी पूति के समाचार सुने परन्तु कुछ ही सवाद में समस्त सूचना दशको को दे दी गई। महाराज अग्निमित्र दशका की भावना के प्रतीक उहीं का मच पर जहा तक मालविका को देखने का सम्बन्ध था प्रतिनिधित्व करते थे। दशको की नायिका मालविका को देखने की आतुरता स्पष्ट रूप से नायक अग्निमित्र के चेहरे और शरीर पर थी। नायक का अपने दशका के साथ मीथा सम्बन्ध था। आरमभाव की दोनों के बीच साम्यता थी और यही कलाकार की विवेकता और कला की सर्वोत्कृष्टता थी। विवेकगील दशक सक्त मात्र से ही कला के इस प्राण से परिचित करा लिये गय।

नेपथ्य के एक ही सवाद में दशको को यह सूचना दे दी गई कि उनकी आतुरता की पूति के लिए प्राकृतिक पृष्ठभूमि तयार की जा रहा है। और क्षण भर में ही इस पृष्ठभूमि के नायक मगीतावाय्य हरत्त और नायिका-  
 १ चाय्य गणनास रगमच पर जा गय। कश्चकी न उह महाराज के सामने पग किया। पारस्परिक वाय्य अभिवादन के बाद दोनों कला विगारणों में महा

राज के समक्ष अपने प्रतिवन्द्य निवर्दिन किये। पारस्परिक स्पर्धा दानों के विवाह का कारण थी। दाना राजकीय सेवा में थे। जाचार्यों के रूप में कार्य करते थे। हरण्त की शिष्या इरावती थी और गणदास की मालविका। दोनों ही अपनेको एक-दूसरे से बड़ा व अधिक योग्य मानते थे। महारानिया में भी उनकी योग्यता के सम्बन्ध में भिन्न भिन्न मत थे। प्रस्तुत परिस्थिति पर बात इतनी बढ़ आई थी कि दोनों नही प्रस्ताव रखा कि कलाके प्रदर्शन को ही आधार मानकर उनके बीच उनकी योग्यता के स्तर का निर्णय कर दिया जाय। दो योग्य कलाकारों द्वारा स्वस्थ स्पर्धा के वातावरण में अपना अपना प्रदर्शन एक उच्चतम स्पृहीय कला प्रदर्शन के स्तर का मकेन देता था। सूचना मात्र उत्साहवर्धक थी उत्सुकतामया भी।

इसी अवसर पर महारानी धारिणी और परिव्राजिका आ गयी। महाराज ने भगवती धारिणी का इस स्पर्धा में पक्ष बनने का जाग्रह किया। देवी धारिणी न कथित भगवती के प्रति ही अपनी उपमा प्रदर्शित की। महाराज तो इस अवसर को अपनी साध पूर्ति का साधन जानते थे। उनके उद्देश्य को लक्ष्य कर जब परिव्राजिका ने योग्यता का आधार शिक्षण की सिखाने की क्षमता पर आश्रित बताया तो सिंवाय देवी धारिणी के सभी कथित सिद्धांत पर सहमत हो गये। विद्वान् दशका के समक्ष नारी की इष्या स्पष्ट हो गई। नाटक की नायिका मालविका की उपस्थिति के लिए एक सवथ्रेष्ठ अवसर उपस्थित हो गया। अपने आचार्य गणदास की कला की प्रतीका के रूप में उसे निर्णायक के समक्ष उपस्थित होना था। एक बार और पाया तथा दशका के बीच एकात्म भाव कला के निर्णायकों के रूप में पना हुआ।

इस मजिल पर देवी धारिणी महाराज तथा उनके मित्र गौतम की मालविका का देखने की इस याचना में अनभिन्न नहीं थी। प्रदर्शन से पूर्व महाराज को यह कहे बिना न रही कि यदि आयुष्य अपने राज्य की दम्भाल करने में इतनी कला लगाने तो कितना श्रेयस्कर होता। इन आशेष पर महाराज ने जब यह उत्तर दिया कि इसमें उनका कोई हाथ नहीं है और जो यकिल एक ही विद्या वाले हैं व एक-दूसरे की उन्नति कभी नहीं महसूस करते, तो सहसा अमत्य वक्ता का मनोवचानिक तथ्य और कुशल नामक का व्यावहारिक और सामाजिक ज्ञान सहज में उनके मुह से स्पष्ट हो गया।

दाने में ही नेपथ्य में मन्त्र की ध्वनि सुनाई दी। मानविका व प्रवेश का उपमुक्त अवसर आ गया था। रंगाला में उगने प्रति सहानुभूति और उत्कण्ठ अपनी चरम सीमा पर थी कि चाम पात्रा में बड़े घूर्णन स्वरों के आरोह के साथ बज उठे। एक अलौकिक सौन्दर्य दण्डा के सामने था। मूत गौदय। नारी का रमणी रूप, अपनी सर्वोत्तम सजा में, अपने मय श्रेष्ठ शृंगार में। कुछ क्षणों के लिए मूर्ति में एक मोहक मुग्धता में वह रम्य मय ने मध्य में खड़ी हो गई। अलौकिक मोदय था। साथ से भी अधिक सुन्दर। चित्र से भी अधिक चित्ताकर्षक। मूर्ति से भी अधिक मोहक।

क्षण भर के लिए रंगाला में जादू की स्वयंता छा गई। दशका के हृदय आत्मा की राह मच पर चले गये। अतप्त आर्षे अपरक हो प्रस्तुत सौन्दर्य रम्य का पान करने लगी। मूव रह इस सौन्दर्यधी की और अधिक देर देयन रहना भी असम्भव सा हो गया था कि सहसा रगमच से नायक अग्निमित्र के मानसिक भाव सुनाई दिये—

‘वाह! सर से पाव तक यह तो सब सुन्दरी है। बड़ी-बड़ी आर्षे, चमकना हुआ शरद चन्द्र जैसा मुख कथा पर तनिक भुकी हुई भुजाए उभरते हुए कठिन उरोज, चिकनी काले मुट्ठी भर की कमर, मोटी मोटी जाँघें तनिक भुकी हुई पावा की जगुलिया। मालूम होता है जैसे ये सब अग नाट्य विचारद आचार्य गणदास के कहने पर ही घड़े गये हा—

अपने मन की यह बात नायक द्वारा मच पर बहुत धीरे से कही गई थी। वाणी मन्द होते हुए भी सारी रंगाला में स्पष्ट रूप से सुनाई दी। अपने हृदय की बात को नायक के मुह से सुन दशक हर्षित व प्रभावित हुए बिना न रह सके। इससे अधिक सवाद प्रस्तुत सौन्दर्य का अपमान था, उसकी अवहेलना थी। इसीलिए कला प्रदर्शन के अवसर पर श्रोताओं द्वारा दशकों द्वारा सयत शब्दाव सयत आचरण का व्यवहार ही सांस्कृतिक सस्वृति समझी जाती रही है। यही समझ रंगाला और रगमच दोनों ने ही इसका पानन किया। नायक के शब्दों की समाप्ति के साथ ही पुन उत्सुकता गयी शान्ति रगशाला में सबत्र छा गई।

कला प्रदर्शन के पूर्व कलाकार सदैव ऐसी ही शान्ति की प्रतीक्षा में होता है। इसी प्रस्तुत शान्ति की प्रतीक्षा नाट्याचार्य गणदास की पटु

शिष्या मालविका को भी थी। ज्यो ही अवसर के लिए उपयुक्त शांति का उसने अनुभव किया, एक मधुर आलाप उसके मुह से निकला। स्वरा की शुद्धता व स्पष्टता से ही उच्चस्तरीय सगीत का आभास मिलता था। गान, नृत्य व नाट्य-कला के इन तीनों अंगों का सम्यक एकात्मभाव प्रदर्शन ही सगीतकार की समस्या थी। अपनी वेश भूषा सज्जा व प्रसाधनों के अनुकूल ही उसने अपनी रागिणी का चयन किया। शुद्ध रूप के स्वरा व आरोह अवरोह ने शीघ्र ही भावात्मक रागिणी के एक रूप को खड़ा कर दिया। श्रोतागण वादी-सवादी स्वरा की हृदय-स्पर्शों छेड़ से भावमयी रागिणी के रस में डूब-से गये। नयना की तुष्टि के लिए सौ-दयश्री स्वयं उपस्थित थी। कानों की तृप्ति के लिए कर्णप्रिय स्वरा का सागर हिलोरें लेने लगा।

ज्या ही कलाकार ने अनुभव किया कि उसने अपने दर्शकों के साथ एकात्मभाव प्राप्त कर लिया है, उसने आत्म प्रदर्शन के लिए साहित्य का आश्रय लिया। यह एक गीत था। शब्द ये—

अब सम्भालो आन प्रीतम !  
 समपण तन प्राण, प्रीतम ! अब सम्भालो  
 प्रिय मिलन दुलभ, निराशा !  
 नयन बाया फरके, आशा !  
 पराधीना पथ निहारू !  
 साध जाग मव बाहू,  
 गिरी अब तो याम, प्रीतम !  
 अब सम्भालो आन प्रीतम !

कलाकार ने ज्या ही प्रियतम की पुकार में अपनी बाहू ऊपर उठाई सहसा दर्शकों का ध्यान उसके कसे हुए उन्नत उरोजा की ओर आकर्षित हो गया। गीत की प्रथम पंक्ति के साथ ही उसने सहज भाव से एक अभि सारिका की विवशता की आखिरी सीमा को व्यक्त कर दिया। दर्शकों— श्रोताओं की सहानुभूति को आकर्षित करने के लिए यह एक अबूक पुकार थी। सुनकर न नायक चुप रह सकता था, न दर्शक व श्रोता।

गीत की द्वितीय पंक्ति के आखिरी शब्दों को दोहराते-दोहराते ही उसने मारी रगनाला को ही अपना बना लिया। तन और प्राणा के समपण से



रूप के रसिक उसके अग प्रत्यग की प्रशंसा कर रहे थे। स्वर व लोभी उसकी कणप्रिय आवाज की तारीफ म सलग्न थे। साहित्यिका को उसका शुद्ध तथा स्पष्ट उच्चारण पसंद आया। कलाकारों को उसकी नसगिक भाव-व्यजना अच्छी लगी। मूर्तिबारा के लिए उसकी मुद्राएं उनकी कलाकृतियों के लिए एक आधार बन गईं। व्यवसायी उसके विभिन्न चित्रों के माध्यम से अपनी व्यवसाय सामग्री के विज्ञापन की रूप रेखा बनाने लगे। विलासियों ने किसी भी कीमत पर सौंदर्य की इस मुकुमारिता को हासिल करना चाहा। कामबिहृतों ने योजना बनाई कि पत्र लिख लिखकर वे परस्पर भाई-बहन का सम्बन्ध स्थापित कर लेंगे और चित्रों का आदान प्रदान करके अनायास इस सुंदरी से सम्पर्क स्थापित कर लेंगे। साराग यह कि रंगशाला में वातावरण कुछ ऐसा बन गया जिससे यह स्पष्ट प्रकट होता था कि पूर्णिमा का प्रदर्शित कौमार्य अब अकेले में अच्छा नहीं रहने दिया जा सकता।

इस वातावरण में नाटक की प्रगति पुन प्रारम्भ हुई। दो अब समाप्त हो चुके थे। यह तीसरा अब था। समाहितिका नाम की दासी महाराज के उपवन से नीबू लेने आई। सुनहरे अंगों की ओर टकटकी लगाए उसने मालिन मधुवारिका को देखा। दोनों के सवाद से यह मूचना दी गई कि निर्णयिका द्वारा आचार्य गणेशम ही मालविका की शिक्षा के सम्बन्ध में अधिक योग्य ठहराये गए। माय ही प्रामाद की दासी समाहितिका ने यह भा बनाया कि महाराज मालविका को बहुत चाहते लगे हैं परन्तु महाराज धारिणी का मन रखने के लिए वह अपने प्रेम का स्वतंत्र होकर प्रर्णित नहीं करते। मानविका की दगा उगने मालती की कुम्हलानी हुई माना की तरह बनाई। और ज्या ही य चर्नी महाराज और उनर विदूषक मित्रगौतम प्रेम बन में आय। रानी इरावती की ओर में आज महाराज का भून का निमन्त्रण था। पर महाराज की बातों में पना चलन था कि वे मानविका का प्रेम में परेगान हैं। उनके मित्र गौतम उन्हें बसान व पूना व शृंगार की आर आशयिन करने हैं जिन्हें देखकर उन्हें अत्यन्त प्रमनता होनी है।

इतने में ही मानविका इगा प्रमन बन में आ जाती है। मन कण्ड है। पूना की मन्त्रवट से पून अंगोच का छया व नीच वह चर्नी है। महा

राज उसे देखकर खिल उठते हैं। उसके हृदय की याह पाने के लिए दोनों मित्र एक लता के पीछे छिप जाने हैं। मालविका के मुह से सहसा निकल जाता है—

“अरे हृदय ! तू एसी चाह क्या करता है जिम पर न तो कोई अपना बश ही है और न जहा तक अपनी पहुच ही है। मुझे सताने में तुझे क्या मिल रहा है।”

सुनकर विदूषक राजा की ओर देखता है। घाडी दर में महा महाराज की सन्देश-बाहिका बद्धलावलिका आती है और मालविका के पावा म महा-वर लगाती है। यह शृंगार महारानी धारिणी की आज्ञानुसार अशोक का पुष्पित कराने के लिए किया जा रहा है।

दूसरे ओर अपन पूव निश्चित कायक्रम के अनुसार रानी इरावती अपनी दासी निपुणिका के साथ प्रमद वन म प्रव्रश करती है। प्रथम सवाद से ही प्रतीत होता है कि रानी मदिरा पिये हुए है। वह पूछती है—

‘निपुणिका ! बहुत सुना करती हू कि मदिरा पीने से स्त्रिया बहुत सुदर लगन लगती है। क्या यह कहावत सच है ?’

‘पहले तो यह कहावत ही थी, पर आज तो यह सच दिखाई देना है।’

‘चल, चल ! मुहदेखी रहने दे। अच्छा, यह बता कि पता कैसे चले कि स्वामी भूलाघर पहुच गये हैं ?’

‘यह तो आपका अखण्ड प्रेम ही बता रहा है।’

‘ठकुरमुहाती रहने दे। सल्लो चप्पा छोड, सच-सच बता।’

‘बस तोलव का प्रसाद पाने के लोभी आय गौतम ने कहलाया है कि देवी की जल्दी स भेज दो।’

‘दासी ! मद इतना चढ गया है कि आयपुत्र का देखने की आकुनता होने हुए भी पाव आगे नहीं बढ़ने।’

‘लीजिए भूलाघर म तो आप पहुच गई।’

‘आयपुत्र तो यहा कहीं दिखाई ही नहीं पड़ रह।’

‘ध्यान स देखिय, स्वामिनी ! आपसे हसी करने के लिए यही कही छिप होंगे। आइये, हम लोग भी प्रियग के लता मण्डप मे चलकर अशोक क तले प्रस्तर शिला पर बटे।’

रूप के रसिक उमरे अग प्रत्यग की प्रगाथा कर रहे थे। स्वर व लोभा उसकी कणप्रिय आवाज की तारीफ म मलग्न थे। साहित्यिका को उमका गुद तथा स्पष्ट उच्चारण पगद आया। कन्वाकारों को उमकी नसर्गिक भाव-व्यञ्जना अच्छी लगी। भूतिवारा के लिए उसका मुगए उनकी कलावृत्तिया के लिए एक आधार बन गई। व्यवसायी उमके विभिन्न विद्या के माध्यम से अपनी व्यवसाय सामग्री व विज्ञापन की रूप रेखा बनान लगे। विलासिया ने किमी भी कीमत पर सौदय की इस सुकुमारिता को हामिल करना चाहा। वामविद्वता ने योजना बनाई कि पत्र लिख लिखकर वे परस्पर भाई-बहन का सम्बन्ध स्थापित कर लेंगे और विद्यो का आदान प्रदान करके अनायास इस मुन्नी से सम्पक स्थापित कर लेंगे। साराग यह कि रगाला म वातावरण कुछ ऐसा बन गया जिससे यह स्पष्ट प्रकट होता था कि पूर्णिमा का प्रदर्शित कीमाय अब अबल मे अछूता नहीं रहने दिया जा सकता।

इस वातावरण म नाटक का प्रगति पुन प्रारम्भ हुई। दो अक समाप्त हो चुके थे। यह तीसरा अक था। समाहितिका नाम की दासी महाराज क उपवन से नीबू लेने आई। सुनहरे अशोक की जोर टकटकी लगाए उसन मालिन मधुवारिका को देखा। दोना के सवाद से यह सूचना दी गई कि निर्णायको द्वारा आचाय गणदास ही मालविका की शिशा के सम्बन्ध से अधिक योग्य ठहराये गए। साथ ही प्रासाद की दासी समाहितिका ने यह भी बताया कि महाराज मालविका को बहुत चाहने लगे हैं परन्तु महाराना धारिणी का मन रखने के लिए वह अपने प्रम का स्वतन्त्र होकर प्रदर्शित नहीं करते। मालविका की दगा उसने मालती की कुम्हलाती हुई माला की तरह बतलाई। जोर ज्या ही यचली महाराज और उनक विद्वपक मित्र गौतम प्रमद वन मे आय। रानी इरावती की ओर से आज महाराज को भूले का निमन्त्रण था। पर महाराज की बातो स पता चलता था कि वे मालविका के प्रेम मे परेगान हैं। उनके मित्र गौतम उहें बसंत के फूलो के शृगार की ओर आवर्षित करत हैं जिह देखकर उह अत्यन्त प्रसन्ता होती है।

इतने म ही मालविका इसी प्रमद वन मे आ जाती है। मले कपडे हैं। फलो की सजावट से गूय अशोक की छाया के नीचे वह बठती है। महा

राज उसे देखकर खिल उठत हैं। उसके हृदय की चाह पाने के लिए लौना मित्र एक लता के पीछे छिप जाने हैं। मानविका के मुह से सहसा निकल जाता है—

‘अरे हृदय ! तू ऐसी चाह क्यों करता है, जिस पर न तो कोई अपना बंध ही है और न जहां तक अपनी पहुंच हा है। मुझे सताने में तूझे क्या मिल रहा है।

सुनकर विदूषक राजा की ओर देखता है। थोड़ी देर में यही महाराज की सदाश-चाहिका बकुलाबनिका आती है और मालविका के पावो में महा वर लगाती है। यह शृंगार महारानी धारिणी की आनानुसार अशोक को पुष्पिन कराने के लिए किया जा रहा है।

दूसरा ओर अपन पूव निश्चित कायक्रम के अनुमार रानी इरावती अपनी दामा निपुणिका के साथ प्रमद वन में प्रवेश करती है। प्रथम सवाद से ही प्रतात होता है कि रानी मदिरा पिय हुए है। वह पूछती है—

“निपुणिका ! बहुत सुना करती हू कि मदिरा पीने से स्त्रिया बहुत सुंदर लगन लगनी है। क्या यह कहावत सच है ?’

“पहल तो यह कहावत ही थी, पर आज तो यह सच दिखाई देता है।”

‘चल, चल ! मुहदेखी रहने दे। अच्छा यह बता कि पला कमे चने कि स्वामी भूलाघर पहुंच गये हैं ?’

“यह तो आपका अखण्ड प्रेम ही बता रहा है।’

“ठकुरमुहाती रहने दे। लल्लो चप्पा छोड सच-सच बता।

“बस ता मव का प्रसाद पाने के लाम्बी आय गीतम ने कन्नाया है कि दवी को जल्दी स भेज दो।

‘दासी ! मद इतना चढ गया है कि आयपुत्र को देखने की आकुलता हाा हुए भी पाव आगे नहीं बढते।

‘लाजिए भूलाघर में तो आप पहुंच गई।

“आयपुत्र तो यहा कहीं दिगाई ही नहीं पड रहे।

‘ध्यान से दक्षिय स्वाभिनी ! आपसे हसी करने के लिए यहीं दिये होग। आइय हम लाग भी प्रियग के सता मण्ण म चलकर तले प्रम्तर गिता पर बठे।

रूप के रमिय उमक अग प्रत्यग की प्रगमा कर रहे थे । स्वर व लोभा उसकी वणप्रिय आवाज की सारीय म मलग्न थे । साहित्यिका को उमका गुड तथा स्पष्ट उच्चारण पगद आया । बलाकारा को उमका नर्तकिक भाव-स्थजना अच्छी लगी । मूर्तिकारा के लिए उमकी मुद्राएँ उनकी बलाकृतियाँ के लिए एक आधार बन गईं । व्यवगायी उमके विभिन्न चित्रा के माध्यम से अपनी व्यवगाय गामयी व विगापन की रूप रेखा बनाने लगे । विलासिया ने किंगी भी कीमत पर सौत्य की इग मुकुमारिता को हासित करना चाहा । वामबिहृता ने योजना बनाई कि पत्र लिख लिखकर वे परस्पर भाई-बहन का सम्बन्ध स्थापित कर लेंगे और चित्रा का आगन प्रगन करके अनायाग इग सुत्री से सम्पक स्थापित कर लेंगे । सारांग यह कि रगाला म वातावरण बुद्ध ऐसा बन गया जिससे यह स्पष्ट प्रकट होता था कि पूर्णिमा का प्रदर्शित कीमाय अब अकेले में अछूता नहीं रहने दिया जा सकता ।

इग वातावरण म नाटक की प्रगति पुन प्रारम्भ हुई । दो अब समाप्त हो चुके थे । यह तीमरा थक था । समाहितिका नाम की दासी महाराज व उपवन से नीबू लेने आई । सुनहरे अणोव की ओर टकटकी लगाएँ उसने मालिन मधुवारिका को दत्ता । दोना ने सवाद में यह सूचना दी गई कि निर्णायिका द्वारा आचाय गणदाम ही मालविका की शिक्षा के सम्बन्ध से अधिक योग्य ठहराये गए । साथ ही प्रासाद की दाम्नी समाहितिका ने यह भी बताया कि महाराज मालविका को बहुत चाहने लगे हैं परन्तु महारानी धारिणी का मन रखने के लिए वह अपने प्रेम को स्वतन्त्र होकर प्रदर्शित नहीं करते । मालविका की दगा उमने मालती की कुम्हलाती हुई माना की तरह बताई । और ज्या ही यचली महाराज और उनके विदूषक मित्र गौतम प्रमद वन म आय । रानी इरावती की जोर से आज महाराज को भूले का निमन्त्रण था । पर महाराज की बातों से पता चलता था कि वे मालविका के प्रेम में परेगान हैं । उनके मित्र गौतम उहे बसत के फूलों के शृगार की ओर आवपित करते हैं जिन्हें देखकर उहें अत्यन्त प्रसन्नता हाती है ।

इतने म ही मालविका इसी प्रमद वन म आ जाती है । मले कपडे हैं । फलों की सजावट से पूय अणोक की छाया के नीचे वह बठती है । महा

गौतम फिर बाला—

‘वयो बकुलावलिके ! मत्र जान बूमकर भो तुमन इह एसी टिठाइ से रोना क्या गही ?

जाय ! यह महारानी की आत्मा का ही पालन हो रहा है। इसीलिए यह एसी टिठाई करने में परवश थी। महाराज क्षमा करें।’ महाराज बाते—

‘अच्छा यह बात है तो कोई अपराध नहीं। उठो भद्रे !’

‘ठीक है, महारानी की बात तो माननी ही चाहिए थी।’

‘क्या त्रिनासिना ! तुम्हारा त्रिमन्त्र के समान यह कोमल बाया पाव अगाध पर तगन से कहीं टुलने तो नहीं लगा है ?

‘रानी इरावती ने इन प्रेम प्रदर्शन को दया। इतन मही मालविका बोली—

‘आजा बकुलावलिक ! महारानी का मूचनाद आवें कि आपकी जाना का पालन कर दिया गया है।

‘पहन महाराज से यन् प्रार्थना करा कि व तुम्हें छाड़ दें।

‘तुम जा सकती हो भद्रे ! पर एक बात मरी सुननी जाओ।’

‘दया ध्यान कर गुनो। हा महाराज ! आत्मा की निय।

‘दयो मुन्त्री ! बहुत दिना म इसा अगोक की तरह मुकम भी धय क पन नग आ रह है। इसलिए तुम्ह छोडकर और किमा स प्रम न करने बात मुक सबक क लिए मन की साथ भी अपन स्पग का अमन पिनाकर आन तुम पूरी कर ग।

‘रानी इरावती क निग यह जमहा था। वह दमी क्षण प्रत्यक्ष हाना हुई बोली— हा हा पूरी करा, पूरा करा। गारु म अभी फून नहीं जाय। पर य ता अभी ग फून ग रह है।’

‘परिस्थिति बल गइ। रानी इरावती पटल बकुलावलिका पर क्रुड हुई और फिर महाराज पर अविश्वास का दाप लगाया। महाराज बाते भी कि उत मानवियारसे क्या देना गना है। वनो उमा की अनुपस्थिति म मान विता ग मन बहनाव कर रह थ मगर रानी न उनका विश्वास नहीं किया। यन् त्रिजो गिराता हुई घना बल्ला का तरह महाराज पर दरम पनी। महाराज न बगुन का गिग का कि उमना चण्डी म्य गान हा मगर व धन

“यही ठीक है।”

यहा निपुणिका रानी इरावती को बकुलावलिका और मालविका की उपस्थिति की सूचना देनी है। महाराज की तलाश का कहने पर वह मुनती है—

‘सखी ! मेरे पर ही आग नहीं बढ़ रहे ह। इधर मद मुझ बेहाल कर रहा है। पर मन मे जो खटका उठ गया है उसे ता मिटाना ही होगा। इन सब बाता से तो मेरा जी जल जाता है।

बकुलावलिका और मालविका रानी इरावती की उपस्थिति से अचेत हैं। यही तथ्य मालविका क लिए महाराज और आय गौतम के लिए भी सत्य है। पारस्परिक धार्ता भ मालविका महाराज क प्रति अपने प्रेम की बाग वह दती है। उसे बकुलावलिका द्वारा महाराज के प्रेम का आश्वासन प्राप्त होना है। फिर भी वह डरती है। महारानी का व्यवहार उसका समस्त जानाजा परतुपारापात कर देता है। वह कहती है—

मुझ पर कोई विपदा आए तो तू मुझ न छाड़ देना।

कुछ ही देर भ बकुलावलिका ने मालविका के पाव लाग्ना रग मे रजित कर दिय। जब वह अंगोके के फूलने की क्रिया सम्पादित करने के लिए तयार थी। इसी समय बकुलावलिका ने कहा—

ना यह राग रग से भरा और जान लूटने योग्य तुम्हारे आगे ही तो पडा है।

कौन ? महाराज ?

अर महाराज नहीं। य है अंगक की गान्वा भ लटकन घात पत्तो का गुच्छा। ना दम बाना पर सजा लो।

मवाद मुनकर महाराज अपनी प्रमिका स मिलने क लिए यत्र हो उठ। जबर की प्रतीभा था। अपन विदूषक मित्र की सलाह पर वे मामने जा गय। मालविका न अंगक पर अपनी लान जमाई ही था कि उमे आय गौतम की बाणी सुनाई दी। बाता—

‘बन्धु स्त्री ! क्या हमार प्यार मित्र अंगार पर अपनी बाइ लान जमाकर आपन कोई अन्दा काम किया है ?

गोना न अमाक्षण एउ माय ना महाराज का दग्ना। मालविका ऋगई।

प्रतीहारो न सूचना दी कि मन्त्रीवाहतक को राजवाय के लिए महाराज की प्रतीक्षा है। वे महारानी से आना ले जयसेना के साथ प्रमदवन में जा गये। उधर नाग मुद्रा जडित झगूठी के सहारे गौतम ने मालविका व वकुला वलिका को माधविका के पहरे से छुड़ा लिया।

गौतम महाराज का वहीं ले गया, जहाँ मालविका तथा वकुलावलिका वठी महाराज के एक मित्र के सम्बन्ध में पारस्परिक बातें कर रही थी। महाराज को उनकी बातों से अपने प्रति मालविका के प्रेम की याह मिल गई। वे मानने आ गये। विदूषक और वकुलावलिका वहाँना बनाकर दूर ओझन हो गये।

नताश्रा और वक्षा की ओट में महाराज का मालविका से एकांत मिलन होता है। उसके अगो की प्रशंसा के वे पुल वाच देने हैं और उसे पान के लिए बढने है। मालविका पकड में आकर जपनको छुड़ाना चाहती है। उसके अग प्रत्यग की आभा का क्षण क्षण में व बिजली की चमक की तरह दबते हैं। एक प्रेम में अधीर है दूसरी लज्जावश ममपण में अममय। इसी परिस्थिति में दोनों ओट में आ जाते हैं—

दूमरे पाश्व सं रानी इरावती व निपुणिका जाती ह। उनके सवाद से यह स्पष्ट है कि जब रानी इरावती महाराज का पुन मनाने की फिर में हैं। इसी समय चेटी से उस सवाद मिलता है कि महारानी धारिणी की यह राय है कि अब उह महाराज से अत्रिक हटे नहीं रहना चाहिए। रानी इरावती इस प्रस्ताव से सहमत है। पर इसी अण एक ओर विदूषक गौतम को स्वप्नावस्था में बडबडान के देगती हैं। उसे डराने के लिए निपुणिका उम पर एक लकड़ी फेंकती है वह माप साप कहकर जाग उठता है। उस भयभीत देख महाराज कुज सं बाहर आते हैं। पीछे पीछे उह उस रास्ते से न जाने के लिए मना करती हुई मालविका आती है। पुन रानी इरावती से इनका साक्षात्कार हा जाता है। लम्बे व पीछे से प्रगट होकर रानी इरावती महाराज से पूछती है—

“कहिय। दिन में मिलने का संकेत करने वाले जाडे के मन की साध पूरी हो गई न ?”

महाराज बहुत कोणित करते हैं कि रानी की मनार्थ पर नु अब वह



फन रहे। इसी बीच मालविका व बकुलावलिका चल दी। रानी इरावती भी नाराज हाकर बनी गई। मित्र गौतम न महाराज को ऐसी परिस्थिति म यही सलाह दी कि वे भी तुरत चल दें। महाराज ने बात मान ली और वे चले गय।

परतु बहुत शीघ्र उपयुक्त घटनाओं की सूचना राजप्रासाद म पहुच गई। महारानी धारिणी ने रानी इरावती की मान मर्यादा रखन के लिए दासी मालविका को उसकी सहेली बकुलावलिका के साथ महाराज के प्रति प्रेम प्रदान के अपराध म काल-कोठरी म डाल दिया। नीचे के भंडार की रथिका माधविका को महारानी धारिणी की ओर से आदेश मिला कि वह उह उनकी अगूठी देखे बिना न छोड़े। महाराज को विदूषक गौतम ने बताया कि मालविका व बकुलावलिका को नाग कयाओ की तरह पावो म वेडिया डालवर एसे पाताललोक म डाल दिया गया है कि मूय की निरणे भी उन तक नही पहुच सकती।

महाराज मुनवर चिन्तित हो उठे। आखिर उनकी मुक्ति क लिए योजना बनाई गई।

प्रतीहारी से महाराज का मालूम हुआ कि महारानी धारिणी बयार बाने भवन म पलग पर बठी है उनके पाव म लान चन्दन नगा हुआ है और परिव्राजिका कया मुनाकर उनका मनवहलाव कर रही है ता व इस अत्र मर मे नाम उठान का माचने लग। जयमना का उठान आता दी कि वह उहें महारानी व पाम न बन। उहाने वहा पहुचकर मगरानी का मूय पूछा ही था कि विदूषक गौतम भी माप कायन की पीडा म कराहन वहा आपहुके। परिव्राजिका न साप म काट जिम्म का काट डानन जना डालने अपवा उमम म नहू निकान दन का मना नी। महाराज न तुरत राज वर ध्रुवमिडि का तुताने का आता दा। गौतम पीडा म चिन्ताता रहा। मरणागन व्यक्तन का तरह व महाराज का अपना मा की ममान दन नगा। उगन महारानी म भाभमा मागा नून म हुई भूता क लिए। ध्रुवमिडि आय। उहान गया वरतु क लिए माग की जिगम नाग मुद्रा जही हुई हा। महारानी न तुरत अपनी नाग मुद्रा स जटित अगूटा दनी। जगूटा नकर व उम पाना न घन महार ल गय। इसी क्षण

अधरा का आरवन्क राग से लाल किया और उन्हें पीनाभ लाहित वण देने के लिए लोत्र रणुजा से मना। पदतल तक उमन लाक्षा रग सरजिन किय थे जिससे प्रदर्शित युगीय सौंदर्य की प्रतीका वह बन सके। प्रसाधना न उसके सौंदर्य को वह श्रेी दे दी जा कल्पना मे भी कही अधिक मुदर थी। एसी परिस्थिति म यह निणय करना भी बहुत कठिन हो गया था कि प्रसाधना न उसके सौंदर्य का ही बढाया है जयवा उसके सौंदर्य के कारण प्रसाधना की श्रौवद्धि हुई है। दोना की एकरूपना ही इस रूपश्री का सफलता थी। रगशाला के हृदय म उनके मस्तिष्क मे उमकी सौंदर्य बिना बली क दृश्य ओरोपित हो गए थे और उनस जनायास मुक्नि पाना उनके लिए असम्भव प्राय हो गया था। नारी के रमणी रूप से—उमकी सौंदर्यश्री से वे इस प्रकार प्रभावित हो चले थे कि वे स्वयं चाहते भी नहीं थे कि वे उसके प्रभाव से सौन्दर्य क जादू से—मुक्नि पायें। सम्पत्ति रूप म अपनी इस अलौकिक प्राप्ति की व रक्षा ही करना चाहते थे। रगशाला की यह मानसिक स्थिति मच पर प्रदर्शित उस दृश्य भाग से चली जा रही थी जिमम महाराज व मालविका का प्रमद वन के एक कुज म एकात मिलन दिग्वाया गया था। इमकी आधार भूमि का गिलायाम तो कथित दृश्य के पहले ही मालविका के नृत्यमय संगीत गान के अवसर पर हो चुका था। रगशाला इस सौन्दर्य रस में मग्न थी कि मच पर कथावस्तु न पुन प्रगति प्रारम्भ की।

प्रमद वन की मालिन मधुरिका महारानी पर अगाक के फूलन क समाचारा की प्रतिक्रिया के सम्बन्ध म विचार कर रही थी कि उसी समय महारानी के रनिवाम का कुबडा मेवक सारमित्र लाव की छाप लगी हुई पिटागी लिए हुए आना दिखाई दिया। पूछन पर उससे उसे मानूम हुआ कि वह अश्वमेध यज्ञ के घोडे की रक्षा के लिए बनाए गए सनापनि राज कुमार धनुमित्र की रक्षा के लिए प्रतिदिन माग्य ब्राह्मणो को जो चारमी स्थण मुद्राजा के बराबर घन दक्षिणा म दिया जा रहा है इमे पुरोहिता का वितरण हेतु दन के लिए जा रहा है। उसीमे उम यह भी मालूम हुआ कि महाराज की विजयिनी सना ने यौरमन के मनापनित्व म विदम्ब के राजा का जीन दिया है और माधवमेन की भा मुक्नि करा दिया है। साथ ही दून क

साथ बहुत-न अनमाल रत्न हाथी घोड़े और बहुत अच्छे कलाकार मेवक महाराज के पास भेंट भेजे हैं ।

वतालिका द्वारा नेपथ्य में महाराज की प्रगति सुनाइ देती है । विदूषक गौतम से महाराज को सूचना मिलती है कि महारानी धारिणी न पडिता कौशिकी से मालविका का विवाह योग्य शृंगार से सज्जित करवाया है । साथ ही प्रतीहारी से उह सूचना मिलती है कि महारानी धारिणी ने फूल अशोक की शोभा देखने के लिए उह निमंत्रित किया है जिसमें उरसव सफल हो । महाराज को महारानी के साथ मालविका की उपस्थिति के समाचार भी इसी प्रतीहारी ने मिल जाते हैं । वे अपने गौतम के साथ यथा स्थान आते हैं । यहा विदुष से भेंटस्वरूप आई हुई कला जानने वाली स्त्रियां उनके समक्षपेश होती हैं । महारानी द्वारा मालविका को आना होती है कि वह कला की साधिन रूप में उन दोनों में से एक का चयन करे । पर ज्या ही इन आगन्तुकाओं की दृष्टि मालविका पर पडती है वे राजकुमारी ग० से उमका सम्बोधन करती हुई उसके गले मिल जाती हैं । इही से उपस्थित वद को मालविका का वास्तविक परिचय मालूम होता है कि वह विदुष कुमार माधवसेन की छोटी बहिन है । इ ही द्वारा यह भेद भी सुलता है कि राजकुमार माधवसेन के मंत्री सुमति उसे छिपाकर यहा लाय । घटना का रोप अंग सबको परिव्राजिका द्वारा मालूम होता है । उसके अनुसार मंत्री सुमति उसका बड़े भाई थे । माधवसेन की गिरफ्तारी के समय अवसर दय थे उसके तथा मालविका के साथ विदिसा की जाय चल कि राह में डाकूओं ने उन्हें आ घेरा । व्यापारिया के साथ चलने वाले सब रक्षका को उहने मार भगाया । उस विपत्ति में गन्धु के आक्रमण से घबराई हुई इस मालविका को बचाने के लिए अपने प्राण देकर सुमति ने अपने स्वामी का भार चुका दिया । डाकू मालविका को ल गय पर वीरमन ने उनसे उह छीनकर महारानी के पास भेज दिया । यहा दबी के पास आने पर वे परस्पर पुन मित्री ।

यही पूजे जायके के सहार बठ महाराज ने विदुष को दाना भादिया में विभाजित करा दिया । राजकुमार वसुमित्र की यचना पर महान् विजय के समाचार भी पत्र द्वारा सबको यहा मिल गय । सब प्रसन्न हुए । इस प्रसन्नता का उमकी चरम सीमा पर पहुचाने के लिए परिव्राजिका का गलाह से

मालविका का हाथ महाराजा अग्निमित्र के हाथ में दे दिया। नेपथ्य से भारत वाक्य सुनाई दिया—

‘जब तक अग्नि मित्र राज्य करें तब तक उनकी प्रजा में किसी प्रकार के उपद्रव जादि न हा—’ और यवनिका पतन के साथ ही दशक-दर्शिकाएँ अपने आसना में उठ बठे।

पटाभेप हाने ही पूर्णिमा वनप्रदा म अपने कक्ष की ओर चली। रग शाला पर ही उमर प्रगमना ने उन घेर लिया। साधुवाद की वर्षा होने लगी। प्रबन्धक की प्रगमन मुगाने उमे सवेत दे दिया था कि वह असफल नहीं हुई है। उमना उत्साहवन्ता। वह अपने कक्ष की ओर बचना चाहती थी पर रास्ता नहीं था। उसने देखा कि उस पर दूर ही में फूल बरसाय जा रह है। अनका हर्षो-मुख चेहरे उसे दिखाई लिये। अनेको प्रगसा के शब्द उसक याना म पडे। रग बिरमे मुगधित वामल मुमना की वर्षा से कुछ ही क्षणा म उसके गडे होन की भूमि ढक सी गई। किमी ने फूल बरसाये, माला दी किमी ने गुलन्स्ते का उपहार दिया। अनेक रूपा म प्रगसा उस पर बहाई जा रही थी। उत्तर म मुस्कराकर उसने सिक हाथ जोड दिय और मस्तक झुका लिया। प्रगसको के झुड म से उसे बाहर निवालयन क लिए आसिर प्रबन्धक किशोरीलाल को आगे बढना ही पडा। उसन बढकर एक हाथ से पूर्णिमा का हाथ पकड लिया और दूसरे हाथ से रास्ता बनाते हुए वह पूर्णिमा को पकडे पकडे ही उसके कक्ष की ओर बढ गया। उसकी गर जती हुई एक चेतावनी ने द्वारपालो को इस तरह सत्रिय कर दिया कि देखते देखते सार मन्त्रि व असदिग्य पकित रगशाला मे अलग कर दिय गय। प्रबन्धक महोत्य द्वारा पूर्णिमा अपने कक्ष म पहुचा ली गई।

विनेप वार्तालाप के लिय उपयुक्त समय व अवसर दोना ही नहीं थ, फिर भी प्रबन्धक महोत्य प्राप्त अवसर को निरचक नहीं जाने देना चाहते थे। कक्ष म एकात प्राप्त करते ही उन्होंने दोना कंधे पकडकर पूर्णिमा को एक पूर्णानार शीगे के मामने खडा कर दिया और स्वय उमकी पीठ पीछ खडे होकर मुस्कराने लगे। पूर्णिमा क लोठा पर भी उनके इम व्यवहार मे मुस्कराहट खेल गई। उमन सुना—

‘ पूर्णिमा ! त्म ममय तुम पूर्णिमा नहीं हो। यदि बुरा न मानो तो हृदय

की एक साध पूरी कर लू।”

“कहिये ?”

‘इतना समय कहा है मालविके।’ और साथ ही उसने पूणिमा को क्षणएक के लिए बाहा में जकड़कर उसके होठा वकपोल पर चुम्बना की बौद्धार-सी लगा दी। पूणिमा को आपत्ति अवश्य होनी चाहिए थी, परन्तु प्रबन्धक ने उसके लिए कोई समय ही नहीं दिया। पूणिमा ने अपन आपको छुटाया, उसका पहल तो वह उसके अधर का अपना आखिरी विलंबित चुम्बन ले चुका था।

‘छि ! यह क्या ?’

‘अब कुछ नहीं पूणिमा। मालविका के हुस्नो गवाव न मेरी हानत ही खराब कर दी थी। अब सब ठीक है। कहिये चाय भेजू या काफी ?’

मुझे कुछ नहीं चाहिये। मैं जाना चाहती हू।

यह कैसे हो सकता है ?’

इतने में ही कक्ष के द्वार पर खट-खट की आवाज हुई। उत्तर मिला—  
आ जाओ। पाशाकी अदर जा गया। कक्ष के द्वार पर अनेका व्यक्ति खड़े थे। पूणिमा के नाम की सकेत पटिया न उह यही खड़ा कर दिया था। ‘प्रवेश निषेध के विद्युत्तमय लाल सकेत से वे और जाग बदन में जल मथ थे। पाशाकी के अदर प्रवेश करने के बाद प्रबन्धक महोन्मय पूणिमा के कक्ष से घाहर निकले। उ होने तुरन्त अपन विशेष कमचारी को अपने कमरे में चाय के प्रबन्ध की आज्ञा दी। पुन प्रवेश के लिए उ होने कक्ष के द्वार को खटखटाया, परन्तु उत्तर मिला—

‘क्षमा कीजिये। चेंज कर रही हू।’

‘कोई बात नहीं। चाय यहीं भेज दू या आप आ रही हैं ?’

अच्छा है, यही भेज दीजिये।

‘फिर भी आपको बिना मिले जाना नहीं है।’

“ठीक।”

कितनी देर लगेगी ?’

साधारण।

‘बहुत ठीक।—मैं आदमी भेज दूंगा।’

सम्मान का समयन किया।

रात्रि बीत रही थी। प्रबन्धन महोत्सव उपस्थित बन्द को उनके कला प्रेम के लिए अनेक धन्यवाद दिये और उनसे आज्ञा लेकर वह पूर्णिमा को साथ लेकर रगभूमि की सीढिया उतर गया।

‘रगभूमि के बाहर अब भी पर्याप्त भीड़ थी। रह रहकर पूर्णिमा का नाम जोर जोर से पुकारा जा रहा था। क्षण-क्षण में जावाजें आ रही थी कि पूर्णिमा से साक्षात् किये बिना वे नहीं हटेंगे। प्रबन्धक और पूर्णिमा दोनों ने ही मुना कि एक मिनट के लिए ही सही पर पूर्णिमा का उनके सामने आकर एक बार खड़ा होना जरूरी है। दानो ने ही महसूस किया कि जनता की इस आत्मा के पालन किए बिना उन्हें रास्ता नहीं मिल सकता। क्षण भर की अपनी असमझस की स्थिति में उहाने मुना—

कला केवल धनवानों की वस्तु नहीं है—कलाकार से सम्पर्क बढ़ाने का क्षेत्र उन्हें ही अधिकार नहीं है।’

प्रबन्धक महोत्सव को प्रस्तुत परिस्थिति में अपना निणय लेने में देरी न लगा। उसने एक उच्च स्थान पर खड़े हाकर जोर से पुकारा—

सुध्री पूर्णिमा आपका अभिनन्दन स्वीकार करने के लिए उपस्थित है। उसके लिए रास्ता और स्थान चाहिए।

कुछ ही क्षणों में तुमुन कालाहल के बीच रास्ता और स्थान खाली हो गया। पूर्णिमा एक उच्च स्थान पर प्रबन्धक के आदेश से खड़ी हो गई। हाथ जोड़कर उसने उनके तुमुल जयनाद और अभिनन्दन का उत्तर दिया। अब तक उसकी मोटर रगभूमि की पडियों के पास आ लगी थी। कई कमरे इस बीच बिलक कर गये। सारा वातावरण पूर्णिमा के नाम और जयसे गुजित हो उठा। इस घोष और गुजन में ज्यो ही उतरकर वह अपनी कार में बठी चासक जम तज रपतार से गतय पथ पर ल चला।

पूर्णिमा अपने बगले पर पहुँची उस समय तक काफी रात बीत चुकी थी। यहाँ पहुँचने के बाद उसने साने में और विलम्ब करना मुनासिब नहीं समझा और यथाशीघ्र वह अपने साने के कमरे में चली गई। परंतु वस्त्र उतारने और सोने की व्यवस्था करने में उमने जितनी जल्दी की उतनी जल्दी उसे नींद नहीं आई। अपनी सफावता प्रणामा व प्रभुत्व के दृश्य रह

रहकर उसके मानस पट पर चक्कर लगान लगे । साधुवाद और जयनाद के नार बराबर उसकी श्रवणेंद्रिया को कपित करते रह । अपनी ही इस कहानी को देखते सुनते रात्रि के अन्तिम पहर में आखिर निद्रादेवी ने उसे अपनी गोद में आश्रय दे दिया ।

टेलीफोन की घटी की एक विलम्बित टण टणात न सवेर पूर्णिमा को अपनी नीद में जगाया । सेविका ने उनके जागने पर समाचार दिय कि मूर्योदय के पहल से ही अनेको फोन उसके नाम आ चुके हैं । अधिक अभ्यस्त न हाने पर भी जब वह इन सन्देशों का महत्व समझ सकने में समर्थ थी । उसने राधा को आज्ञा दी कि जब तक वह चाय न पी ल किसी सन्देश को ग्रहण ही न किया जाय । एक किनारे पड़ा फोन क्षणा के विराम से बार-बार बजता रहा मगर किसी न उस पर उपस्थित होकर बात करन की चेष्टा तक न की ।

राधा ने कुछ ही क्षणा में पूर्णिमा के लिए चाय बना दी और उसे उसके आगे लाकर रख दिया । दो प्याले चाय गले से नीचे उतारने के बाद वह पलग से उतरी और अपने आकार के एक शीश के सामने जाकर खड़ी हो गई । उसने नजर भरकर ऊपर से नीचे तक अपनेको देखा । एक-दो अगड़ाई ली और फिर मुस्कराकर हाथ नीचे गिरा लिए । रह रहकर अब भी घण्टी की आवाज उसके कानों में आ रही थी । उसने राधा को पुकारा । बोली—

‘एक कापी और पैसिल से लो । फोन पर जो जो साहब बोलें व बात कहें यह उस पर नोटकर लेना । मुझे स्नान आदि में निवृत्त होने में अभी एक घण्टा लगगा । ऐसा न हो कोई परिचित बुरा मान ले ।’ और इतना कह बह अपने नित्य-नैमित्तिक कर्मों में सलग्न हो गई । राधा यथा आना फोन के पास सन्देश ग्रहण करने बैठ गई और पूर्णिमा निवृत्त होकर आई तब तक उसने उसके लिए अच्छे खाने सन्देश इकट्ठे कर लिए । राधा की मुस्कराहट से ही पूर्णिमा समझ गई कि सन्देश काफी दिलचस्प हैं । अपनी प्रतिक्रिया को तो पूर्णिमा ने हमकर प्रदर्शित कर दिया । उसने राधा का आना दी कि फोन का सम्ग्रह उसके बठन के कमरे में लगे फोन से संयोजित कर लिया जाय ।



वह अपने बठने के सुसज्जित कमरे में जाकर एक साफे पर बठ गई और पास ही पड़ी भंज पर पड़े अखबारा को देखन लगी। जब तक फोन पर सीधा सम्बन्ध उसके इस कमरे में रहे फोन से हो गया था। उसके मुखिल से एक अखबार के पाच सात पान इधर उधर उलट्टे-पलट्टे हाथों विलम्बित घण्टी की पुकार न उसे पुन अपनी ओर आकर्षित करना प्रारम्भ कर दिया। उसने पास ही रखे फोन का उठा लिया। वाली—

‘जी ? उसने सुना।

‘देवी पूर्णिमा से बात करना चाहता हू।

पूर्णिमा ही हू। फरमाइये।’ वार्ता का सिलसिला शुरु हो गया।

‘मैं एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात बरना चाहता हू।

‘फरमाइये।’

एक प्रस्ताव है।

जी।’

‘बहुत महत्वपूर्ण।

‘जी।

‘उससे मेरे और आपके जीवन का सम्बन्ध है।’

‘आने।

‘आपका मजूर है ?

‘कहिये न।

‘सबसे पहल मैं आपको आपके रात के प्रदर्शन के लिए बधाई देता हू।’

‘शुक्रिया।

‘मुझे अपनी बात कहने के लिए समय चाहिए।

‘अभी समय क्या है क्या ?

‘एक आत भी चाहिए।

‘यह भी तो है।

साक्षात्कार अविक्रम जपसित है।

पूर्णिमा के चेहरे पर मुस्कं राहट प्रहसित हा उठी। ऐसे चरित्र उसका जीवन में शायद कई जा चुक थे। उसके लिए ऐसी क्षणवलि भा कोई नहीं

नहीं थी और न विनोय महत्त्व ही रखती थी। उसने उत्तर दिया—

“जनाब का बात का सर पाव तो कुछ जानू।”

‘मैं एक प्रख्यात उद्योगपति का पुत्र हूँ।’

“जी।”

घनवान हूँ, जवान हूँ, शिक्षित हूँ।”

“जी।

‘अच्छा खानदान है।

“जी।

‘चरित्रवान हूँ।

‘बहुत खूब।

जी यह सब होते हुए भी अभी तक जविवाहित हूँ।

‘जागे।

‘मैंने अभी इसी डाक से एक पत्र और अपना पूरे आकार का एक चित्र आपकी सेवा में भेजा है।”

‘शुक्रिया।

भर दिल का सिंहासन आज भी खाली है।’

“खाली स्थान में अक्सर दातान का प्रवेश हो जाता है, जनाब।”

उम्मी का टर है देवीजी।”

‘सो।

‘उसमें मैं आज किसी को बिठादना चाहता हूँ।

बिठाइये न फिर।

आपका सहायता चाहिए।’

‘जी।’

“मजूर है आपको ?

जी ?’

मगर दूसरे ही क्षण पूणिमा ने सुना—

‘बात हुई या नहीं मडम ?’ पूणिमा आपरटर की आवाज पहचान गई। उसने उत्तर दिया शोक से बन्द फरमा दीजिये। उमन फोन रग दिया और खूब जार से हसन लगी। मगर, दूसरे ही क्षण पुन घण्टी बजी।

उसने फोन उठाया। सुना—‘कृपया सुनिये। बदल कर देने पर क्या-क्या सुनना पड़ता है। जी। पूर्णिमा न सुना—

जी के वक्ता ! मेरे जीवन का सवाल है। चलती बात को बीच में काट देने का तुम्हें क्या अधिकार है ? मैं शिकायत करूँगा। स्वतंत्रता के युग में यह हरकत बदारत नहीं की जा सकती। हजारों रुपये हर साल हम सरकार काते हैं। मगर इसलिए नहीं कि हमारे सारे काम खराब हो जायें, हम बर्बाद हो जायें। मुझे पूर्णिमा चाहिए। अभी अभी वक्त। मैं और क्रुद्ध नहीं जानता। पूर्णिमा से बात कराओ। सुनाया नहीं ?

पूर्णिमा ने परिस्थिति व पूर्ववक्ता के स्वर को पहचान लिया। उसने स्वर सयत करके कहा—

जी। यह पूर्णिमा है।

बातचीत में एकावट के लिए क्षमा प्रार्थी हूँ। ये ‘आपरेटस बड वेवकूफ और बन्तमीज होते हैं। पर एव ही डाट काम कर गई। हा, तो मैं समझूँ कि आपका स्वीकार है।’

‘आप स्पष्ट नहीं हैं। मैं कुछ भी नहीं समझी।

‘मेरा स्वर स्पष्ट नहीं है ?

‘आपकी बात स्पष्ट नहीं है।

मैं मिलना चाहता हूँ। मुझे मुचाकात के लिए समय दीजिये। अभी तो इतना ही कहना चाहता हूँ कि कल रात्रि के आपने प्रश्न को देखने के बाद मेरी हालत अच्छी नहीं है। एक क्षण के लिए भी मुझे नींद नहीं आई है। मैं प्रेम करने लग गया हूँ। हृदय के खाली सिंहासन पर

बात समाप्त हुई या नहीं मडम ?

मुझे यह शरस नहीं चाहिए। कृपया कह दीजिये कि नम्बर ‘इगेड है।’

पूर्णिमा ने फोन रख लिया। उम फिर हसी आ गई। वह उठकर खड़ी हो गई और किसी विचारधारा में स्मित रेखाओं को मुह पर धारण किये कमरे में ही इधर उधर घूमने लगी। बठने के इस कमरे से बगले के प्राय सभी कमरा में प्रवेश किया जा सकता था—यानि यहाँ सबन अन्तर प्रवेश की व्यवस्था थी। घूमते घूमते उसने अपने शयन-कक्ष की आर पाव

बढ़ा दिया और सहज भाव में शीशे के सामने जाकर खड़ी हो गई। नारी का रमणी रूप अब उसके सामने था। इधर कई दिनों में उसकी यह जादूत हो गई थी कि जब भी कोई विचार या घटनाएँ उसके मस्तिष्क में चक्कर लगाने लगते वह उनका समाधान शीशे में अपनी ही प्रतिछाया से विमश करके करने की चेष्टा करती। एक लम्बे अरसे से उसका यह अनुभव था कि पुरुष नारी के किस रूप पर प्रभावित होकर उससे क्या क्या चर्चा करने हैं। अभी अन्तर इतना ही था कि वह एक प्रसिद्धि के विशिष्ट स्तर पर थी और इसलिए विशिष्ट पुरुषों का ही एक असाधारण स्तर पर उससे वार्तालाप होना था। यह उससे किसी रूप में छिपा हुआ नहीं था कि विषय याचना वही पुरातन है। मनातन कामना का परिवर्तित रूपमात्र है।

पूर्णिमा के लिए यह अनुमान करना सट्टा था कि कम से-कम आज का दिन उसका लिए बहुत व्यस्त होगा। परिचित अपरिचित, गम्भीर मनचल—सभी बघाई के बहाने उसके यहाँ जाने और औपचारिक चर्चा करने का अधिकार ले सकते थे। यह मानते हुए अपनी मानसिक शक्तों का समाधान तुरन्त अपने मन में कर लिया और अविनम्य ही पुनः वह अपने बठने के कमरे में आ गई।

अब तक अनेक व्यक्ति उसका द्वार पर उपस्थित हो गये थे। उसने अपने कमरे का दरवाजा खोल दिया और एक प्रहसित अभिवादन के साथ समस्त उपस्थित बन्धु-बन्धुओं को अदर आने के लिए आमन्त्रित किया। वह जानती थी कि इस समय उनमें से किसी का भी कोई विशेष काम नहीं हो सकता था और वे सब उससे परिचय स्थापित करने अथवा पूर्ण परिचय की कड़ी का और सुन्दर बनाने के लिए ही आये हैं। पूर्णिमा से साक्षात् होत ही किसी ने धाई, किसी ने गुलदस्ता, किसी ने अखबार और किसी ने कुछ उसको टेंट करने के लिए आगे बढ़ाये। सबके बठने बिठाने के बाद पूर्णिमा बोला—

‘आप सबने बड़ी तत्कालीन फरमाई।’

एक बोला “यह तो हमारा फज था।” गुलदस्ता लाने वाला बोला—

सिवाय चन्द फूलों के देवी के लिए हमें तो और कोई सुयोग्य भेंट गहर में लिखाई ही नहीं दी। इस कबूत फरमाइय।

क्या बात कहा है। भइ वाजी मार ले गये। क्या गायराना बात कही है।'

अपन रात के प्रदग्गन क लिय दवी धयवाद को पात्र हैं। मैं अपन चन्द साथियो के साथ प्रेस गलरी म था। निमन्त्रण मिना तब तक तो हम कम-से कम में यही सोचता था कि आज यहाँ कालीदाम की मिट्टी पलीत होनी है। रगगाता पर पढ़चन पर कुछ कुछ महसूस करने लगे कि कुछ और बात है। बाह्य आकषण ही हमारे विचारा मे कुछ तो परिवर्तन ले जाया था। हम एक अच्छ और कलापूण प्रदग्गन की आशा रख सकत थे। रगशाला म प्रवेश करत-करत हमारी जाशा और भी मुदढ हो गई। प्रदग्गन प्रारम्भ हुआ। मच पर दवा के जाने तक बगबर एक आकषक निलम्बन कायम रहा। जा भूमिका दवी के मच पर प्रवेश के लिए स्थापित की गई थी बहुत कलापूण थी। दवी आइ ता महसूस हुआ कि स्वय सर स्वती अवतरित हुई है। यौवन मोदय कला का एक अभिनव सगम दवी के उस रूप म प्रहमित हो उठा। दशक स्त-ध थे। प्रतियोगिता क दश्य म तो हर वस्तु अपनी परावाष्ठा पर पढ़च गई। देवीजी! सच बात ता यह है कि हमार उस समय के हर भाव को हम पूणतया ग-दा म प्रबत नहीं कर सकते। इम समय भी लबी के सामने अपने भावो को, उस स्वर्गीय आनंद का पूणतया व्यक्त करन म असमथ हू और एक शम महसूस करता हू कि क्यो मैंने अपने जिम्म अदाग्य हाते हुए भी देवी के अभिवादन का कत्तव्य ले लिया। इन पत्र पत्रिकाओ की चन् रखाए कुछ जशा म हमारे अभिवादन की प्रतीक है। इह स्वीकार फरमाए।

और यह कहने हुए वक्ता न कुछ पत्र पत्रिकाओ की प्रतिया पणिमा के हाथ म रख दी। पणिमा क मुह स ग-द निकल—

किन ग-दो म आपका शुत्रिया अदा कर समझ म नहीं आता। यह सब ता प्रब धका का प्रयास था जो कुछ जशो म सफल हुआ। जापकी भट्टरवानी कि आपने हम सयका नवाजा। जापने जो कुछ भा लिखा उसके लिय ध पवाद। खूबी तो मट्टाकवि कालीदाम की है जिसने हम सबको आप तक पढ़चान का अवसर दिया। यदि आप सबकी मदद रही तो हम सौभ भा टुनिया म रहने लायक जीन लायक हा आयेंग। मेरा ता यह पढ़च

ही प्रथम है कि '

और इस प्रथम प्रथम न ही जादू का सा असर किया है। जादू वह जो मर पर चक्कर बोलता है। आपके प्रथम प्रदर्शन के बाद ही सारे शहर में आपकी शोहरत का डका बज उठा है। स्कूल, कालेज, खेल के मैदान, घूमने के उपवन, गली, बाजार, घर—बाईं जगह ऐसी नहीं है जो आपके नाम और शोहरत से गुजित न हुई हो। रात के प्रदर्शन के बाद कम्पनी की विज्ञप्तियों और विज्ञापना में एक नय अध का संचार हा गया है। स्कूल के बच्चा न आपकी तस्वीरों दीवारा में उतार उतारकर उनसे अपनी जेबें भर ली हैं। मैं स्वयं देखकर आया हू कि 'फोटोग्राफ' व तस्वीर फरोशों का दुकानों पर आपकी तस्वीरों के लिए 'बनू लग खड़े हैं।'

एक ने पूछा—'आपने भी कोई तस्वीर लन की कोई कोशिश की ?

'क्या नह। अवश्य। यह दखिय। और इतना कहते हुए उत्तरदाता न अपनी जेब से सचमुच ही एक पूर्णिमा की फोटो निकालकर प्रदर्शित कर दी। वह आगे बाला—

'परंतु देवीजी इसकी तब तक काइ कीमत नहीं है जब तक इस पर आपके 'फोटोग्राफ' न हो जायें। स्कूल, कनिज के छात्र-छात्राए आपके प्रशंसक। में सबसे अधिक हैं। उह जैसे अपन पय प्रदर्शन के लिय कोई अद्वितीय 'हीरादन' मिल गई है। शहर की आम मुख्य मडका पर आज कल में ही आप स्वयं दखेंगी कि जफमरा और मम्पन्न परिवार की बहू-बेटिया आपकी रचना में ही अपने-आपका बनाकर बाहर निकलेंगी। यदि हमारे में स किसी को आज ही शहर के 'फोटोबन कलत्रा में जान का अवसर मिला ता मैं निःसंशय कह सकता हू कि हम वहा देवी द्वारा अभिनीत मालविका की रूप-सज्जाम अनक औरतों का पायेंगे। शहर के शबिस्ताना में कॉलेजों में, बिहार-स्पता में, हाटला व प्रमोदगृहा में ही नहीं, बल्कि सम्पन्न परिवारों के सुरक्षिपूण सजे डाइग रुम्स में भी कुछ दिना में देवी पूर्णिमा द्वारा प्रदर्शित मालविका की प्रतिरूपिकाए हमें दखने को मिलेंगी। मुझे निश्चय है कि देवी द्वारा चलाया हुआ मालविका 'फगन' अब फले पून बिना नहीं रहेगा।'

'आप भी क्या बात करने हैं ?'

“सच कहता हूँ देवीजी ! युवक और विद्यार्थी मगठना का इन्हा कुछ वर्षों में संचालक होने के नाते मुझे इन सब स्थानों का अच्छा-बुरा अनुभव है। मैं जानता हूँ कि किस तरह फेशन शुरू होता है और फलता है। आप स्वयं अनुभव करेगी कि किस तरह आपकी अभिनीत भूमिका की प्रति मूर्तियाँ सृजित भाव से बहुत कम अरसे में शहर में विस्तृत रूप में फली हुईं मिनेगी। देखते देखते बहुत जल्दी मालविका का केश वियार का चलन शुरू हो जायगा। मालविका की पोशाकों से डसस और आउटफिट्स की 'गाविण्डोज़' सजी हुईं नज़र आयेंगी। नारी के वे जग जिन्हें आपने छियाया नहीं प्रदर्शित न करना आधुनिक सम्य समान के लिये एक हेय और अरुचिपूर्ण स्थिति नमभी जायगी। सचमुच आपने सम्यता को एक नया मोड़ दिया है। आधुनिक युग वर्षों आपका इसके लिये आभारी रहगा। युवक और विद्यार्थी सधों के प्रतिनिधि की हैसियत से मैं आपका आपकी अभिनव कला के लिये मुबारकवाद पेश करने हाज़िर हुआ हूँ। साथ ही समय चाहता हूँ कि आप हमारे सध कायालय में चलकर हमारे अभिनव का स्वीकार कर हम अनुग्रहीत करें।

आपने महारानी परमाद उसके लिये फिलहाल माफी चाहती हूँ। मेरा समय अपना नहीं है। कहीं जान के सिलसिल में मैं स्वतंत्र भी नहीं हूँ। मरी मजदूरी को आप बुरा नहीं मानेंगे।

एक क्षण के लिये अपनी और देवी की तबज़ह चाहता हूँ। अधिक समय नहीं लूंगा। मैं हमारे देश के सबसे बड़े रूप सज्जा सम्बन्धी कारखानों का प्रतिनिधि हूँ। हमारे विनायन विभाग के प्रबन्धका ने मुझे जाना दी है कि देवी की सेवा में हमारे कारखाने की कुछ प्रसिद्ध प्रसाधन वस्तुएँ प्रस्तुत करूँ। बाहर पड़े हुए बक्सा में साबुन तेल, पाउडर क्रीम, कजल, लिपस्टिक आदि कई ए०—वन क्वालिटी की चीज़ें हैं। आप इन्हें कबूल परमादये। साथ में कुछ सर्टिफिकेट्स लाया हूँ। इन पर आप अपने प्राफ़स दरर कम्पनी का कृताय करें। और यह कहते हुए उसने कुछ कागज़ पूणिमा के जाग कर लिये और अपना पत्र खालकर उसके हाथ में धमा लिया। पूणिमा ने उड़ पड़ा। सम्बन्धित प्रतिनिधि बोला— कोई विशेष बात नहीं है देवीजी। आपका प्रश्न की रस्म मात्र है। आपके नाम और

वत्र के साथ इन वस्तुओं के जुड़ जाने में इनकी कीमत बढ़ जायगी। आपकी शौहरत तो होगी ही, हमारी कम्पनी की निर्मित वस्तुओं में एक और नया आकर्षण आ जायगा। अपना दस्तखत देने में आपका विशेष विचार की आवश्यकता नहीं है। पूर्णिमा ने इस प्रतिनिधि द्वारा आगे बढ़ाया हुआ पत्रों पर दस्तखत कर दिये। उसने मुना—“अनेक अनक धयवाद !—मुझे अब आना हो। और यह कहते-कहते उसने सभालकर उन पत्रों को अपने थल में रख लिया। परन्तु पूर्णिमा बोली—‘मेरी प्रार्थना है कि आप सब लोग चाय आन तक ठहरें।’ और यह कहते हुए वह कुछ देर के लिए अपने भीतरी कमरे में चली गई।

एक दो-व्यक्ति अभी ऐसे और बैठे थे जिन्होंने अपने आन का मत-य व्यक्ति नहीं किया था। पूर्णिमा के भीतर चले जाने के बाद इन आग-तुला की पारस्परिक वातचीत से उन सबको यह स्पष्ट हो गया कि वे किसी स्थानीय कला-संस्थान के सदस्य हैं और पूर्णिमा का मुवाचिकवाद पक्ष करने और अपने संस्थान की माननीय सरभिका बनाने की प्रार्थना करने आये थे। पूर्णिमा के पुन आते ही इनमें से एक अपने स्थान पर खड़ा हो गया। कुछ अपने संस्थान का साहित्य पूर्णिमा को पेश करते हुए बोला—

‘आप इस धाड़े से साहित्य को अपने एकान्त समय में पढ़ने की कृपा करें। हमारे कला-संस्थान की उत्पत्ति, प्रगति व स्थिति का कुछ ‘पुष्प परिचायक है। हमारा सब यह प्रयास रहा है कि नगर का कोई भी महान कलाकार हमारे संस्थान से दूर न रहे। विभिन्न कलाओं के उपासकों की मगम-स्थली हमारी यह संस्था रही है। आज तक हमारा यह सौभाग्य रहा है कि किसी भी महान कलाकार ने हमारा आहार अल्पाहार स्वल्पाहार स्वागत अभिनन्दन अम्बीकार नहीं किया। बल्कि हमारे गुण-प्राप्तियाँ, कला प्रेमियों व प्रशंसकों से मिलकर सबको असीमित खुशी हुई है। अपने दो अथ साथियों की ओर संकेत करते हुए यह बकना बाना—‘आप मरे साथ हैं। हमारी संस्था के सबारक सन्स्य हैं। इन्हीं के अथ-महयोग से हमारा संस्थान अपनी स्थिति को सभाले हुए है, जीवित व फलित है।

‘आप सबसे मिलकर बड़ी खुशी हुई। तशरीफ रखिय।’

अब तक सेविका चाय का सट ले आई थी। पूर्णिमा ने चाय बनाकर



एक एक को अपन हाथ से पकड़ाई। सब पीने लगे। शान्ति में चुपचाप गाना पीना जाधुनिक सभ्यता की निशानी नहीं है। परिस्थिति को आधुनिकता में परिवर्तित करने के लिए व्यापारिक फर्म के प्रतिनिधि महोदय बोले—

“जिस शिष्टता व आत्मीयता से देवी ने हमारा सम्मान किया है वह हमारे लिए जीवन की एक याद रहेगी।’

“बिलकुल ठीक फरमाया आपने। दूसरा बोला।

“सम्मान तो मुझे दिया है आप सबने। चाय के पानों की आप सबको कोई कमी नहीं है यह मैं अच्छी तरह जान सकती हूँ। आपका शुक्रिया कि आपने मुझे कबूल फरमाया।’

अब तक चाय पी जा चुकी थी। आग-तुको की उठने की इच्छा नहीं हो रही थी, मगर उठाने देखा कि कुछ नए व्यक्ति और आ रहे हैं। पुनः मिलने की साधन बनते हुए एक औपचारिक सम्मान की अभिव्यक्ति के माध्यम से उठकर चल लिये।

“बघाई है।

अब किस बात की ?”

‘सुबह-सुबह बघाइया बटोरने की।’

‘यह तो आपकी मेहरबानी है।’

ऐसा अवसर तो हम खुदा के मेहरबान होने पर भी नहीं मिला।

‘क्या मतलब ?’

“इतनी बड़ी कलाकार साधारण अर्थ को भी नहीं समझती।”

“आपके मुह से कभी साधारण बात निकलती भी है ?”

‘मैंन कहा वह तो साधारण गृहस्थ का रान दिन का किस्मा है।’

यानी।’

रान तिन घरों में बच्चे पदा नहीं होते।

“ओह ! पूर्णिमा हमने लगी। मनेजर साहब बोले—

‘खुदा जत्र बहुत ज्यादा मेहरबान होता है तब वह गृहस्थ में बच्चा देता है। परिवार बान, परिचित, अपरिचित भी सब बघाई के लिये आते हैं मगर इस तरह इतनी बड़ी तादाद में दौड़े हुए नहीं। उठने से पहले ही आज तो जन सारे शहर ने ही नाक में दम कर दिया। यहा आया तो वही हाल यहा देखता हू। देवी पूर्णिमा ! उम्र भर नाटक कम्पनिया चलाता आ रहा हू। मगर कल रात जो सफलता मिली है वह जीवन की एक सुखद याद बनी रहगी। और उसका सब श्रेय मैं आपका देता हू।’

अपना स्थिति तो मैं जानती हू। श्रेय आपको है या उस ईश्वर का।

‘ईश्वर यदि यह जीवन, रूप, लावण्य, आकषण नहीं देता तो मैं बिचाग किम वाग की मूनी था। मर ! अब इन बातों में अधिक उलझने की जरूरत नहीं है। कहिये प्रोग्राम क्या है ?’

‘मैंन अपना प्रोग्राम बनाया ही कब है ?’

‘घायल आज काई बना गया हो ।

‘आनेवाना म काई मनेजर साह्य नही थे ।’

‘आह ! औरय भव क्या हैं । पड़े हुए डिब्बा की जोर इगारा था ।

‘ताहफ ! उपहार ।’

‘फिर हमारा गुजर कैसे होगा ।’

‘य आप ले जाइय ।

और आपव तो जोर आ जायेंगे ।’

न थे फिर भी काम तो चलता ही था ।

‘इन सबको अब हमारी तरफ म रामभ ला ।

“मैं तो पहले भी आपकी ही मेहरबानी समझती थी ।

वहुत अच्छा । चाय उन लोगो के लिये ही थी या हमारे लिय भी कुछ बची है ?

‘आपव हुआ की देरी थी । पूर्णिमा उठी मगर उसका अचल पत्र बने हुए मनेजर महोदय बोले— तुम्हारी राधा को आवाज दे लो । वही ल आयेगी । क्षणख बिराम कर मनजर किशोरीलाल बोले—

सम्भव यही है कि आज मडम को अपनी डाक से फुसत न मिल । अब यह पत्र पत्रिकाओ का सिलसिला चलेगा । इन पर विशेष ध्यान नही देना चाहिये । न जान कौन कौन किस किस मतलब स लिखते हैं । कुछ हम लिखवाते हैं । कुछ हमसे आशा रखते हुए लिखते हैं । पत्र पत्रिकाओ के पान भरने के लिए भी कुछ लिखा जाता है । कुछ हमसे कुछ आपसे सपक बढ़ाने के लिय भी लिखेंगे । यह सिलसिला तो अब चलता रहेगा ।

‘मुझे क्या करना है ?’

‘पहले चाय पिलानी है । यह लो वह तो आ भी गई । इसे बनाओ ।’  
पूर्णिमा चाय बनाने लगी ।

“मैं जो कहने के लिये जाया था वह यह था कि मडम को अब चाहे जिस व्यक्ति अथवा सस्था का आमरण निमन्त्रण नही स्वीकार करना चाहिये । मेरे कहन का मतलब यही है कि उचित अनुचित का नियम इस सम्बन्ध म मडम को नही बल्कि इस खाकसार को करना है । स्पगल सीट पर बठे हुए कुछ जवान कुछ बुडने से एक खूबमूरत व्यक्ति पर तुम्हारी

नजर कल रात ज़रूर पड़ी होगी। इण्टरवल क वाद से ही मर पाछ पड गया कि तुम्हार से उमकी मुलाकात कराऊ। वस बडा अच्छा जादमी है। वही जिसने अपने हाथ की अगूठी खोलकर तुम्हारी अगुनी मे पहना दी थी। अच्छा-खासा धनवान है। काफी खचू खाऊ है। नौकर चाकरा की पूरी बटेलियन साथलेकर चलता है। अकेला मुलाकात करन नहीं आएगा। बिना कुछ दिये वापस नहीं जायगा। यह उसकी आदत है। हम उसस बनाकर रखनी है। बिगाडनी विलकुल नहीं है। नाटक मिनमा के धंधा म सौभाग्य हुवा और पानी की लहरा पर नाचता है। उनक नाचे, जाग पीछ कोई ठोस जमीन नहीं होती। जो बात इस घात्रे के सम्बन्ध म सत्य है वही इससे सम्बन्धित व्यक्तिमा पर भी लागू होनी है। पूर्णिमा न चाय का प्याला भनेजर महादय को पकडा दिया। वह ध्यानपूर्वक उसकी बात सुन रही थी। उसकी वाता न एक गम्भीर छाया उसके मुह पर ला दी। दो एक 'सिप चाय के प्याले से लेने के बाद वह पुन वाला—

“शैवत सौन्दर रूप, सावण्य, सरल और प्रचुर स्वभाव सब प्रकृति की दन है परतु प्रकृति ने इहें जितका दिया है उनके लिय स्थाया नही बनाया। प्रकृति के अलावा और भी सामाजिक राजनतिक, आर्थिक आदि अनको परिस्थितिया हैं जो प्रकृति की इन खूबिया का प्रभावित करती है। इसलिये बुद्धिमानो इसीम है कि व्यक्ति का जब सुअवसर मिल ब् उसका अपने भविष्य के लिये सन्तुषयाग कर। मैंने पहले भी मकेन किया ह और अब भी कहता हू कि देवी को अपने सुन्दर स्वास्थ्य और सरल स्वभाव की अपने भविष्य के हितो के लिए सुरक्षा करनी है।

श्रीमान का सहयाग हो फिर न।’

“हमारे लिए तो सहयोग देना अनिवाय है। कारण हमारा स्वाथ तो आपके व्यक्तित्व के साथ सयोजित है। भनेजर महोदय ने चाय क प्यात को छाती करत हुए उसे मेज पर रख लिया। वे बोले—

‘मैं फोटोग्राफर को कहकर आया हू कि वह कुछ नये चित्र आपके जाज हा तयार कर द। उन पर आपके दस्तखत हा जायेंगे। फिजूल बातन नहीं हैं फिर भी हांगा वितरण ही खास-खाम जगह। अभी ग्यारह वजे हैं। आप तयार हो जाए। एक बने रिहसल है। दूसरा-नीमरा खेल हमन और

एनाउम कर दिया है। खच बहुत है, पूर्णिमा देवी ! जब तक हम और आप सब मिलके काशिश नहीं करेंगे तो काम नहीं चलेगा। हम पूजी को आर्कषित करना है। वही से आए कोई भा लाए। आई हुई को ठुकराता नहीं है। त्वि अपने काम में खना है। ये बातें 'मडम तुम्हे इसलिए कहता हूँ कि तुम मरे सकेता को स्पष्ट समझ सको मेरे प्रचालन का आययन कर सको।

अनीय बातें हो ही रही थी कि डाकिय ने कुछ पत्र पूर्णिमा के नाम के मनेजर विशारीलाल के हाथ में पकड़ा दिया। डाकिये के कमरे से बाहर चने जान के बाद मनेजर महादय ने पूछा—

'जानती हो इनमें क्या है ?'

कमे कोई जान सकता है ?

'यही तो बात है !

फिर बताइये पहले खालिय नहीं। सारे पत्रों पर अपनी दोनों इयेनिया रखते हुए कहा—

बिलकुल नहीं। एक बात इन सत्रम है और वह यह है कि इन प्रत्येक ता खेवक किसी न किसी बहाने तुमसे स कोई निक्ट का सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है। शादी का प्रस्ताव हा सकता है बहन भाई के रिश्ते की प्रायना हो सकती है गुरु शिष्य के सम्बन्ध की कामना का होता भी संभव है बन्धुकार शान के नास जयवा कला प्रमी की हैसियत समझी के सुभाव की सनायना का भास्थान दिया जा सकता है मेहमान जयवा मेजवान बनन-बनान की इन्तिया इनमें हो सकती है। कुछ दुनिया में ऐसे भी व्यक्ति ज्ञान हैं जो आलोचना और समालोचना से अपनी आर दुनिया का ध्यान आर्कषित करत हैं। उनका भी इन पत्र-तखका में होना अमभव नहीं है। ये एग व्यक्ति हैं जिनका चान आप सम्मान न करा इनसे बन्कि पूजा ही तगा पानु कह किमा कामत पर भुलाया नहीं जा सकता। इनका एक अपना व्यक्तित्व जाना है जिनके अस्तित्व की उपेक्षा नहीं की जा सकती। मैं इन पत्रों की और आग आन जाना का भी एक सीमा दती है। उनका एक दायरा शीच दिया है जिनके बाहर आपका नाम तिमण्या का मद्रपुन नैना मकना। कहिय अब इजाबत है मानन की ?

‘जी पढ़ने का कष्ट भी अब आप ही कीजिये।’

मनेजर महोदय पत्र खालते गये और साथ साथ थोड़ा थोड़ा पत्र पूरिमा को देते गये। पूरिमा न पढ़ा— सौन्दर्य और यौवन की दुनिया को शस्य मानने वाला को, गायद आप-जैसी रमणी के दशन नहीं हुए। मेरी मायता है कि यन्ि ऐसे लाग से थापका साशालार हा जाता तो वे अपनी बहुत बड़ी मिथ्या धारणा से मुक्ति पा जात। पूरिमा के होड़ा पर स्मिति की रेखाएँ एक विशेष अध्ययन में दौडन लगी। पत्र को पढ़ने के बाद वह एक जोर रखती गई। यह वह न कर सकी कि किसी दिलचस्प वाक्य का दाहराय बिना उम पत्र को अलग रख द। दूसरा पत्र पढ़ते पढ़ते उमके मुह से शब्द निकल— कल में पहले मैं उन लोग से ईप्या करता था जो विनओपट्टा अथवा ‘आन्नपाली’ के युग में पैदा हुए थे और जिनको उन रमणियों के दशन का सौभाग्य प्राप्त हुआ था परन्तु आज मैं अपने आपको घय समझता हूँ—अपना जीवन साथक समझता हूँ कि मैं भा एक ऐसे युग से पैदा हुआ हूँ जिसमें पूरिमा जैसी देवी पृथ्वी पर चलती है। मैं अपने आपको विशेष भाग्यवान इसलिए समझता हूँ कि मैंने देवी का स्वयं अपनी आखा में देखा है। चाहता हूँ कि आने वाला समार मुझमें—मेरे युग से—भी देवी के सदभ से इर्पा करे। और अय से उसने पढ़ा—

इस्क और उत्पत्त में अलग रहने हुए भी आदृष्ट हूँ यही तुम्हारे व्यक्तित्व की विगापता है। फिर तुम्ही बताओ, क्या कहकर सबोधन करूँ बहिन ? दीनी ? , तुम्हारे एक उत्तर पर मेरी आगा अवलवित है उसने पत्र अलग रख दिया।

मनेजर साहब के मुह से गद निकल पड़े— ‘वाह बट !’

पूरिमा वाली— और मुनिये—तुम सुन्दर प्रनिमा अवश्य हो परन्तु कला से बोसा दूर। कला भी तुममें काना दूर है। साधना में प्राप्य बरतान तुम्हारे लिए महज प्राप्त हो गया हा ऐसी मेरी मायना नहीं है। यदि अब भी कुछ बनना चाहो तो तुम बन सकती हा। अध्ययन मनन, साधनायही रास्ता है। एक समालोचन के नाते मेरा यह क्तव्य है कि तुम्हारे वास्तविक निर्माण में मेरा योग हो। हमारी सहायता से वचित तुम अपनेका न पाओगी।

तुम्हारा एव 'गुभचिन्तक' — परंतु नाम नगारद ।

कोई बात हुई न ।'

ऐसे भी लोग हैं ।

'यह दुनिया है—सब तरह के लोग हैं । इन किस्सा को बंद करो । मनराव की बात इस दुनिया में है पसा । पसा पैंग करो और मौज मारो । वाकी सब बकवास है । पूर्णिमा ने जय पत्र उठा लिया और क्षणएक देखने के बाद वह उमम स पुन पढ़ने लगी । लिखा था 'दवी पूर्णिमा । मधुशाला में सुरक्षित रख मन्त्रि पात्रा स वे पात्र अधिक मौभाग्यशाली हैं जिनसे पीन वाला ने पीकर उह तोड़ दिया है अथवा बरतने से जो टूट गये है । जीवन व सात्य भी काम में ही जाने वाली वस्तुएं हैं नष्ट होने से पूव ही इनका उभाग श्रेयस्कर है जयवा नाश निश्चित है । इसलिए मैं क्या कहूँ ? यही कहता हूँ कि इस तरह व्यवहार करो कि इनकी समाप्ति पर पश्चात्ताप का मौका न आय ? — सुना आपन ?'

बहुत अच्छी बात कही है । जोर बताऊँ ? मेरे मन की कही है । आपकी भी पसन्द की है या नहीं ?

इसीलिए तो वह सब पढ़ रही हूँ कि कुछ जोर अधिक पसन्द की बातें मिल जायें ।

आप सोचती है कि हम इन पत्र लेखकों से भी कुछ कम बुद्धिमान हैं ?'

बिल्कुल नहीं ।

फिर इन्हें पढ़ने से क्या फायदा ?

अनेकों दिलों के हालात मालूम हो जाते हैं ।

दिल सबके एक जस है । दिल एक ही बात करता है और वह है प्यार की । सिर्फ प्यार की बात करता है । जलग अलग तरह से सुनता है तो गायरा जोर कवियों से सुन ला । दस-बीस दीवान और काव्य-संग्रह ला लेता हूँ । इस बकवास से क्या फायदा ?

इतना सुना है तो एक साहब का जोर सुन लें । लिखते हैं—

क्या कहकर सबोधित कर समझ में नहीं आता । चाद ! नहीं यह विक गीतल है इसमें दाग भी है । सूरज ! नहीं यह बहुत ज्यादा गरम

है इसके पास इन्मान पहुँच नहीं सकता। फूल ! नहीं, नहा, वह मैं नहीं कह सकता। इसकी उम्र बहुत कम होती है। फिर ? क्या कहूँ कुछ समझू मैं नहीं आता। महाकवि कालीदास भी ता नारी का 'मालविका' से अधिक कुछ न कह सका। फिर मरी तो स्थिति और स्तर ही क्या है। मेरु स्थाल से यन्त्रि पृथ्वी पर कोई स्वर्ग है, तो वह नारी है, रमणी है। इसलिए, ए ! पृथ्वी के स्वर्ग ! बाकी शन शन ! — सुना ?”

'मुन लिया। विचारा किसी सिनेमा के शायर या कविजी का मारा हुआ है। य सब कमत्रस्त तो मिया मजनु बनने का तयार बठे है। एकमान लना का जहरन है। जो जी मैं आया याद आया लिख मारा। आप तो इनकी बामारी से दूर रहो। इन दिल के त्रिमारा के लिए कहा तक मसीहा बनागा मडम ! परलो। एक बीमार का दर्द दिल और मुनो। बाह ! मजा जा गया —अपन हाथ के एक पन को देखते हुए मनजर महोदय बाने। पत्र को पत्त हुए व बाले—

'मालविक ! अब तक तुम स्वप्नद्रष्टा थी। कल से तुम स्वप्न-स्रष्टा हा। पर स्वप्न न बन जाना। मैं जिंदा न रह सकूंगा।

'क्या मतलब ?

'मनलब कुछ समझू ता बताऊ।

फिर भी ?

'मजनु है। दिमाग ठीक नहीं है। एसा के कहन का अर्थ कुछ नहीं हाता। और यदि हाता है तो उम कोई लला ही समझ सकता है।'

लिखन का कुछ तो अर्थ हागा ही।

'जहर।

वही बता दीजिय।'

"नजदीक आइय। और नजदीक।

घत। पूर्णिमा दूर हट गई। साय ही उसन अपन एक गाल पर अपनी माडी का जचल फेर लिया। बाली—

'इसके अनावा भा कुछ आप पुरुषा के दिल में हाता है ?

क्या नहा ? यह ता प्रारम की मन्त्र मात्र है। सब कुछ तो इसके बाद ही है। चर ! त्रिये मडम। मिया मजनु और उमकी टोनी से तुम्हारे



पूर्णिमा के वगने पर ल गई। वहा पहुचने पर उहने पाया कि उनकी प्रतीना म विद्यार्थिया व युवका का दो कला-सस्थाआके प्रतिनिधि मण्डल बठ थे। उनम मुनावान पूण किय विना उनक लिए अपने अय आवश्यक काय म यस्त हाना अमम्भव था, यह उन दोना न आत ही समझ लिया था। वे दोना ही उनक पास बठ गय। पूवागतुन उनक जाने पर सम्मान म खडे हो गय थे। पारस्परिक सम्मान व आगान प्रदान के बात मनेजर महोदय न पूछा— इसदि ! हुबम परमादय।

हम शहर की कला प्रतिष्ठान के प्रतिनिधि ह। आज गाम का आठ बजे हमारा सालाना जलसा है। हमारा अनुराध है कि देवी पूर्णिमा हमारे जनमे म मुख्य जतिथि के रूप म शामिल हो और जलम की शोभा बनाकर हम सम्मानित तथा वृताथ करें। एक ने कहा। दूसरा बोला—

“युवक मण्डल जो इन शहर की एकमात्र प्रतिनिधि सस्था है, कल अपन तत्वावधान म एक सांस्कृतिक जायोजन कर रही है। जाम सभा की आज सुनह ही बठक हुई थी उसमे सबसम्मति म यह निणय लिया गया कि शहरके सबसे अधिक प्रसिद्ध व प्रतिष्ठित कलाकार को उत्सव का अध्यक्ष बनाया जाय। जब व्यक्तित्व क चुनाव की बात जाई तो आपका व्यक्तित्व हा सबश्रष्ठ समभा गया और साथ ही यह निणय भी लिया गया कि मण्डल का एक विशिष्ट प्रतिनिधि मण्डल सुथ्री देवी पूर्णिमा की उपस्थिति म कथित निणय की सूचना के साथ पेश हो जोर देवीश्री से प्राथना करे कि वह अपनी उपस्थिति व कुशलता से हमारा पथ प्रदर्शन करे और हमारे कायक्रम को सम्पादित कराए। हम सब इसी मतय क निवेदन क लिए देवीश्री क सम्मुख उपस्थित हुए है। हम विश्वास मिनाना चाहते हैं कि देवी के जागमन मान स हमार मण्डल को एक अप्रत्याशित ख्याति प्राप्त होगी। साथ ही हमार सारे प्रयत्न ऐसी दिना मे हागे जिसमे देवी को कोई कष्ट न हो और साथ ही सुथ्री की ख्याति व प्रतिष्ठा को स्ववाछित चरम सीमा पर पहुचन का सुअवसर सरलता स प्राप्त हो जाय। कलाकार होने के नाते देवीश्री स हम यह विश्वास है कि हमारे उत्साह के परिवधन म हमारे साथ उनका पूण सहयोग रहगा। इसी विश्वास के बल पर हमने पहले स ही अपन आमत्रण-यत्राम देवी के नाम का मटुपयोग कर लिया है।

और इतना कह वक्ता ने अपन थैल म मे एक सुन्दर आम्रण-पत्र निकालकर पूर्णिमा के मुलाहिजे के लिए उमके आग पत्र कर दिया । अपन वक्तव्य का पूण करन के लिए वक्ता ने आगे कहना प्रारम्भ कर दिया—

“दवी का यह निश्चय रहना चाहिए कि हमारे उत्तमव म राज्य मंत्री, कुद्व विदगी कलाकार, बडे-बडे प्राप्तेमर, जफमर, जज वकील डाक्टर मता और न जान कौन-कौन गरीब हंगे । एक बडी सस्था क उच्चांगपति हमारे साथ हैं । दवीधी के लिए यदि कोई विनेष प्रपत्र बाछनीय हा ता उसकी पूति के लिए भी हम कोई आपत्ति नही है । हमारी मस्था की यह भी परम्परा रहा है कि जिन महानुभावा और महिलाआ के आगमन म हमार अच्यन्त श्लिचस्था रखत हा उनका मक्तेन यदि हम मिल जाय ता हम उनक आगमन तथा स्वागत का भी यथाशक्य पूण प्रयत्न करेगे ।

परन्तु मज्जनो । दवी पूर्णिमाको आज तक कभी एमे जलमा की सदा-रत करन का सौभाग्य नही हुआ है । मव तरह स योग्य होने हुए भी वह अनुभव का कमी के कारण ऐसे अवसर क लिए गायद उपयानी सिद्ध न हो । वक्तव्य मनजर महान्य का था ।

यह ता हमारे विचारन की बात थी, थीमान्जी । दवी की उपयुक्तता क उपान्यना दाना पर ही हमारी कायकारिणो न ममुचित रूप से विचार कर लिया और उमके बाद ही वे हमार द्वारा निवहित नियम पर पहुचे थ ।’

आपका परमाना मव दुग्मन्त है । परन्तु फिर भी आप व्यावहारिकता स मुपरिचिन मालूम नही दत । देवी पूर्णिमा की उपस्थिति का जहा ही लोगो का मालूम हुआ वे मागर की लहरा की तरह उमडत हुए वही पहुच जायेग । इस नाम जीर व्यक्तित्व न जाडू की-मो तामौर हासिल कर ली है । कमा भी मुप्रवत्र कौसी ही मुख्यवम्या जनता के उत्साह के आग कायम नहीं रह सकती । अभी अभी का बात है हम वाजार गय थे । माधारण-मी बान है । गागा का दवी की उपस्थिति का किमी तरह जान हा गया । बम फिर क्या था ? क्षणा म ही टुकान क आगे जन-ममूद्र लहरें मारन लगा । चौत्रा की मरीद रखा रह गइ । विचारे दुजान मानिक का पुनिस बुलानी पडो । उनक पटुचन पर बडी मुश्किल ने वे हमार लिए गम्ता बना मक । एमी

परिस्थिति में यह माचना अवश्य पड़ता है कि देवी अपने कायत्रम को निराहने में समर्थ हो सकेंगी या नहीं।'

यह इनजाम तो हमारा जिम्मेदारी है जनाब। देवी की जिम्मेदारी तो स्वीकृति तक ही सीमित समझा जानी चाहिए।

फिर देना जवाब द।

दखिय। सब्र जान तो यह है कि मेरा कभी ऐसी मजलिमा में जान का काम नहीं पडा। मैं सब्र लिए योग्य भी नहीं हू। वास्तव में मैं कलाकार हू भी नहीं।

बाह! क्या नम्रता है।

नम्रता नहीं जनाब। मैं सत्य कहती हू। जबरनस्ती इन मेहरबान साहब ने कलाकारों में मुझे ऊपर टकेन दिया है। अपनी हीनभावना और व्यक्तित्व से मैं परिचित हू। मैं क्या हू क्या नहीं हू इसके विषय में मुझे ज्यादा और कोट नहीं जानता। मैं विषय में जो कुछ भी आपसे सोचा, कहा वह सब मेरे ऊपर मेहरबानी है। मित्रों आपका शुक्रिया अदा करने में और मेरे काम कहने का भी मैं नहीं हू। मैं भाफी चाहती हू। आप मुझे और जलील न करें यहाँ मेरा आप सबसे प्रार्थना है।

अरे बाह साहब आपसे तो

हमने आपसे की इसमें कोई बात नहीं है। आप सब मेहरबानों से मैं सिर्फ एक एहसान चाहता हू।

आप हुक्म फरमाइय न।

यही कि आपका मुझे माफ करना पडगा। जान और कत दोना ही तिन नाम का हमारी कम्पनी का प्रयोजन है। मैं नीकर ठहरी। इतनी स्वतंत्र कहा कि अपना कायत्रम स्वयं बना सक। आप नागा न मेहरबानी फरमाइ उमर लिए फिर एक बार आपका शुक्रिया अदा करती हू। मुझे कामवाले की बहद खुशी है कि आप नागा न मुझे यात्रे फरमाया। गाय हा बहद दुख है कि आपका हुक्म का पालन न कर सकी। बहना ना नहीं चाहिए मगर आप सब आपसे हैं इसीलिए तबतलुप भी नहीं हाना चान्ति। अभा गाना जानि है। थाज, नी बा बहन गा

होगा। इसलिए फिर कभी मिलने की आशा लिए हुए मैं आप सब लोगों से अभी जुटाहाने के लिए माफी चाहूंगी—अच्छा नमस्त। फिर कभी दशन दन का कष्ट कीजियगा। आज की बात तो हो ही गई। आइये, मनेजर साथ।'

और इतना कह पूर्णिमा शीघ्रता से जाग'नुका की उपस्थिति स दूसरे कमरे में चली गई।

मनजर विशोरीलाल ने पूणिमा व विनापन म पसा पानी की तरह बहाया और बाढ़ के पानी की तरह ही उसके पास पसा आया। मगर फिर भी वह ऐसी परिस्थिति में न आया कि कुछ पूजी उसने पास इकट्ठी हो जाय। दस समय पूणिमा ही उसका सबसे बड़ा आश्रय थी। देश व हर समाज म गम्भीर रूप से फली हुई यौन विकृति की समस्या से वह पूणरूप स परिचित था और इसलिए उसने सोचा कि पूणिमा के गारौरिक सौंदर्य को सहायता से वह समाज का और अधिकता से गापण करे। निरंतर एक माह उग प्रस्थान दत्त हो गया था मगर फिर भी आशा जहा तक धन का प्रश्न या सफलीभूत नहीं हुई थी। प्रत्यक्ष रूप से एक तरह से टिकट घर पर रुपये वरसने पर भी अनेक कलाकारों को पूणरूप से पारिश्रमिक देने म भी वह अपने आपको समथ नहीं पा रहा था। आज अपन ही कित्ती विश्वास-पात्र कलाकार की माफत उम यह सूचना भी मिली कि यन्ि प्रस्थान व प्रारम्भ व पूर्व उसन उनक पारिश्रमिक को नहीं चुकाया ता न बहुत सम्भव यही है उमका साथ प्रस्थान म नहा देगे। एसी परिस्थिति म वह होन वाली आर्थिक क्षति व कलाकारों के असह्याग म हाने वाली बन्नामी का अन्ता मली प्रकार लगा सकता था। अपन जीवन म वह ऐम अनुभवों म म कई बार गुजर चुका था। जब कलाकार स्वय अपना स्वीकृति म अपने ही मित्रा अथवा कत्रस्वाहा की माफत कम्पनी स रूपया वमूल करन के लिए अपन पर गिर फ्तारी का वारण्ट आन्ि निकलवान अथवा लाकर उनको अपन पर तामील करवाने म समय हो गय थ और कम्पनी का अपनी विवगता म उनक रूपे सुरल्ल तन पर वाध्य होना पना था। एसी परिस्थिति का पूर्व जाभाग मित्रन पर कुछ एमा प्रवच अवश्य किया जा सकता था जिमम गान बनाई जा मर। आज की प्रस्तुत परिस्थिति म उगने कलाकारों और प्रस्थान विषय की दृष्टि स वकल्पित प्रवच करन उचित समभ। उस निरचय था कि पूणिमा

के उमके साथ रहते वह कोई-न-कोई सुप्रबन्ध करने में अवश्य समय हो जायगा। हाथ पर-हाथ घर बैठे रहने की उसकी आदत नहीं थी। इसलिए कुछ देर अपनी समस्या पर विचार करने के बाद उसने इस विषय में पूर्णिमा से बातचीत करनी मुनासिब समझी। इस समय दिन निकल थोटे ही दर हुई थी। वह झटपट बाहर जाने के लिए नयाग हा गया और अपनी माटर गरेज से निकालकर सीधा पूर्णिमा के बगले पर पहुँच गया। जिस समय यह बहा पहुँचा पूर्णिमा चाय पी रही थी। पहुँचते ही पारस्परिक औपचारिक अभिवादन के आदान प्रदान के पश्चात् पूर्णिमा ने पूछा—

“आज सुनह सुबह ही और मालूम हाना है कुछ जल्दी में ?”

तुम्हारा अलाञ्छ ठीक है पूर्णिमा !”

“क्या बात है ?”

“बसे सब ठीक है। परन्तु जैसे ठीक होना चाहिए बस नहीं है।

‘फिर भी ?’

“पहने चाय पी लें। फिर विस्तारपूर्वक बात करेंगे।”

पूर्णिमा के आदेश से घर की सेविका चाय का दूसरा प्याला ले आई। मनेजर किशोरीलाल चाय पीने लगे। दो एक घट गरम पेय के अपन गले से नीचे उतारकर वे बोले—

‘तुम्हारे चेहर पर चिंता की कुछ रेखाएँ चक्कर लगाने लगी है। इस तरह की कोई बात नहीं है जिससे तुम्हें चिंतित होने की आवश्यकता हो।

“यह सब तो आपस सुनने के बाद मालूम होगा।”

‘इससे पहल कि अपनी बात शुरू करें तुम्ह अपनी सेविका व दरवान का हिदायत दे देनी चाहिए कि कोई अन्य व्यक्ति हमें सूचना दिए बिना कमरे के पास न आय।’

पूर्णिमा ने अपन प्रबंधक मालिक के आदेश का पालन किया और यथेच्छा अपने कमचारियों को सख्त हिदायत कर दी कि कोई भी बिना इत्तला के कमरे के आसपास न आय। अब तक प्रबंधक ने अपनी चाय पी ली। वह पूर्णिमा से बातचीत प्रारम्भ करने के लिए तयार हो गया। उसने पुन पूर्णिमा के आकर बठने पर कहना प्रारम्भ किया— तुमने देखा है और देखती हो कि ससार में सबसे बड़ी वस्तुपत्ता है। मैं कई बार तुमको

एसा कह चुका हूँ और कहता रहता हूँ। आज भी तुमको अपने सम्पूर्ण अनुभव के आधार के ऊपर पूर्ण गम्भीरता से यह कहता हूँ कि दुनिया में ऐसा जितनी बड़ी वस्तु काँइ नहीं है। तुम देखती हो जब से हमने प्रदर्शन देने प्रारम्भ किये हैं पैसा हमारे टिकट घर पर बरसता सा मालूम होता है। परन्तु यदि वास्तव में टखा जाय अथवा लेखा जोखा लगाया जाय तो स्थिति इधर जाय—उपरगया जसी है। सच पूछा जाय तो हम नफे में नहीं हैं बल्कि घाटे में ही हैं और सिर्फ एक व्यावहारिकता का चक्कर चल रहा है। इधर कुछ दिनों में अपने लम्बे अनुभव के आधार पर यह जाशवा थी और आज मुझे उसका आभास भी मिल गया कि मेरी कम्पनी के कर्मचारी प्रदर्शन के ठीक पूर्व कुछ अडचन और यदि उनका काय नहीं बना, तो पूर्ण असहयोग अथवा हड़ताल कर देंगे। इसका मतलब मित्राय कम्पनी बन्द होने के और कुछ नहीं हो सकता। ऐसी स्थिति में बेशर्भूपा सज्जा बिना अपने रगभूमि की सुगमता जादि में खर्च की हुई कुल रकम व्यर्थ व सम्पूर्ण घाटे की सम्पत्ति मिट्टी होगी।

‘आपने फिर क्या साचा ?’

‘यही निणय लन के लिए तो यहाँ आया हूँ।’

‘मरे पास तो कुछ भी नहीं है। अपने मामूली इस्तराजान के लिए भी मैं तो आप पर निर्भर हूँ।’

‘यह मर स छिपा हुआ घोड ही है महम।’

‘फिर ?’

‘अपने सम्पत्क में जाय हुए किसा व्यक्ति से तुम कवन एक मन्ताह के लिए सिर्फ दस हजार रुपया की माग कर सकती ग ?’

‘मैंन तो कभा किसी ग इस तरह रुपया मागा नहीं।’

‘रुपया हर समय धाँपे हा मागा जाता है ?’

‘रकम भी तो बहुत बन्नी है।’

‘तुम्हें अपना कौमन का जन्नाडा नहीं है महम। तुम्हारे जमी ब्यक्तित्व का रमणा के लिए इतनी रकम तो कुछ भी नहा है। जब भी तुमने अपने ब्यक्ति के का नहीं नमना ?’

‘मुझे तो काँइ एसा व्यक्ति हा नजर नहा आना किमक जाय यह माग

में रस सकू।”

दो तीन व्यक्ति मरी निगाह में हैं परन्तु ”

“परन्तु क्या ? कौन हैं वे ?”

‘वही हो सकते हैं जिनकी तुम्हारे मे दिराचम्पी हो।’

‘फिर भी ?’

‘यह भी मुझे बताना पड़ेगा, मडम ?’

“हज ही क्या है ? किसी के बक बलेंम जानन का ता मुझे मौका नहीं मिला।

‘एक तो वही है जिनन तुम्ह अपन प्रथम प्रदशन क दिन अपनी हीरे की अगूठी अपना अगुली से उतार तुम्हारी अगुली में पहना दी थी। वह धनी है, उदार है और खुदमुस्तार भी है।’

‘दूसरा ?’

‘दूसरा वह जागीरदार का छोकरा है जिसे अपनी जागीर की कुल रकम अभी अभी हाथ लगी है। बराबर तुम्हारे हर प्रदशन में वह सबसे आगे की रिजक सीट पर बठना है।’

इससे तो कभी मिलने का मौका भी नहीं मिला।’

‘तीसरा वह उद्यागपति का लडका है जा दिन में पाच-सान बार आपके लिए फोन सटखटाता रहता है। रगभूमि पर भी मैंने आपकी जिससे अभी, तीन चार दिन पहले मुलाकात फरमाई थी। कल भी गायद वह आपके पास मुनाजान करने आया था और मुलाकान करके भी गया था।’

“हा, हा ! मगर, आपका कस मालूम हुआ ?’

“आवेग में आदमी आधा पागल होता है। प्रेम के आवेग में उसे पूरा ही रामभना चाहिए। वह स्वयं मुझे कह गया था। किस तरह आपने उसे सत्कार किया, क्या क्या तबज्जह हुई किम तरह मुलाकात के बाद कमरे के बाहर तब आप उसे छोड़न जाइ, आपकी मुस्कराहट का क्या मतलब था आदि सारी घटनाएँ एक दास्तान की तरह उमन मुझमें बही। इस समय तुम उमे यदि कोई भी बात करो ता वह उस टालेगा नहीं, अस्वीकार कुछ भी नहीं कर सकता।’ पूणिमा क्षणएक के लिए चुप हो गई। मगर उसने पुन गुना—



‘पूर्णिमा दबी ! एक बात कहू ? तुम्हारे निर्माण में मेरा जोर मेरी कम्पनी का योग है। जो व्यक्तित्व आज हमने तुम्हारा बनाया है उसमें हमने अपना सबस्व अपण किया है। मैं तुम्हें अपनी पिछली परिस्थिति याद दिलाना नहीं चाहता, परंतु फिर भी यदि स्वयं तुम अपनेको—कम्पनी में आने से पहले की पूर्णिमा का—आज की पूर्णिमा देवी से मुकाबला करो तो अन्तर स्वयं तुम्हारे हृदय को सारा सत्य प्रकट कर देगा। मेरी और कम्पनी का मुसीबत में तुम्हें बचाने की पूण कागिरी करनी चाहिए।’

“मुझे इन्कार क्या है ?

फिर किसमें कहागी ?

‘जिसको भी कहलाना आप उचित समझें।’

यह तो एक बात हुई।

“दूसरी ?’

‘दूसरी यह कि यह योजना यदि असफल हो जाय तो हमें प्रश्न के लिए वैकल्पिक इतजाम भी कर लेना चाहिए।’

‘आज का आज ?

‘क्यों नहीं ?’ क्षणएक विरमकर उसने कहा—

‘दुनिया तुम्हें देखने जाती है। चाहे जिस नाम से, वहाने में हम उन्हें तुमका दिखा देंगे। दमी नगरी में साल में सक्ड़ो चित्र बनते हैं। कुछ पूरे कुछ अधूर। कितना में तुमने कहानी देखी है ? कितनी में सँझातक विषय का प्रतिपादन होता है ? कितनी में सुंदर समीत, नृत्य की साधना दिखाई देती है ? कितने कवियों और साहित्यकारों की गीतों और वार्तालापों में पीडा नज़र आती है ? कितना में नव योजना और निमाण का दर्शन होते हैं ? कला का नाम में उसका वहाने प्रायः मकन नारी का रमणी रूप उसका यौवन और सौन्दर्य का नमूना प्रदर्शन और पुरुष के उसके प्रति कुत्सित भावों के आकषण और चेटाआ की कहानी चलती है। ऐसे ही चित्र हमारे देश के निर्माताओं संचालकों और कलाकारों की कलाकृतियाँ हैं जिन्हें वे ‘बाकम आफिम टिटस’ के नाम से पुकारकर जनता में भ्रम फलाते हैं। उन्हें यदि ऐसा करने में कोई नंगा रोकता तो हम कौन रोकेंगे ? एक गीतिका अथवा समीतिका के रूप में मैं यौवन और सौन्दर्य की कहानी पेश करना

साहता हू। यह एक ऐसा बलट' होगा जिसमें मुझे सिवाय तुम्हारे और पाच-सात अन्य सहायक कलाकारों के और किसी की आवश्यकता नहीं होगी। यदि उन्होंने आज कुछ भी इधर उधर की और प्रदर्शन में बाधा डाली तो। मेरा सवाल यही है कि मैं आज ही इस प्रस्तावित संगीतिका का प्रदर्शन संपादित कर दूंगा। तुम्हें मैं सिर्फ सतव करने आया हू कि तुम मजबूत रहना, किसी के बहकावे में आकर मेरी याजना से असहयोग का खयाल मत कर बैठना। तुम्हारे अपनी जगह न रहने की सूरत महम कही के न रहेंगे।"

'मेरे लिए तो आप कुछ चिंता न करें। यही समझिय कि मैं आपकी ही इच्छा और इशारे पर आश्रित हू। मुझे क्या करना है इसका मुझे थोड़ा सा पूर्वाभास मिल जाना काफी होगा।'

'अच्छा तो अभी मैं चला। पहले तो दम्बता हू कि इन पैसों वाले से मुलाकात होता है या नहीं और इन्हें कुछ कहना साधक भी होगा या नहीं। दूसरा मुझे एक ऐसे कलाकार से मिलना है जो तुम्हारा उपयोग बिना किसी विशेष तैयारी के रंगभूमि पर आज ही कर सके। मुझे ऐसे कलाकार की सूचना कुछ दिन पहले मिली थी। अपने ही लेखक हृदयेशजी की अनिच्छा के कारण उनसे मुलाकात करने का मौका न मिला। सोचता हू, शायद अगोत्र चित्रकार से उनका परिचय हो। कारण वह चित्रकार, मूर्तिकार, कवि लेखक संगीतकार सब-कुछ है और उसकी हर कृति में अपनी स्वयं की एक विशिष्ट छाप है। अपने हृदयेशजी की उससे प्रति अनिच्छा और अवहेलना के कई ब्यबिगत कारण हो सकते हैं। परन्तु आज अपनी परिस्थिति में हम उनसे जान की जरूरत नहीं है। यदि उनसे मुलाकात हो गई तो मैं उसे इस बात के लिए रजामन्द अवश्य कर लूंगा कि वह आवश्यकता पड़ने पर हमारी महायत्ना के लिए रंगभूमि में तुम्हें साथ लेकर अकेले अपनी कला का प्रदर्शन कर सके। आज जसा भी हो शनै-शनै उसमें खूबसूरती आ जायगी। अच्छा तो मैं चलता हू।'

इतना कहकर ज्यों ही वह उठकर कमरे के बाहर आया उसे पाठक पर अपनी ही कम्पनी के अनेक कलाकार दरवाजे से अन्दर प्रवेश करने के लिए बहुसंख्यक हुए दिखाई दिये। क्षणिक अपनी किसी नि

र उमने बाहर निकलती हुई पूर्णिमा को उनके आन की सूचना दी और अपनी आशका को भी उनके सामने यक्त कर दिया। पूर्णिमा पर पहले से उसे विश्वास था, परंतु पुन आश्वासन पाकर वह दरवाजे की ओर बढ़ा।

मनेजर महोदय के जाते ही ब लोग पूर्णिमा का सवेत पाकर अन्दर चले गये। बात वही थी जिसकी आशका पहले से ही वे आगे यक्त हो चुकी थी। पूर्णिमा को स्पष्ट शब्दों में आगतुकीन कह दिया कि यदि उनके रिश्रमिक की वसूली आज चार बजे से पहले पहुँचे नहीं हुई तो वे प्रदत्त में भाग नहीं लेंगे। पूर्णिमा से भी इनका वही अनुरोध था कि वह सह कलाकार होने के नाते उनकी माग में शरीक हों। पूर्णिमा से सहायता और आशिक सहयोग का वचन लेकर ही उन्होंने उसके बगले को छोड़ा।

प्रबंधक किशोरीलाल की बावजूद काशिश करने के भी उन यकितिया मुनाश्रत न हो सकी जिनसे वह रूपों का इतजाम कर सकता। अशोक चिन्नालय पर पहुँचने पर उन्हें अगोक न बताया कि सत्यकुमार नाम के कलाकार अवश्य हैं जिन्होंने कुछ नृत्य नाटिकाया और संगीतिकाया रचना की है जो बहुत कम कलाकारों से अभिनीत की जा सकती है। अतु अपने निर्देशन में वे इतने बड़े हैं कि किसी का किसी प्रकार का अपनी रचना और उसके अभिनाय में हस्तक्षेप नहीं चाहते। हस्तक्षेप आया तो वे बगये यही अशोक ने सत्य के स्वभाव को बताया। अपनी निराशा किशोरीलाल के समक्ष कोई अय चारा ही नहीं था कि अपनी इयन्नता के लिए वे समस्त क्षर्ते स्वीकार करते। शाम को जाठ बजे प्रश्नन रम्भ होना था। चार बजे रहे थे। अशोक ने उन्हें आश्वासन अवश्य देना था कि वे उस कलाकार को पाच बजे से पहले पहले 'रगभूमि' में ले जाने पास भेज देंगे।

प्रबंधक किशोरीलाल उनके आश्वासन पर विश्वस्त हो सीधे 'रगभूमि' गए। वही से उन्होंने पूर्णिमा को सदेग भेज दिया कि वह भी सीधी प्रतम्ब वही आ जाय। पूर्णिमा जाशानुमार बहा पहुँची कि साथ ही अन्ये व्यकित भी बहा पहुँच गये। पूछन पर उन नवागतुको ने बताया

विच अगाव बाबू के जायेन स वहा आए हैं जीर 'रगभूमि' मे उपलभ्य सज्जा-नामान का एक बार निरीक्षण करना चाहन हैं जिससे के प्रगन सम्बन्धी विषय सामग्री के सम्बन्ध म किसी निराय पर पहुच सकें ।

सम्बन्धित सज्जा समीक्षण क बाद जागन्तुका ने रगभूमि के मुख्य कलाकारा क विषय म अपनी जानकारी चाही, जा जासानी म उपलभ्य ह। सचालक द्वारा उह यह बता दिया जाने पर वि उपस्थित पूर्णिमा और चार पाच अन्य अनिरिकता के के औरा के सहयोग की जाग नही रकते । वेपरस्पर जलग विचार विमग करने लगे । बुद्धएक क्षण के बाद क एक निश्चय पर पहुच गए और उहाने प्रबन्धक महोदय का एक जाठ-दस फुट पारदग गीने का प्रबन्ध तुरन्त कर लेने का आयेन दिया । रोग क अभाव म किसी भी पारदग अभिकरण से काम ले लेने की उहाने बात कही । अपनी इच्छित मज्जा-नामग्री को अपने अधिकार म ले उहाने तुरत रगमन्त्र को अपन मनानीन प्रगन की अनुकूलता म सजाना गुरु कर दिया । विशिष्ट नाम के अभाव म उहाने अपने प्रदर्शन को 'अभिनय' नाम से पुकारना अधिक स्वाभाविक समझा और इसलिए उहाने प्रबन्धक महोदय को सलाह दी कि क सम्बन्धित प्रदर्शन का इमी स्वाभाविक नाम से विज्ञापन करें । सिफ तान घण्ट प्रदर्शन प्रारम्भ हाने म रोप रह गये थे । प्रबन्धक महोदय को आग तुका को विश्वस्त वाणी पर आस्था थी और इसलिए उहाने एक अट्टिग विश्वास स यथा आन्श तुरन्त प्रयत्न म सन्मन हो जान का निश्चय किया ।

अशाक द्वारा भेज हुए दल न रगभूमि के बाह्य हिम्म म सजी विनापन सामग्री को अपनी पनी दष्टि स जाचा । समय के अभाव को दखत हुए उहान उसम इतना ही परिवतन किया कि पूव प्रकाशित विषय की तारीखा को लोप कर दिया । रगभूमि क जाज के प्रदर्शन काल के नीचे उहाने दखते देखते पूर्णिमा की जशोक द्वारा चित्रित 'सद्य स्नाता की कलाकृति स्थापित कर दी । इस थोडे-म परिवतन मे ही वाछित असर वहा की सजावट म आ गया था । केन्द्रीय कक्ष के केवल इस एक परिवतन न रगभूमि का बाह्य सज्जा मे एक विचित्र असर ला दिया और एसा मालूम दन् लगा कि समस्त रगभूमि के विशाल भवन और जिम पथ पर बहुस्थित था उन म सबन एक

अनुपम शृंगार का सुलभ सौम्य निगर आया है। प्रथम मंचालक विशोरी लाल व हृदय में इस परिवर्तन के असर मात्र से यह विश्वास आ गया कि गहयोगी दल अपने काय में सिद्धहस्त है और उह प्रदशन क सम्बन्ध में विचिंतमात्र भी चिंता करने की आवश्यकता नहीं है। उहानि मुक्त हृदय और हस्त से अभिनय के विचापन को प्रसारित किया। दग्गते येरते घण्टे भर में गली बाजार, स्कूल, कॉलेज, आहार-गृह, निवास-गृह छविगृह—सबमें 'अभिनय' की चर्चा चलती सुनाई दी और ऐसी घूम मची कि प्रदशन के एक घण्टे पूव पुलिस को रगभूमि के आगे समुद्र की लहरा की तरह सब ओर से उमडती भीड का नियंत्रण करने के लिए विगप प्रवध करता पडा। इस प्रवध के बावजूद भी अनेका राहगीर दर्शनार्थी घायल हो गये कुचल गए अथवा गीणवस्थ हो गये। अनेकोको निरागा में बापिस लौटना पडा।

ठीक इस समय पर अभिनय प्रारम्भ हुआ। प्रणाल पूरणरूप से भरा हुआ था। वहा किसी को मालूम नहीं था कि अभिनय क दगाव क्या देखेंगे। रगशाला से आवरण हटते ही सितार पर मधुर स्वर सुनाई देने लगे। रागिनी बागेश्वरी की आलाप थी। वादी सवादी स्वरा की स्पष्टता के साथ ही दूर अधरे में एक दीपक टिमटिमाता हुआ नजर आया। दूसरे किनारे से एक अय दीपक की ली गति पकडती हुई दिखाई दी। देखते देखते दोना दीपक दूरी से एक दूसरे के इतने समीप आ गय कि उनकी दोना ज्योतिया एक हो गई। साथ ही शब्द सुनाई दिया— जीवन अमर कहानी—दूर का अधरा गन गन प्रकाश में परिवर्तित होने लगा। दर्शको ने देखा कि दीपको के पास से एक पुरुष और एक स्त्री बढते हुए प्रकाश क साथ साथ दूर अधरे में प्रकाश की सीमा से बाहर प्रवेग कर रहे है। अब तक दीपको के तले अधेरा था। ज्या ही वहा प्रकाश की किरणें पहुची दर्शका ने देखा कि एक बच्चा वहा खेल रहा है। वादक ने बागेश्वरी के स्वरो की पकड को इतना स्पष्ट कर दिया था कि एक तरह से स्वयं वह रागिनी अपने मूर्तरूप में थोताआ क मानस में खडी हो गई थी। दीपका की ली की गति से अब बच्चे की गति अधिक सक्रिय थी। गद् अब एक गीत में परिवर्तित हो गये। स्पष्ट गम्भीर मधुर स्वरा में गीत गतिमान हो चला। थोताआ न सुना—

जीवन अमर कहानी, सजनी ।  
 बाल खेल खेल मुस्काए  
 हाथ बनाए पाव स ढाए  
 पल क्षण बीतत बीतत बाला  
 बने किशोरी रानी सजनी ।  
 जीवन अमर कहानी, सजनी ।

गीत की मन्द गति के साथ ही दर्शिका ने देखा कि दो विभिन्न दिशाओं से रगशाला पर एक बालक और एक बालिका अपने अपने किलौनों से खेलते हुए आ उपस्थित हुए । सुन्दर बालक बालिकायें । सुन्दर ही उनके पास खिलान थे । अपन अभिनय म गीत की वस्तुकथा और उसके भाव को उन्होंने अपने बाल मुलभ खेलों से अभिव्यजित किया । ज्या ही अपने प्रिय किलौना को अपन भावा से नष्ट भ्रष्ट करते हुए वे रगशाला से अदृश्य हुए गीत आगे बढ़ा—

यौवन आए मधु बरसाए  
 जग अग शृंगार सजाए  
 नव वसन्त रति रूप किंगारी  
 हृदय हृदय की रानी, सजनी ।  
 जीवन ।

दर्शिका ने देखा कि दूर रगशाला के शीशकक्ष की रोशनी में नववसन्त की छटा, गोभा बिखर रही है । गीत के शब्द जहाँ अवकाश लेते हैं वहीं मधुर वशी के मोहक स्वर उनका स्थान ले लेते हैं । वे जब रुकते हैं तो कोकिला की मीठी कूब उह मुनाई देती है । गीत ज्या ज्या गति पकड़ता है त्या-त्या रमणी का विकसित होता हुआ यौवा दूर अस्पष्ट रूप से उहे दिखाई देना प्रारम्भ होता है । रगशाला पर और सम्पूर्ण प्रशाल पर एक स्थान की परिस्थिति छा जाती है । तब वसन्त के वातावरण म नारी के नव विकास की परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है । चादनी के मन्द प्रकाश में हवा व भाका के साथ भीने वरन, अचल, रमणीय अगा के आवरण का काम नहीं देते । रमणी ज्या-ज्या रगशाला व अग्रभाग की ओर अग्रसर होती हुई दिखाई पती है त्या-त्या दशका को महसूस होता है कि शीघ्र ही

वे योयनश्री का उत्सव स्वाभाविक सौन्दर्य में देख सकते हैं। समाप जाना हुई सौन्दर्यश्री के ओमल होने से पूव ही फिर वही दूर उगम भी अविज्ञ रमणीयता का दृश्य दृष्टिगाचर होने लगता है। प्रत्यय बार कुछ अधिक विकास के साथ इस दृश्य की पुनरावृत्ति चलती रहती है। जम हा दाय स्वाभाविकता में सौन्दर्यश्री को अपनी आखा से देखने की स्थिति पर बिना आवरण योयनश्री के साक्षात्कार होने को उद्यत होता है, ठीक उसी क्षण वह रूप ओमल हो जाता है और उमम श्री अविज्ञ विकसित रमणीयता दूर उस दिशाई दन लगती है।

ऐसे ही दृश्य के मध्य में रगनाला के अग्रभाग में एव नव-योयन नतकी सोलह शृंगार से सजी हुई अभिसारिका के रूप में प्रवेश करती है। किसी के आने की किसी स मिलन की भावना उसके नृत्य में स्पष्ट है। याडी देर की प्रतीक्षा के बाद जैसे उम अपने प्रेमी के आन का आभास मिल गया है, उसके हाव भावा से, मुद्राओं से मालूम होता है। परंतु इस भाव को प्रदर्शित करने के पूव वह अपने नृत्य में गीत के भावा की पूण यजना कर देती है। सृष्टा मानिनी की मुद्रा उसके नृत्य का रोपास है।

इस नृत्य के रोपास की समाप्ति के पूव ही गीत अपने नय विषय और चरण में प्रवेश करता है। गायक जाता है और गान हुए सुनाई देता है—

घघट पट चन्दा मुस्काए  
नैन भुकाए नन उठाय  
मन विष जमृत छनकत बना  
योयन प्रेम कहानी सजनी।  
जीवन अमर कहानी सजनी।

'त सगीत तू कबिता मेरी  
प्रेम भावना [प्रतिमा मेरी  
सत् प्रायना आसू अचन  
विश्वबन्ध रति रानी सजनी।  
जीवन अमर कहानी सजनी।

परंतु गायक ने देखा कि उसकी प्रेम प्रतिमा उसके देखते देखते रग

शाला के पांव में ओझल होकर गाशकक्ष की दृश्यावलि में सम्मिलित हो गई है। विषाद भरी परेशानी के बाद वह पुनः पुकार उठा—

स्वप्न सुन्दरि ! न भरमाओ  
 विरह रागिनी अब न गाओ  
 गूँथ हृदय, मिहामन तेरा  
 जीवन प्रेम कहानी सजनी ।  
 जीवन अमर कहाना सजनी !

पटाक्षेप नहीं होता। यवनिका पतन नहीं होता। गायक को कुछ विराम देने के लिए तनु-बाद्य के कुछ गभीर, टुण्ड और अवसाद भरे स्वरो ने उसके शरीरों का स्थान ले लिया। रगशाला पर शनैः शनैः रागना रम होने लगी। मालूम देने लगा जैसे प्रस्तुत दृश्य की समाप्ति का यहट सकेत है। करतलध्वनि से प्रशाल गुञ्जित हो उठा।

परन्तु ठीक इसी समय दगाको ने दखा कि रगशाला की पण्ड भूमि पुनः एक गुलाबी रोगिनी में जागृत हो उठा है। मालूम हाता था कि अभिनय के संचालको ने इस करतलध्वनि को अपने प्रयासा की प्रगसा में पर्याप्त नहीं समझा। इसीलिए करतलध्वनि के बाद भी उन्होंने प्रस्तुत दृश्य की पुनरावृत्ति नहीं की। रगशाला के गौशकक्ष की गुलाबी राशनी ने दगाको के मस्तिष्क में भाव-यपवतन का काम किया। उन्होंने देखा कि एक पूण यौवना लहराते सरोवर की आर अग्रसर हाती हुई आ रही है। सुन्दर की रागिनी की एक स्वर लहरी उसकी चाल का साथ कर रही थी। रमणी ने आते ही अपने घस्रो का उतारना आरम्भ किया। दगाका ने उसके मस्तक का अचल हटाते हुए दखा। काल बादलों की घटाओ की तरह उसके काले बाल हवा में लहराने लगे। उसने अपनी अगिया खालकर सरोवर के किनारे सहज भाव से रख दी। सरोवर के एकांतपन की दृष्टि ने उसने अपनी साड़ी को समेटने हुए सरोवर के नीर में प्रवेश किया। इस प्रवेश काय में दशका की नारी के आवरणहीन यौवन को, रमणी की निवसन रमणीयता की क्षणिक भन्क भी मिली। परन्तु साथ ही तुरन्त उनका ध्यान रगशाला के पादक से निकलती हुई एक सौन्दर्यशी नर्तिका की ओर आकर्षित हो गया। दगाक किसे देने ? सरोवर की सुन्दरी को अथवा



रगमच पर सम्पूर्ण सजधज के साथ उपस्थित सौंदर्यश्री को ? पावो म बधे घुघरआ की आवाज ने क्षणएक के लिए सरोवरश्री स उनका ध्यान रगमच की सौंदर्यश्री की ओर आकृष्ट कर लिया था । परन्तु ज्यो ही सद्य स्नाता ने पानी की सतह स उठकर अपना रूप प्रदर्शित किया दशक पुन इस प्राय अनावत सौंदर्यश्री की आर एकटक देखने लगे । नतकी के पावो के घुघरआ की आवाज दगाका की दृष्टि पुन उसकी ओर लौटा लाती । रगशाना पर सजे ये दो दृश्य बिन्दु कुछएक क्षण तक दशका की मधुर उलभन वा कारण बने रहे और यह महसूस और मालूम करना मुस्विल न रह गया कि प्रत्येक रमणी की हर हरकत अपनी ओर उनकी दृष्टि का प्रत्यावतन प्राप्त करने मे सपूर्णरूप स समर्थ थी । अभिनय के सचालकोका कला के क्षेत्र म यह एक निर्भोक् प्रयास था, परन्तु साथ ही दशको के लिए भी ऐसे दृश्या का उपयोग एक नया अनुभव सिद्ध हुआ । प्रशाल मे उपस्थित दगाक गण अभी नारी के आवत और अनावत सौंदर्य उपभोग की उलभन से पूर्णरूप स मुक्त भी न होने पाए थे कि नतकी के बठ से मधुर और सुसयत स्वरा म एक विलासमय गीत की शान्दवलि सहज भाव से बह चली । गद थे—

साभ तो ढलन द साजन ।

दीप ता जलन द साजन ।

प्रीति की ता रीति यट है

सोए जग हम जामे साजन । साभ

दगाकान दगा कि गीत के प्रारम्भ क साथ साथ ही रगशाला के दूमरे पार्श्व से पूव उपस्थिता रमणी स भी अधिक शृंगारमयी एक अय मुकुमारी । प्रस्तुत गीत की भाव तथा वस्तुयोजना अपन अग चालना और विभिन्न मुद्राआ द्वारा स्पष्ट करती हुई उपस्थित हुई है । इस मुकुमारी क गीत की शान्दवलि वा स्पष्टीकरण और निवचन भारत की पूर्वोक्त गली म था । इसकी विभिन्न मुद्राआ ओटजटिल पन्-सचालन की मूर्मत्रियाआ स यह भलीभांति पता चलाया जा सता था कि पूव क टुमरी अग की ओर दिगन के भरत-नाट्यम् की यह मुकुमारा एक निद्व बनाकार है ।

गीत की शान्दवलि का ही समाप्त होती यह मुकुमारी उगकी भावना

य अनुकूल उमका निवचन अपन नत्य मे करता प्रारम्भ कर देती । वादक अवसर दिये जाने पर अपने अपने वाद-यन्त्रों पर उन्ही भावा का स्पष्टीकरण करते । यह मुकुमारी ज्या ही अपनी विषय उपयुक्त मुद्रा से अपने निवचन का समाप्ति का संवत देती, पूव उपस्थिता रमणी गीत को, उसकी कविता को, उसकी वस्तुवधा को, उसके विषय को अपनी स्वरमयी वाणी से और आगे अप्रसर कर देती । कविता गीत संगीत के संगम का सुसुचि पूण प्रदर्शन ही आज के अभिनय का कायत्रम सञ्चालक द्वारा निश्चित क्रिया गया था । इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रस्तुत विषय में इस गीत, संगीत तथा नत्य की रचना की गई थी । इमा मिलमिले से गीत आगे बढ़ा—

आज वाणी गीत होगी,  
आज स्वर संगीत होगा ।  
नैन नैनन मधु पियेगे,  
अधर प्लावित सुरम हागा ।  
गीत मयम सिधिल डह गय,  
दुगी गत सत्कार माजन ।  
साम्क प्लन दे रे, माजन,  
दीप जलन दे रे साजन ।

गीत का गायन हुआ । नत्य में पूर्ववत् उसकी अभिनयजना हुई निवचन हुआ । सहयोगी वादकान सबके प्रभाव का द्विगुणित करन में सहायता की । नतकी के अविचलित मूर्ति मुद्रा ग्रहण करते ही गब्दावलि फिर आगे चली—

मलय गीतन पवन वातायन चलेगा,  
यामिनी होगी महेती चात्नी का संग हागा,  
रमण गया रति सुलभ श्री स मजगी,  
चिर प्रतीम्नित स्वप्न का साकार होगा,  
रूप, यौवन, मधु कलश का  
दुगी में उपहार साजन ।

आज 'अभिनय' के प्रथम प्रदर्शन को कई दिन बीत गये। इस जरूरत में पूर्णिमा को वे सभी अनुभव बराबर हुए जो एक प्रख्यात अभिनेत्री को रात दिन हुआ करते हैं। उसका विनायन उसकी सूरत का विनायन उसके शरीर सौंदर्य और यौवन का विनायन—सभी अपना विभिन्न 'यापारिक' धाराओं में पराकाष्ठा पर प्रवाहित हो रहे थे। 'यापारिक' परम्परा में एक विशेष साधन बन जाने के कारण पूर्णिमा को अब सम्पत्ति अथवा उससे प्राप्त वस्तुओं का अभाव नहीं था। कोई भी व्यापारिक सम्पत्ति अथवा 'यापारी' यदि उसके पास आता तो किसी उपहार के साथ आता और पूर्णिमा के लिए उसको अनुग्रहीत करने के लिए इतना ही पर्याप्त था कि वह उसकी वस्तु-सामग्री की यथच्छा प्रशंसा कर देती और अपनी उस प्रशंसा अथवा राय को प्रकाशित करने को उस व्यापारी को अनुमति दे देती।

स्वयं के इस साधन के अलावा प्रबंधक किशोरालाल ने भी घर सामग्री के रूप में उसे अनेकों वस्तुएँ उपहार रूप में प्रदान कर दी थीं। जो भी वस्तु उसमें मुलाकात करने आता सभी खाली हाथ जाता हुआ नहीं मालूम देता। अभिनय के प्रथम प्रदर्शन के बाद ही उसका निवास पर वास्तव में घनी मुलाकातियाँ की कतार-सी लगी रहती।

पूर्णिमा को अपने जीवन के पुराने दिन याद थे। रुपय-पैसे की महत्ता से वह पूर्णरूप से परिचित थी। जीवन में उसका निपट अभाव भाग लेने के बाद अब किसी का उसमें बताने की आवश्यकता नहीं थी कि उस अपने भविष्य के लिए पर्याप्त धन-संग्रह कर लेना चाहिए। उसने किया भी। प्रबंधक किशोरालाल से मिल करीब पचीस हजार रुपये का अपना बैंक एकाण्ट खोलकर अपने नाम में उसने सुरक्षित कर लिया था। पर्याप्त वस्त्र जूते आदि उसके पास उपहारस्वरूप इकट्ठे हो ही गए थे। अनर्गल उत्सवों और भोजनों में सम्मिलित होकर और वहाँ समाज के विविध पुरुषों

तथा स्त्रियों से अहमियत पाकर उसकी महत्त्व और गुरुत्व की भावना तप्त हो गई थी। समाज की कथित उच्च पंक्ति को समझने में उसे देर न लगी और आज वह अपनेमें हीनभाव से ग्रस्त न थी।

जब से उसे प्रबन्धक किशोरीलाल से यह सकेत मिला कि रगभूमि का काय चाहे जब अनिश्चित परिस्थितियों के कारण बदला जा सकता है, वह अपने भविष्य के लिए और भी अधिक सतक हो गई थी। वास्तविक तथा विशिष्ट कलाकारों से घनिष्ठ परिचय प्राप्त कर लेने के बाद उमन जीवन का एक अपना दशन-न्या बना लिया था। परिभाषाएँ कुछ भी हा, जीवन की विनोय परिस्थितियों और वस्तुव्या को समझने में अब उम अधिक परेशानी और दिक्कत नहीं होती थी। इधर कई दिनों से वह अपने भविष्य के लिए चिन्तितता नहीं, मगर विचारशील और मननशील अवश्य थी। उसे रह रहकर अपने ही जसी आय अभिनेत्री बहिना की जीवन-कहानियों का खयाल हो आता था और वह नहीं चाहती थी कि अपने भविष्य-जीवन में उसको भी उनकी विषम अपमानजनक और असहनीय परिस्थितियों का सामना करना पड़े। अपना अतीत उसके लिए अपना पथ प्रदर्शक, अनुभव के दृष्टिकोण से था। आगत में जो कुछ उमकी आत्मा के सामने गुजर रहा था वह उसे सही माग दशन देने के लिए पर्याप्त था। सिर्फ अनागत—भविष्य—के लिए उसको निश्चय करना था कि जीवन-नया किस तरह चलाई जाय।

इधर कई दिनों से अनेक पुरुष युवक, अर्धेड वृद्ध भी उस जीवन माधी के रूप में ग्रहण करने की याचना कर रहे थे। आवेश, भावना और चिन्तन में अब वह अन्तर समझती थी। इन सबके ऊपर वह याचक के लिए अपनी आवश्यकता को अधिक महत्त्व देती थी। अनुभव के आधार पर अब वह इस निश्चय पर पहुँच चुकी थी कि जीवन में अभाव अथवा आवश्यकता का कारण अथवा प्रतिकारक ही अन्तत आवेग भावना और चिन्तन के सर्वोपरि है। जीवन को अनिश्चय मानते हुए भी स्वनिर्मित एक निश्चित परिस्थिति में वह अपना जीवन निर्वाह करने की कामना कर रही थी।

और आज इसीलिए जब राजस्थान के एक भूतपूर्व जागीरदार जिनका इधर कई महीनों से पूणिमा में परिचय था, आय उमन उद्द विनोय बातचीत के लिए टहरन का आग्रह किया। वह बोली—



“बनाम की तबियत हाज़िर हो तो ज़रू करू ?

“एहसान फरमाइय ।’

‘आपको याद हो, शायद, आपन एक दिन कहा था कि आपको मेरे जीवन म दिलचस्पी है ।’

“जी ।’

“वह मेरे साथ मज़ाक ता नही था ?”

‘बिलकुल नही । यह तो मेरे जीवन की हसरत है ।’

“आज भी ?’

“क्या नही !”

“आपका उसमे मतलब क्या था ?’

“मुझे जीवन साथी की जरूरत है और यदि आपको आपत्ति न हो तो मैं आपको पाकर अपन-आपको बहुत भाग्यवान समझूंगा ।

“पर, आपके तो पत्नी हैं ? जाप चुप क्या हैं ?”

“पत्नी है । हमारा दाम्पत्य जीवन सुखी नही है ।”

‘कारण ?’

“मैं भातिववादी हू । मरी पत्नी धार्मिक और आदगवादी है ।’

‘मरा ऐसा विश्वास है कि हर पुरुष—जहा जीवन म साथ का सबध है—आदगवादी होता है ।’

“यह ब्यक्ति यकित पर अलग-अलग तरह स आश्रित है ।’

“रर ! आपको मुझम क्या बान अच्छी लगी ?

“आप मेरे जीवन के अभाव की पूर्ति कर सकेंगे ।”

‘कसे ?’

‘जपन यौवन मे—सौन्दय स । उनके प्रभाव स, अपने स्वभाव से ।’

“बस ?

“इसमे अधिक मुझे जानन की जरूरत नही है ।’

‘पर आप मुझे नही जानते । मेरे पूव-जीवनसे भी परिचिन नही हैं ।”

“मैं अतीत मे विश्वास नही करता और यदि करता हू ता इतना ही कि वह आपन का—वनमान का पूवरूप है । आपको देखनर मैं आपके मन को बुरा नही समझता । अपन प्रयाजन के लिए मुझे इसमे अधिक विचार

वरने की जरूरत नहीं है।'

“यदि मैं कहूँ कि मेरे परिवार का कोई पता नहीं है।’

“मेरे लिए यह और अच्छा है। आपका ध्यान मेर अलावा जोर कहीं केन्द्रित नहीं होगा।

“पुरुषो को प्रायः नारी के अनक पुरुषाभ सम्बन्ध होने की बात बुरी लगती है।

‘पुरुष स्वार्थी है। उसके लिए यह स्वाभाविक है। अप्राप्य की प्राप्ति के लिए य सब स्वाथ पुरुष को छाड़ने पडते है।

“आप छोड सकेंगे ?’

“निश्चय ही।’

‘यह जानते हुए कि मेरा अनक पुरुषो से सब तरह का सम्बन्ध रहा है, आज भी है क्या फिर भी आपका मुझे अपना साथी बनाने में आपत्ति नहीं है ?’

‘निश्चय ही नहा।’

‘यदि मेरी पूव परम्पराएँ मेरे भविष्यम परिवर्तन न ला सका ता क्या आप उस परिस्थिति को सह सकेंगे ?’

“मुझे सिर्फ दुःख हागा।

क्या आप किसी अपनी रमणी का समाजहीन रखने में अपनी इज्जत समझत है ?’

‘बिलकुल नहीं।

आप मेरा मतलब समझ गये ?’

शायद समझ गया हूँ। पूर्णिमा ने देखा चाय सामग्री जा गई है। वह बोली— लीजिये पहले चाय पी लीजियेगा। और इतना कहते हुए उसने अपनी सेविका को कमरे में आने का आदेश दिया। सेविका के पुनः बाहर चले जाने के बाद उसने चाय बनाई। प्याले को ठाकुर साहब का पकडाने हुए बोली—

“मैं और आप दोनों अलग अलग वंश-परम्पराओं में पल हैं। मेरा जीवन एक स्वतंत्र पक्षी का रहा है जिसका कभी कोई डाली घर रही है और कभी कोई। इधर कुछ दिना से एक पड की साया में बठ पाई हूँ। आशि

माना आज भी नहीं है। कुछ तिनके इकट्ठे अवश्य हो गये हैं, पर दखती हू कि सिफ चन्द तिनका से आगियाना नहीं होता। घर नहीं बनता। उसक लिए एक साथी की आवश्यकता होती है। साथी वह है जो जीवन को प्रवाह दे। स्वयं उसमे बहे। प्रवाह को रोके नहीं। तटो की ओर अकेला देखे नहीं। दूर रहे, नजदीक रह साथ रहे पर दृष्टि उस पक्षी की तरह हो जा परवाज म भी अपनी नजर नीड पर रखता हो, अपने साथी पर रखे।'

"आपके विचारो के लिए मेरे हृदय म स्थान है।"

'आपने ठीक फरमाया। परतु ठाकुर साहब। रूप और यौवन स्थायी नहीं हैं। यौवन के साथ, मैंने दखा है, रूप भी चला जाता है। यौवन का ही दूसरा नाम सौंदर्य है, यदि यह कहा जाय तो कोई अत्युक्ति न होगी। बीमारी के अदृश्य कीडे भी सौंदर्य नाश का कारण बन सकते है। यदि मेरे रूप यौवन के प्रभाव के कारण ही आप मेरी ओर आकर्षित हुए है तो संभव है वह आकर्षण मुझम न रह और फिर हमारा साथ भी न निभे।'

"आप असंभव परिस्थितिया के अस्तित्व की बात करती हैं।"

'परन्तु परमात्मा न करे, यदि एसी घटनाए घटित हा जायें जिससे हमारा साथ न चले फिर क्या होगा?'

'हर परिस्थिति मे मैं आपकी इच्छा का सम्मान करूंगा। आपको पाकर मैं सवस्व पा लूंगा। मेरी अय कोई माग न है न होगी।'

'पूर्णिमा सुनकर कुछ क्षण के लिए चुप हो गई। अपनी बातचीत म उसने व्यावहारिकता के अनेक पहलुओ का स्पश कर लिया था। कुछ विरम कर बोली—

"साथ चलने मे असमय हाने पर हम अलग भी तो हो सकते हैं।"

'अपने हृदय से मैं यह न चाहूंगा। मेरे मुह से यह बात न निकलगी।'

"आपका 'बजट' क्या है?"

'किसलिए?'

'मेरे लिए।'

'वह आप स्वयं बना लें।'

फिर भी?'

"इसके लिए मुझे विनोय सोचने की आवश्यकता नहीं है।"



कोई योजना तो भरे लिए आपने सोची होगी ?

‘ मरी याजना मे अब तक एक ही शब्द रहा है। सवसमपण ! सब अपण ।’

‘ तुच्छ व्यक्ति बड़े शब्द, बहुत बड़ी भाषा नहीं समझत, ठाकुर साहब ! अपने समझने वाली छोटी बात वे सुनना चाहते हैं। नारी पुरुष का हाथ उसे आश्रय देने के लिए नहीं पकड़ती, वह उससे प्रश्रय पाने के लिए उसकी सहचारिका बनती है। उसे समझाने के लिए आप भी उसी के स्तर की छोटी बात उससे कहिये जिससे वह समझ सके। कहा उसका निवास होगा किस प्रकार वह अपना निर्वाह चलायगी कहा तक उसे खर्च करने की छूट होगी, जीवन की किन आवश्यकताओं की चिन्ताओं से उसे दूर रखा जा सकेगा, उसके निवास, रहन सहन का क्या स्तर होगा क्या उसकी सुरक्षा का प्रबन्ध होगा सम्भावित संकट काल में वह आत्मनिभर किस तरह रह सकेगी—आदि प्रश्न ऐसे हैं जिसके उत्तर ही उसे अपनी स्थिति समझने में मदद कर सकते हैं। एक नारी के प्रसंग में ये प्रश्न उसके जीवन की समस्याएँ हैं जिस पर उसकी सामाजिकता आश्रित है। अपने साथी के प्रति उसकी भावात्मक स्थिति भी उपरोक्त भौतिक परिस्थितियों से बहुत-कुछ अंशों में सलग्न है।

‘ सम्भव है, आप ठीक कहती हैं।

और यह इसलिए भी जरूरी है कि वह अपनी विशेष स्थिति में कुछ करने की स्वतंत्रता महसूस करे साधारण-साधारण बातों के लिए परेशानी का कारण न बने और साथ ही अपनेको दासता की सीमा में प्रवेश करने से बचा सके।’

देवी पूर्णिमा ! जिन परिस्थितियों और समस्याओं का आपन जिक्र किया है वे न भरे मस्तिष्क में नहीं हैं। पर मैं उन्हें कबल मस्तिष्क की उपज भी नहीं मानता। इनमें सम्बन्ध में भी मैं आपको इच्छा को ही सर्वोपरि मानता हूँ। जब बात आती गई तो क्या मैं सुन सकता हूँ कि इनके सम्बन्ध में क्या योजना आपको सन्तुष्ट कर देगी ?

ठाकुर साहब ! मैंने व्यापार की बात नहीं की। इस सम्बन्ध में गौदेबाड़ी हानी भी नहीं चाहिए। आपको माय अपनी स्थिति समझने मात्र

क लिए मैंने इन प्रश्ना की ओर आपका ध्यान जाकपित किया था। बाद म वे ही प्रश्न आपके और मेरे लिए परस्पर मे समस्याए न बन जाये इसी लिए इहें आज उठा दिया है। क्षीण बुद्धि और हीन श्रोत होने के कारण मरा किसी ऐसी योजना के प्रति एक उदार व्यक्ति की तरह समुचित और सुलझा हुआ दृष्टिकोण भी तो नहीं हो सकता। इसीलिए ”

“इसीलिए क्या ?”

“इसीलिए योजना आप दें, इसीम मैं अपना कल्याण समझती हू।’

कुछ क्षण के लिए कमरे म चुप्पी छा गई। ठाकुर साहब के चेहरे पर मुस्कराहट थी। पूर्णिमा के चेहरे पर एक अपराध, एक स्वाध की छाया कभी-कभी भलक जानी थी। कुछ क्षण विरमकर वे बोले—

‘देवी पूर्णिमा ! सुनो। जाज जिस मकान म अभी वठे हम बातें कर रहे हैं यह मकान मैंने कुछ ही दिन पहले उसके मालिक से माठ हजार रुपय मे खरीद लिया है। यह मकान आज से आपका है। आवश्यक दस्तावेज की तकमील म आपक नाम मैं आज करा दूंगा।

“ठाकुर साहब !”

‘सुना पूर्णिमा दबी ! मैंने योजना निश्चित कर ली है। सम्पूर्ण मुनने के बाद जो आवश्यक समझ वह त दीली आप उमम कर सकती हैं। इस मकान का अय आवश्यक तामीर म जिने आप मुनामिब समझें जो भी सच लगेगा वह सब मरी जिम्मेदारी होगी। अपनी आवश्यकता और रचि के अनुमार आप इसे सजा सकती है जिसके लिए आपको यकिनगत सच कुछ भी न करना पडेगा। इमक अलावा मरी पूव जागीर के गाव म मरा एक बाग और कोठी है वह मैं आज ही आपको उसकी बुल सजावट के माध, उपहारस्वरूप देता हू। यह हुई आपके आवास निवास प्रवाम की यवस्था। स्यायी चल-सम्पत्ति के रूप म आज ही पाच लाख रुपये आपक नाम मैं आपके बक क खाने म जमा करा दूंगा। जवरात और वस्त्रों के लिए अतिरिक्त साठ हजार आज गाम से पहल आपक पास पहुंच जायेंगे। इम समय यदि मुझे यह अगूठा अपन हाथ से आपकी अगुली म पहिनाम की दजावत दो तो मैं अपने आपका धय समझूंगा।

और यह कहते हुए ठाकुर साहब ने अपन हाथ की अगूठी पूर्णिमा का

हाथ पकड़कर उसकी जगुली में पहना दी। पूणिमा व मुह से धीन-सी एक चीन्म निकल पड़ी। वह बोली— ठाकुर साहब !” मगर उसने मुना—

‘देवी पूणिमा ! यह एक दास्त का तुच्छ उपहार है। किसी चीन्म की कीमत नहीं है। आपन मुझे जो कुछ दिया उसकी कीमत हो भी नहीं सकती। बल आपका और मरा साथ हो या न हो, आज जो आपन मुझे स्वीकारन की बात बही है जा प्रस्ताव रखा है वही मरे लिए काफी है। आज आपन लिए घनी पुरपा की बमी नहीं है। ऐसे लोगा का समूह भी मुझे मालूम है जो आपके एक प्रस्ताव पर अपना सबस्व योछावर करने को तैयार है। मैंने जो आज अभी आपको नजर किया उससे मेरी आर्थिक स्थिति में कोई अंतर नहीं आ सकता। इसलिए आप उसे स्वीकर कर मुझे कृतन परमावें। मरी आज यह सबसे बडी खुशी है कि इस महा नगरी के लाखो पुरुपा के मुकाबले मैं आपके सबसे नजदीक हू।

‘परतु ठाकुर साहब ! मैंने तो अभी कुछ निश्चय नहीं किया। एक मन में उठी इच्छा का इजहार मात्र आपक सामने किया था। आप मुझे गर्मिदान करें।

देवी पूणिमा ! मैं चाहता हू कि आप मेरी भावना-जो तक पहुंच सकें। यह मेरा तुच्छ उपहार आपके अपने सम्बन्ध के निश्चय में यदि कोई बाधा लाएगा तो इसमें मुझे कोई खुशी न होगी। मरे स्वायत्तीन उपहार की जगह पर खडी होकर बिना किसी मजबूरी के स्वच्छा से जो भी निश्चय आप लेंगी वही आपका हादिक निश्चय होगा। एसी स्वेच्छा से प्ररित प्रस्ताव ही उस सौभाग्यशाली का चयन करेगा जो आपके सौजन्य से प्राकृतिक रूप से सम्बद्ध हो। यही मरी हादिक कामना है। मुझे और कुछ नहीं कहना।

बात समाप्त हो गई। पूणिमा ने अपनी गदन ठाकुर साहब के वक्षस्थल पर रख दी थी। साथ ही उसकी बाहें उनक गल का हार हो गई। उन्होंने उस अपना लिया।

पूणिमा और ठाकुर साहब के बीच जा वान हुई उसका आभास बहुत शीघ्र तागा को मिल गया। उनका ने तो उनक इस सम्भावित मिलन पर बघाइया तक द दी। महानगरी के मुख्य बाजारा म साथ-साथ जाना, वस्तुआ की खरीद के समय एक दूसरे की सम्मति लेना परस्पर एक दूसरे के प्रति आत्मीयता का प्रदर्शन जादि कुछ ऐसे तथ्य थे जो विवेकशील व्यक्तियों और विशेषकर सवाददाताआ को नजरा से बच नहीं सकते थे।

आज शाम को प्रबन्धक किशोरीलाल की जोर से एक बहुत समारोह का आयोजन किया गया था। पूणिमा और ठाकुर साहब दोनों को इसकी पूर्वसूचना थी। भोज, नाच रंग, गाना गोष्ठी—सभी इसके कार्यक्रम पर थे। रंगभूमि में सम्बन्धित सभी कलाकारा, कर्मचारिया, महयोगिया, सहायका के अलावा गहर के जनेका ख्यातिप्राप्त विचारका, दार्शनिका, राजनीतिज्ञा, साहित्यिका कविया चित्रकारा, मूर्तिकारा सवाददाताआ आदि को इस समारोह की सफलता में योग देने तथा इसकी शोभा बढ़ाने के लिए आमन्त्रित किया गया था। प्रबन्धक किशोरीलाल की यह योजना थी कि उनके द्वारा आयोजित यह समारोह कला और संस्कृति का सगम बने। इसे विशेष महत्त्व और चमक-दमक देने के लिए शहर के उच्च श्रेणी के शोभाचारी समाज को भी इसमें सम्मिलित होने के लिए विशेष निमन्त्रण भेजे गये थे। प्रबन्ध और प्रदर्शन के इस विशेषण की देखरेख में प्रस्तावित समारोह की सफलता सुनिश्चित थी।

प्रबन्धक किशोरीलाल के ध्यान में यह बात थी कि ऐसे समारोह की सफलता का बहुत कुछ श्रेय इसके अनुकूल उपयुक्त स्थान पर आश्रित है। इसलिए इसके लिए उनमें एक ऐसे स्थान का चयन किया था जिसमें विशालता के साथ साथ उपयुक्त सुविधाएँ भी थी। मुन्दर सरोवर कृत्रिम पहाटिया, विभिन्न रंगा में पत्ता की क्यारिया, हरियाली से आच्छादित प्राम्त

माग, तरह-तरह के फून पौधा म सजे गमले, हरी भाडिया से घिरे दस्य  
 द्यामल मैदान इस स्थान की बाह्य विनोपनाए थी। आवास निवास व लिए  
 अनेको विद्याल हवादार बमरे थे।

इसके भोज-व और बला-वद्य सबसे अपना विनोप महत्व रगत थ।  
 इनकी विशालता तथा सजावट अद्वितीय थी।

भोज-वद्य म उपयुक्त स्थाना पर अनेका विद्याल दपण दीवारा पर  
 मुसज्जित थे। उनम सुरबिपूण द्य मे इसकी द्यन पर लगे अनेका गानि  
 दीप प्रतिबिम्बित हो रहे थे। दीवारा पर कई जगह इस बग म हूण भाजा  
 के चित्र थे। फरा मुदर कानीन मे आच्छादित था। मज बुगिया उकी  
 सजावट इस बग की गिालता और मुदरता के अतुरूप थी।

इसका बला-वद्य स्वय सरस्वती के सजाए अपन बना मंदिर की तरह  
 था। हलके रंग से रगी दीवारा पर बडे उठे बजाविय मुसज्जित थे। फास,  
 इटली, जमनी और भारत की विभिन्न गलिया विभिन्न चित्रा के रूप म यहा  
 प्रतिनिधित्व पा रही था। उपयुक्त स्थाना पर मज विद्याल दपण प्रस्तुत  
 सौन्दर्य को अपनम समटक पुन एन नई छवि व साथ प्रतिबिम्बित कर  
 देने थे। फरा पर विद्ये कानीन सिद्धिया और दरवाजा पर सग पने विद्या  
 स्थाना पर रंग हूण आगन काना म रनी मूर्तिया उनक जासपाग और अन्य  
 उपयुक्त स्थाना पर मज हूण धानु गमना की सुपिन छाया-बने द्य बग व  
 बजापूण यानारण का और भा अधिन मनमोख बना रह थ। एम बग  
 मे एक उचे आगन पर मजाए हूण सगीन-भाजा को गगनर सिमी द्यति  
 था इस स्वय सरस्वती का मन्दिर बहन म आपति नहा ग मगता थी।

स्वय प्रबन्धक गिगारागत को स्थान व द्य अपन कया पर गव था।  
 एव मुसज्जित सनाराट व लिए उधे स्थान तथा मूर्तिया का आवापनाए  
 महामुग की जानी व वग उव गगनरिमता म उपलब्ध था गव थ। उमर  
 गगापना न अनेक शया का उमकी गगापना म मयात्रित बग दिया था।  
 शि म य मारे प्रगापन मान हूण म त्रितीन म उगाग म मानुम हूण परनु  
 ज्या ही मध्या न अपना गगनरिता एम मगापनी पर गगनरिमता प्रगापन बम  
 बार गगनरिता न द्य अतुनक दिया रि वनी व बजावण म बग की एव  
 थी व एव गई दीवना गगनरिता था एव है। चित्रता का प्रकाश चित्रान

इनमें सबमें जीवन मचारित और प्रवाहित कर दिया। अब इस स्थान की एक एक वस्तु में अपना विशेष आवरण था। सारा स्थान विंगण प्रकार की आवश्यक प्रकार की वस्तुओं में समय से पूर्व सजाया था जागमन के साथ-साथ प्रकाशित कर दिया गया।

प्रबन्धक किशोरीलाल ने समारोह में आमंत्रित अतिथियों के स्वागत के लिए एक विंगण समिति पहले से ही सजायित कर ली थी। वही किस पोगाव में हागा, कहा खड़ा रहेगा, किस शब्दों से आगन्तुक का स्वागत करेगा, किस तरह साथ जाकर उसे उपयुक्त स्थान पर बैठाएगा, क्या कह कर अनिधि की आवश्यकता मालूम करेगा, किस तरह अपना पता करेगा, किस तरह उत्तर निवृत्त करेगा, किस तरह वाञ्छित वस्तु पेश करेगा क्या कहकर सम्बोधित करेगा आदि अनन्त प्रश्न अपनी समिति में बैठकर उसने पूरे विवरण के साथ अपने सहयोगियों के साथ विचार विनिमय करके हल कर लिए थे। अपनी योजना को सम्पूर्ण रूप से क्रियान्वित करने के लिए समिति के सब सदस्यों ने अपने-अपने एक प्रगतिशील अनुशासन में संयोजित कर दिया था।

प्रबन्धक किशोरीलाल को अपनी सफलता पर पूर्ण विश्वास था। अनिधियों का उनका निमंत्रण पत्रों में आठ बजे शाम का समय समारोह स्थान पर पहुंचने के लिए दिया गया था। आठ बजते-बजते अतिथिगण आने लगे। आदर्य मौसम होने के कारण यही उचित समझा गया कि उन्हें प्रारम्भ में खुल भूदान में ही बैठाया जाय। उनके लिए पहले से ही यहाँ कुर्सियाँ 'सोफे' और उनके पास छाटी छोटी मेजें महमानों की सहायता का खयाल करते हुए, एक योजना से रखे हुए थे। प्रत्येक की बैठन के बाद एक औपचारिक नतमस्तक के साथ शीतल जल की मनवार हो जानी थी। और किसी सेवा के लिए साथ ही निवेदन प्रश्न कर दिया जाता था। शन शन भूदान नरन लगा। मेहमानों की वृद्धि के साथ-साथ सेवकों उपसेवकों और स्वयंसेवकों की सहायता बढ़ती सी दिखाई दी। मेजवान कार्यरत होते हुए भी अपनी औपचारिकता में स्वतंत्र से प्रतीत होते थे। किसी रेडियोग्राम के ध्वनि प्रसारक यंत्र स हलका-हलका संगीत प्रस्फुटित हो रहा था। वायु फूलों की मादक सुगन्धि से भारी था। अनेक इना की मधुर सुगन्धि इस

जहरत नहीं थी। उसका दृष्टिकोण से सामाजिक भाव, समाराह का प्राथमिक महत्व पारस्परिक मिलन की अवसर प्रदानता में था न कि उनकी भोजन प्रचुरता और महत्ता में। प्रयाजन और सिद्धांत की दृष्टि से मिलन से इतर सारे महत्व गौण थे।

पूर्ववर्णित भोजन-कर्म में विविध भोजन सामग्री अनेक। भोजन पर मुसज्जित रखी हुई थी। पूर्णिमा ने एक प्लेट में चम्मच लेकर यथेच्छा सामग्री उठाकर अपनी प्लेट में डाल ली और उस क्षेत्र की ओर होकर उसमें से खाने लगी। सभी ने यह नम दोहराया। खाना प्रारम्भ हो गया। भोजन पर रखी जिन प्लेटों अथवा स्थालिकाओं की सामग्री समाप्त हो जाती सबके पुनः रिक्त स्थालिका को उठाकर उसकी जगह भरी स्थालिका रख दत्त। इसी तरह सारी मेजा पर उठान रखने का क्रम चलता रहा। ज्या-ज्यो खाने में शिथिलता आई मेहमान परस्पर बातें करने लगे। पूर्णिमा की मनवार करने में महमान अपना गौरव समझने लगे। मनवार स्वीकार कर लेने पर उनकी खुशी का ठिकाना न रहता। कक्ष के दपठान पूर्णिमा की सौन्दर्य को वहाँ सबका मुलभ कर दिया।

अपनी जादत के अनुसार पूर्णिमा न परिचित चेहरा की तलाश में इधर उधर चारातरफ इस कक्ष में अपना नजर दौडानी गुरु की। इस समय इसके साथ प्रबन्धक किशोरीलाल थे। किशोरीलाल का यह मालूम था कि पूर्णिमा के परिचितता में कौन-कौन इस समारोह में उपस्थित हैं। इसलिए वह उसका साथ हो गया। कक्ष के एक कोने में उस चित्रकार कुमार दिव्याई दिये। उन्हें देखते ही किशोरीलाल पूर्णिमा का हाथ पकड़कर उस उसके पास ले गये।

“जानती हैं इन्हें?”

‘इन्हें कस भूल सकती हूँ।’

“र्याति पाकर गायद।

वह मेरी हीनता का निम्नतम स्तर होगा।

आक्षेप के लिए क्षमा चाहता हूँ।

आपका मुझे सब कुछ कहने का अधिकार है। आप कैसे हैं?

‘सब कुशल है।’

‘कामकाज ?’

‘सब ठीक है।

“बाई नई वृत्ति ?”

‘तुम्हारे साथ मद प्रेरणा चली गई। नई रचना कहा से लाऊ ? तुम बहुत बड़ी हो। मुझ गरीब म सभालन की शक्ति कहा है ?”

अब मैं अकेली नहीं हूँ।’

‘यह सारा समाज आपने साथ है।’

‘नहीं। मैं घर बसाने का निश्चय कर लिया है। आपको पता गाय, इसलिए नहीं चला कि आपने मुझम दिलचस्पी कम कर दी है। मित्रिये ठाकुर साहब।

पुकारन स ठाकुर साहब नजदीक आ गय। पूर्णिमा वाली—

‘मर पुराने भालिक, अनदाता श्री कुमार।’

जयसिंह ! आपकी दोस्ती का भिखारी।’ ठाकुर साहब ने कुमार से हृदय में हान मिलाया।

आप बड़े सौभाग्यवाली हैं।

दत्ता-न्ना ही तो मेरा सौभाग्य है। ठाकुर जयसिंह न पूर्णिमा की ओर सकेत करते हुए कहा। सब मुस्कराने लगे। पूर्णिमा बोली—

‘कुमार साहब ! आपके नाम म जादू है।’

“आप जिसमे जादू भर दें।

बचपन से मैं इस नाम से परिचित हूँ।’

‘फिर ?’

‘भिरी तरह वह भी एक बदनमीब था। वर्षों बीत गय उसका कोई पता नहीं है। गल्लें बदल गई। अब मिलन पर भी हम एक दूसरे को नहीं पहचान सकते।

‘चला, किन्नी बदकिस्मत के बहाने आपका याद तो आ जाता हूँ।’

‘मेरे लायक सेवा ?’ इतन म हा उमन मुना—

‘हमार ‘हृदयगर्जी’ स तो मिलिय। आवाज प्रवचक किशोरीलाल की थी।

“नमस्त, पंडितजी।



“कहिय, मिजाज गुण हैं ?”

‘आपनी शृणा ।

‘मुझे गव है कि तुम्हारे निमाण म मरा याग रहा है ।’

‘अवश्य ! इमम गव ही बरा है ?’

‘मच पर तुम्हें ‘मालविरा वरुण म मर जनावा और को\* नहा पग कर सवता था ।’

‘निदरय ही ।’

‘पर इसे मनेजर साहब नून गय ।’

‘मैं तो नही भूली हू ।

‘यह भी मालूम हा जायगा ।

जच्छा, नमस्ते । पूणिमा नकम आग बगान्धिय । प्रवचक विशारी लाल ने उसे सूचना दी कि भोज प्राय समाप्त हा चला है और मटमान वला-वक्ष म जाने के लिए उतावत हा रह हैं । पूणिमा न उसके जादग का पानन किया ।

पूणिमा को आग लकर प्रवचक किशोरीलाल सबप्रथम इस कण म प्रविष्ट हुए । शीघ्र ही सारा समाज सहूलियत स इममे आकर यथास्थान बैठ गया । गोभाचारी समाज की अनेका रमणिया पूणिमा का परिचय प्राप्त करने और उससे वार्तालाप करन के लिए व्याकुल हा रही थी । नई मुलाकात के लिए क्याकि यही समाज उपयुक्त था इसलिए उनके परिचय की व्यवस्था यही की गई थी । यहा सबको यथास्थान शान्तिपूर्वक बठ जाने के बाद पूणिमा रमणिया के बीच उनका परिचय प्राप्त करन और वार्तालाप के लिए गई । पूणिमा न उच्च समाज की इन रमणिया को उनके घर बच्चो एव रुचिया के मबध म प्रश्न किया । मगर उसे हैरानी थी कि दूमरी ओर से जो भी सवाल उसम पूछ गय थ सार उसके रूप सरक्षण और रूप-सज्जा क मबध म थे । पशन की इन पुतलियो से वह कुछ ही क्षणा मे परेशान हो गई और उसे इन कुछ ही क्षणा म उनके जीवन और समाज के प्रति दष्टिकोण का आभास मिल गया । उस उनके जीवन म वही

‘कुछ माह पहले वह स्वयं महसूस करती थी ।

‘पूणिमा अपने पाव बढाती उपस्थित

समाज की आखें उसी ओर घूम जाती। उसके इधर उधर घूमन में दपणा में सौन्दर्य सजीव हो उठता था। इस कक्ष में सबत्र कसा, रूप, यौवन के रंगों की लहरें-सी उठ रही थी और स्थानीय दपणा में प्रतिबिम्बित होने से उनमें और भी अधिक चिक्काम आ रहा था।

इधर कई महीना से पूर्णिमा की विभिन्न जीवन की विभिन्न समस्याओं की ओर—उनकी सगतिया-असगतियों की आर—दिलचम्पी बढ गई थी और जब भी उसे अवसर मिलता एक छात्रा की तरह प्रश्न करके उस पर मनन करके वह उनकी वास्तविकताओं की तरह में पहुँचन की काशिश करती। अभाव का जीवन, अंधरे का जीवन वह देख चुकी थी। घर का, अपना का प्यार उसे मिला नहीं था। रोगिणी में आकर उम यह अनुभव हो गया कि उच्च बहा जाने वाला समाज महज आदमियों की बात करता है, मगर पतन की हीनतम सीमाओं का स्पर्श करने के लिए प्रतिफल अप्रसर रहता है। उसके जीवन में इस विनापन की रोशनी के जीवन में, प्रस्तुत नाटकीय जीवन में अनेकों राजनतिक कायकर्ता व्यापारी प्रसिद्धि-प्राप्त विद्वान लेखक, अफसर, वकील, डाक्टर जज कलाकार, संपादक उद्योगपति अध्यापक आदि-आदि आय, मगर किसी ने उस पर यह छाप नहीं छोड़ी कि सिवाय धन प्राप्ति के उनके जीवन का और भी कोई उद्देश्य रहा है। इसीलिये ऐसे व्यक्तियों के प्रति उसकी रुचि कम हो गई थी, उदासीनता बढ गई थी। उत्सवों के ऐसे अवसरों पर ऐसे व्यक्तियों से उसका मिलन महज औपचारिक था। ऐसे समारोहों में उसे एक व्यक्तियों की तलाश रहती थी जो उसे जीवन के प्रति नया दृष्टिकोण दे सकें। जो उसके स्तर पर अथवा मानवीय मूल्यों का निरूपण और व्यवहार कर सकें वे ही व्यक्ति उसकी वर्तमान स्थिति में उमका आकर्षण के कारण थे। पूर्णिमा के यह इत्तम में था कि प्रस्तुत समारोह में ऐसे अनेकों व्यक्ति तारीफ लायेंगे जिनके जीवन के प्रति वास्तविक मूल्यों में कोई शक नहीं किया जा सकता। ऐसे व्यक्तियों से मुलाकात अथवा उनसे अच्छा लाभ समारोह के कायत्रम का एक अंग नहीं हो सकता यह वह अच्छी तरह जानती थी।

मेहमानों को व्यस्त रखने के लिए प्रवचकों के नाच-गायन का कायत्रम रखा हुआ था। इसलिए वे ज्यों ही अपनी-अपनी जगहों पर आसीन

हो गया गाना प्रारंभ हुआ। सबत्र शांति छा गई। सब लोग ध्यान से सुनने लग। मगर कुछ ही देर बाद परस्पर बातें होने लगी। कायत्रम चलता गया, बातें भी चलती गई। ज्यो ही गायक ने ममाप्ति का सबत किया सबत्र तालिया गूज उठा। नाच प्रारंभ हुआ। इसी तरह यह तालियो के साथ समाप्त हुआ। कायत्रम के बीच म चाय और काफी के दौर चल गये। धीरे धीरे दो-दो चार चार बरके महमानो ने छुट्टी लेनी गृह की ओर दलते दलते, समय के बीतते बीतते कला-कर्म म कवल कुछ चुने हुए व्यक्तिया का समाज रह गया।

पूणिमाने कक्ष की दीवारा पर रंग कलाचित्रो को प्रवेश करते समय सरसरी निगाह से देखा था। अब उसकी इच्छा हुई कि वह उनकी कला को समझ। अपने पुराने परिचित महारबाब श्री कुमार को साथ लेकर वह एक चित्र के पास जा खड़ी हुई। पूछा—

इसकी क्या सूची है ?

'यह तो इसको बनाने वाला ही बता सकता है।

'इन सारे कलाचित्रो क विषय म आपन म ही उत्तर हाने ?

'मभव है।

किर एक जनभिन्न की आप क म सहायता कर सारत हैं ?

'देवी पूणिमा ! मुझ प्रवचन महान्य स कुछ ही समय पहल मानम हुआ है कि इम समारोह की शाभा बढ़ान क लिए गुरुवर विन्वच पुगी न यन पधारने का यचन किया है। मरा विन्वच है कि क मरा अवय्य आयेंगे। उनन आने तर यनि तुम अपने प्रना का मुरगित रगो तो मरी आगा है कि तुम्हारी जानन की कान-कुछ कामना पूगी हो जायगी।

ओर यनि नहा हुई ?

ता मैं मममना हू कि या ता तुम गिन बहम क लिए प्रान करती हो अपवा हम बहून रवान जानता हा।

सिगी बाल को टानना हा ता क आपन गाग।

ओर सिगी का सीगना हो ता वह आपन।

किर भी मुझ का आर गिना हा मरन है।

'ओ पूणिमा ! वाग्म म बात यह है कि यन क समस्त चित्रा का

समझने के लिए भाग्यीय साहित्य और सस्कृति की एक ठोस पठ भूमि चाहिए। उसका अभाव में इन चित्रों के जन्मकार का हृदयगम नहीं किया जा सकता। मैंने यह कहकर काँटे जनक या जमगत बात नहीं कही कि तुम्हें गुस्सेर विश्वबन्धु के यहाँ आन तब अपन प्रश्नों का सुरक्षित रखना चाहिए। यहाँ पर जनक व्यक्ति केवल उनका आने की प्रतीक्षा में बैठे हैं। तुम स्वयं दयागी कि किस प्रकार उनसे साथ साथ एक गान-गागर चलता है किन रूपकर, गुनरर रूप अथवा श्राता अपनको वृत्तवृत्त्य समझने लाता है।

‘पर ! यह तो सगीत हुआ उसके लिए आप क्या सोचते हैं ?’

सगीत हुआ ही क्या ? इस अब भी तुम सगीत कहती हो ? हो हल्ले में क्या गीत होता है। सगीत के दौरान में श्रातागण कभी परस्पर बातें करते हैं ? पश्चिमीय पद्धति में ऐसी कोई कला होती होगी जहाँ बाताबाप संगीत में साथ न होता हो। भारतीय संगीत शास्त्र के अनुसार तागायक और श्रोता में एक पारस्परिक आत्मिक सम्बन्ध होना आवश्यक है। उसके अभाव में तो संगीत की भूमिका नाही बनती। सबन आ गया उस चित्र का दया।

श्रीर दशना कह वह उमे पास के ही एक जय कलाचित्र के पान ले गया। उनका आर मकेत वरत हुए उमने कहा—

यह भारतीय संगीत की परम्परा है। गायक और श्राता समझ और अनुभूति के एक ही धरानल पर जैसे स्थित हैं। दोनों एकरम हैं, एक आमा हैं। जाना के लिए विषय बाधगम्य है। जमे जानद ही जानद है। परमानन्द की प्राप्ति में जमे दोनों को सं गय हैं। पर संगीत के नाम पर राज जा मुना या जो असर एमे उलवा पर मुनाया जाता है वह तो एक नापायि वस्तु है। कुस्मित कला के, भ्रष्ट सस्कृति के ये अतिरेक मात्र । देना नहीं तुमने ? न गायक को सास्कृतिक उपयुक्त वातावरण के जान की जरूरत था न सुनने वाल संगीत में कोई दिलचस्पी ले रहे थे। कुछ रखा हुआ था इसलिए कुछ हो रहा था।

भारतीय सस्कृति में आप नए संगीत को कुछ भी महत्व नहीं दते ?

यह मैंन कब कहा, दवि पूर्णिमा ? पर सगीत तो होना चाहिए । वणप्रियता के नाम कब गता थी । ताल स्वर, छन्द-सलाग से भी नहीं मिलते थे । साहित्य को उनम कोई योजना नहीं थी । आवग, प्रत्यावग भावना प्यार बरुणा कुछ भी तो नहीं थे । कहानी नहीं थी वणन नहा था, गजल नहीं थी टुमरी नहीं थी, गीत नहीं था । रोना हसना मौन वार्ता किसी की तारीफ म भी तो यह सगीत नहीं आता था । जान और सापना हीन हाथा म पडने से कला की बही दुगति सबत्र होती है । उपनिषदा क सूत्रो की तरह कला के मम को भी सीखना और साधना पडता है और तब वही कला के सौदम को ग्रहण करन की शक्ति सस्कारो के अनुमार साधक म आती है ।'

पूर्णिमा अपने सामने के चित्र को एकटक देखती रही । कुछ क्षण विरम कर कुमार कहन लगा—

देखी पूर्णिमा ! सगीत के सम्बन्ध मे यही इसी कक्ष म मैं तुम्ह एक प्रतिनिधि चित्र दिखाता हू । कुछ कदम उस काने तक तुम्हें चलना होगा । और इतना कह वह उस निर्देशित स्थान के पास ले गया । अब वे दाना एक कलाचित्र के नामने थे जिसम आमावरी रागिनी चित्रित थी । विषय चित्र के नीचे ही लिखा हुआ था इसलिए पूर्णिमा को प्रश्न करने की जरूरत नहीं रही । कुमार बोला—

क्या समझा ?

रागिनी चित्रित है ।'

'कसी ?'

सुबह की ।

कितना सुबह ?

काफी दिन चढ गया है ।

बिलकुल ठीक ।

पाम म क्या है ?

'हरिणी ।

भोलेपन की प्रतीक है । और क्या देखती हो ?'

देड ।

“पर एक ही क्यों ?”

“अकेलेपन और एकांत का प्रतीक ।”

“और ? कुछ दूर पर चित्र से दिखाई देने है । क्या ?”

स्पष्ट नहीं है।”

‘मतलब है भाथी को गए काफी दूरी हो गई है । प्रतीक्षा है । इसी लिए चित्रिता की नजर दूर पश्चिम्हो की दिशा में है । दूरी पूर्णिमा । अब एक रमणीकी कल्पना करो जा अभिसारिका हो जयवा जो उपरोक्त कथित आवेश में हो । रागिनीके आरोह-अवरोह एवं वाणी सवादीस्वरोके अलापने ही इन भावनाओं की प्रतीक एक मूर्ति खड़ी हो जायगी । स्वयं गायिका यदि उन भावनाओं की प्रतिमूर्ति बन सके तो रागिनी स्वयं मूर्तिवान् हो जायगी । वह संगीत का एक प्रारम्भिक आनन्द स्पष्ट होगा । फिर आग कल्पना है, विभिन्न भावनाएँ हैं विभिन्न रस है । आत्मनिष्ठ दृष्टिकाण से उठकर व्यक्ति जब वस्तुनिष्ठ अथवा व्यक्ति निरपेक्ष रूप में अपनेका रसित देगा तब सारा ससार—पशु, पक्षी पीछे धरती, आकाश सब उसके अपने हो जायेंगे । एकांत में वे सब साथी की तरह उसके हृदय के विरह को प्यार को, वाता को पुकार को सबको सुनेंगे और समझेंगे । यही इस चित्र की कला है । भारतीय संस्कृति में ओतप्रोत एकात्मवात् को यदि कोई नहीं समझे तो वह उसके साहित्य, संगीत, चित्र, मूर्ति जीवन किसी को कुछ नहीं समझ सकता ।

पूर्णिमा एक मुग्धा की तरह अब इस चित्र को देखने लगी । मगर कुछ ही क्षणों में उसने सुना—

“वि पूर्णिमा ! गुरुवर विश्ववधु तशरीफ ले आए है ।”

पूर्णिमा का ध्यान नवाग-तुकों की ओर जाकूट हो गया । उसने देखा कि एक दिव्य मूर्ति कुछ व्यक्तियों के साथ इस कक्ष में प्रविष्ट कर गई है । एक युवक उसके साथ साथ बराबर में बातें करता हुआ चल रहा है । वे सीधे एक निर्दिष्ट आसन पर जाकर बैठ गये ।

प्रबोधक ने उनकी आवभगत की । कुमार ने नमस्कार किया । पूर्णिमा ने भी पास जाकर प्रणाम किया । उसका ध्यान नवाग-तुक युवक की ओर गया । उसने उसे देखा, परन्तु तुरन्त दृष्टि समेट ली । पुनः उसकी दृष्टि

पर गई। दलित मन्त्र पाइ उगव पटन ही पूर्णिमा ने सुना—

‘वहिय, “बीजा ! जाना ?’

जी ! बुद्ध नहीं।

जापने मरी धार रंगा ?

जी।

एक बार नहीं। दो बार वृषा का।’

बसे हो।

यह गनन है। भारत का एक सार, दशना जावस्मिक हा सवता है।

वषा मतलब ? प्रश्न विश्वमधु का था।

‘दुवाग दष्टि प्रयोजनील हाती ह। क्या देवाजी ?’ सब हसन लगे। पूर्णिमा न भा मुस्करा दिया। उमने सुना वहिय ! वह बठ गई। युवक बोला—

हा ना मैं कह रहा था कि कना क नाम पर जाज जा भारत म व्यापार चलना हे उमस कला और वास्तविक कनाकारा को वाई कायदा नहो। जाव चरिन साधना से नही विनापन स बलाकार बाने की चेष्टा करता ह। जनेना रपातिप्राप्त लेखक है जो स्वयं लिखना नहा जानते। पण व ऊपर जिह आप गाते हुए दसते हैं वे स्वयं नहीं गाते, जो मञ्जल या गीत आप जिसक नाम क सुनते हैं व उनर जिन्हे हुए ही नही होने। यही बात चिना म है। तही बात मगीत म है। और क्या कहू ऐसी ही बात आजकल नारी के यौवन और नौदय म भी पहुच गई है।

‘बस ?’

मिस्टर कुमार ! आप इम पद्य का नही समझने। परन्तु अभी बुद्ध दिन हुए आज जम ही एक समाराह म मर एक मित्र ! कहा कि उनके एक मित्र कई मास से एक लडकी क प्रेम म पागल हुए फिर रहे थ। जागे यदि आप इजाजत दें ता जज कर ?

‘जबश्य जबश्य !’

एक दिन रात को वे प्रेम क आवस म उसन घर चले गय। कमरे का रवाजा खटखटाया। जावाज आई—कौन ? उत्तर मिलने पर स्वर पह पातर बोली। जरा ठहरिय, मैं अभी पस हाने लायक नहीं ह। भला

मानुष अपनी उत्सुकता में एक छिद्र में प्रेयमा के कमरे में टखन लगा। दया, उसका सरगजा था। उमन बालाकी एक विंग जपन मिर पर रख नी। मुह में दात नहीं थे पास पड़े दात मुह में लगा लिए। जाख मसली गौर फिर दया कि अब वह नक्ली ब्रेस्टस यानि उराज अपनी चाला में गया रहा ह। उसे पमीना आ गया। मुह से 'तोवा' निकल पडा। उमके पंग हान लायक बनने में अभी देरी थी। बिना प्रतीक्षा किए हा विचारग तुरन्त धर लौट जाया।

फिर ?'

'फिर क्या। व्यापारिक प्रवृत्ति किन में कटा तक पहुंच गई है इसका यह एक ज्वलन्त उदाहरण है। इसी तरह यदि स्त्रा ममाज मुझे इजाजत ता मैं एक किस्सा नतिकता पर सुना सकता हूँ।'

जरूर।

'जाप और हम सब जानते हैं कि हमारे आज जैसे ममागहा के अवसर पर भोजन के बाद ऐसी ही किस्से-कहानियों से हमारा सन्ध समान गिन घटनाता है। स्वस्थ परम्पराजा का कितना जभाव है ममाज में व्यक्ति की जीवना कितना अनप्त है यह तथ्य इन किस्सा से दगूबा मानूम ही सकता है। हा ता मैं एक सभ्य पुरुष का कहन सुना कि एक गाव में गहर नहीं एक परिवार रहता था। मा बाप बहिन भाई। लडका जब बडा हुआ ता उमने अपन पिता से कहा कि उसकी गादी उमी गाव की एक लडका में कर दी जाय। पिता ने कहा कि वह जमुक लडकी उसका सौतेली बहिन है। गानी नहीं हो सकती। दुबारा उसने दूसरी लडकी के लिए कहा और उमके सम्बन्ध में उसने बही बात सुनी। तीन बार चार बार जलग अलग पमन् की लडकिया को कहने पर भी पिता ने बही बात दाहगाई। लडका परैगान हा गया। एक दिन उमने अपनी मा को अपनी पसन्द और उमके सम्बन्ध में अपन पिता से हुई बातचीत को दोहराया। मा बाली— बटा। न चा- निमने गानी कर यह तेरा बाप ही नहीं है। सुनकर पुरुष हमने ला। मगर उन्हां सुना—

हमने की बात नहीं है। सस्वृति और परम्परा के लिए जागू बहान का ज्ञात है। आग के मनारोह का समय हम मानूम था। चलन का ममद



हुआ तो विश्ववधुनी ने ही परमाया कि ठहरकर चलेंगे। मरे इमरार करने पर वाले—बहा का गाना गाना पहले ममाप्त हो जाने दा। मैंने पूछा—  
 'देर में चलन से फायदा ' तो बोले—'कोई नुकमान नहीं है। क्या देवीजी ' मैं गलत तो नहीं हूँ ?'

'जी नहीं।'

आप कुछ परमाइय।'

'मुझमें बोलने का गान ही कहा है ?'

'फिर भी।'

जीवन का उद्देश्य जानना चाहती हूँ ?

'सुख और उत्पत्ति।

किसी से य न बन ?

यह और बात है।

फिर क्या करें ?'

प्रयाम।

बब तक ?

'जब तक जीवन हो।'

यह तो क्षणभंगुर है।

जीवन नहीं। मरी आपकी 'यकिल की जीवनी क्षणभंगुर है। जीवन अमर है।

कम ?

आज से हजारों—बलि लाखों वर्ष पहले जीवन था 'गायद मनुष्य भी था। आज भी है। आयु भी रहेगा। मिक हय और आप ही नहीं य। आयु भी नहीं रहेगा। हमारे न रहने से जीवन व अमिन्न म कोई फल नहीं जाना। यही उत्पत्तिजन्य जीवन मरता है।

'पुनजम ?

होता होगा। परन्तु उत्पत्ति ही पुनजम की शृंगला है। इमम भिन्न पुनजम की कहानी मेरी समझ में नहीं आता। पड से बीज जमीन पर गिरता है। पानी मिलने से फूटता है पोषा बनता है येड बन जाता है उमी अमम। परन्तु वह बीज नहीं रहता। उमी तरह म यह शरीर नष्ट होन व

बाद पुन यह गरीर नती रहता । यह प्राकृतिक नियम है । यही वडा द्वारा निर्देशित ऋत सत्य है । बाकी कल्पना है ।

कारी कल्पना ?

कोरी नहीं । स्वाथपूण कल्पना । समाज के स्वाथ के लिए शायद, उमके कल्याण के लिए भी । परन्तु इसके सत्य होने मे मुझे सदेह है ।" सुन कर पूर्णिमा चुप हो गई । मगर, उपस्थित वद न हृदयेग को धोनते हुए मुना—

'कुमार ! यहा समाज गुरुभेव विश्ववधु को सुनन क लिए वटा है । सन्वृतिहीन सस्कारा के उद्रक के लिए तुम बहुत समय ले चुके । हम मज बूर होकर ऐमा कहना पड रहा है ।'

'हृदयेशजी ! मैंने सस्कार पडे नहीं है, न खरीद हैं । न सुनकर उह अपनाया या छोडा है । मैं वतमान म पला हू । अपनी पीडी मे परिचित और मजग हू । अपने अनुभव और समझ के आधार पर कुछ गलत भी करू तो उम पर मुझे गौरव है । मैं दूसरा मे उधार ली हुई बुद्धि का पशपाती नहा हू ।

जानते हो अपना कितना वडा नुकसान कर रह हा ?'

'कुमार जीवन म नुकसान को नुकसान समझना ही नहीं । वह जानता है कि यकित के जीवन मे उसक स्वय के जीवन के नुकसान से ज्वाग और कोई नुकसान नहा होता । और वह नुकसान निश्चित है । इम नुकसान के मुझावल म अथ सारे नुकसान नगण्य है । चाहे व स्वास्थ्य के हा, सपत्ति क हा यग के हो ।'

'मुना हृदयेशजी ?'

'हृदयेशजी आपको सुनना चाहत हैं ।

'चर्चा अच्छी चल रही थी । खर ।'

"आप सब खा-पी चुके ?"

'जी ।

"आर कुछ परमाश्ये हृदयेशजी ।"

'हम सत्र तो आपके प्रवचन के इच्छुस हैं ।

मुझे इस कुमार मे एक नई ज्योति मिली है । समाज-शास्त्री, सतीतन,

साहित्यिक कलाकार, चित्रकार जीर भी न जाने क्या क्या। वह क्या कहा है सिर्फ यही मालूम नहीं है।'

'गुरुदेव, अभी धाड़ी दर पहले दवा पूर्णिमा ने इस बक्ष म लग कला चित्रा के मम को जानने की इच्छा प्रकट की थी।

'फिर ?

मैं तो यही कहा कि गुरुदेव तशरीफ लाने वाल है। वे तुम्हारी उत्सुकता की पूर्ति कर देंगे।

तुमन इनकी सहायता क्या नही की ?

जिनासु साधारण नहीं है गुरुदेव। जाप ही कृपा कीजिए। बातचीत के मिलमिले म एक परिवर्तन जा गया जो सबके लिए शक्ति था। उन्मिषित बृद्ध में जो कलाचित्रा में त्रिलोचनी रखने म उठकर एक चित्र के सामने चल गए। इनमें विश्वत्रु धु दोना कुमार पूर्णिमा जीर किगारीलान गानि ये। महाकवि कालीदास के गुरुतला नाटक के कुछ ममंगील दृश्या की भजन यहां चित्रित थी। एक जय चित्र मधुन स सम्बंध रखता था। विश्वत्रु ने काली गस मम्ब की चित्रावलि के चारा पाचा चित्रा की ओर अपनी दृष्टि दौड़ाई। फिर एक निश्चयात्मक स्वर से उहाने कहा—

'देवि पूर्णिमा ! तुम्हारी क्या शका है ?

"मैं चित्रा क सम्बंध म विनायित हाना चाहती हू।

तुमने गुरुतला पनी है ?

जी।

फिर समझना मुश्किल नहीं है। यन् दृश्य वह है जब वह अपनी गंगी के साथ कण्ठ श्रुति के आश्रम के उपवन में अपने प्रम क आवग म जा रही है। राह म एन लना पड के सहारे म दूर पडा है। एम उगारर यन् उम पड के सहारे चगा दनी है। यही भाव इनमें चित्रित है। क्या ?

यही तो पूछनी हू।

यहां सतानारी का प्रतीक है। पड पुष्प का परिचायक ह। गुरुतला स्वयं उम भावना का प्रतीक है जो एम मिलन की इच्छा से जीर जो एम मित्रन म मग्यन टा। महाकवि का यह सूत्री है कि उमन पात्र मनुष्या तन ही सीमित नहीं है। समस्त प्रकृति उसका पात्र यवम्या म

गामिन है। पुरुष, स्त्री, पशु, पक्षी वनस्पति, मेघ पहाड़, नदिया आदि जाति सब परस्पर एक दूसरे के पूरक आर परस्पर सवेदनशील हैं। विश्व एक्य की भावना को यदि जिनासु अपने हृदय में जगह दे सकें तो इन कला चित्रा को समझने में फिर बाधा नहीं आ सकती। हमारी वस्तुकला, संगीत कला, चित्रकला, साहित्य धर्म, सृष्टि—मार इस एक विश्व प्रेम की भावना में आतप्रोत है। प्रच्छन्न का प्रकटीकरण अथवा का यक्त, असीमित को सामित, अमूर्त को मूर्त इसी एक सिद्धांत और प्रतीक के आधार पर हम करते हैं। मेरे कथन को समझने, स्वीकारने और हृदयगम करने के बाद कालौदास चित्रावलि को समझने में बहुत आसानी हो जाती है। देवी पूर्णिमा ! जब तय चित्रा का देखो। शकुंतला की अपन समुराल विदाई के अवसर पर ऋषि कश्यप के जाग्रह पर वनस्थली के पड़ो द्वारा वस्त्रादि के विविध उपहारा की बातें जब तुम्हें असंगत नहीं मालूम दगी। इसी तरह यश द्वारा मेघ को अपना सद्गवाहक बनाने में कोई अत्युक्ति नहीं है। हमारे प्राचीन साहित्य की सारी सृष्टि इस विश्व एकात्मभाव में मजी हुई है। मारा विश्व हमारे लिए सबदत्तशील हो यह हमारी समस्त सृष्टि का आदर्श है।'

सुनकर पूर्णिमा के चेहरे पर प्रसन्नता और तपस्वि की स्पष्ट रेखाएँ आच्छादित हो गईं। उनकी दृष्टि इन कलाचित्रों से हटी नहीं और जितना ही उनमें उन्हें देखा उनमें जाने की सीमा उतनी ही अधिक होती गई। क्षणिक के विराम के बाद ही उसने मुना— 'हमारा धर्म हमारी सृष्टि, हमारी ललितकलाएँ वास्तव में एक दूसरे की पूरक तथा प्रतीकात्मक हैं और यह सब हमारा जीवन है।

जीवन ?

निश्चय ही। और इसीलिए यह सब सनातन है।

यदि अपन वक्तव्य का स्पष्टीकरण करने की कृपा करें तो ।

भारत में धर्म अथवा धर्मों की तरह एक पुस्तक में कभी सीमित नहीं किया गया। जिससे जैसा हमारा जीवन चले वहा यहा धर्म है। नारदाय के लिए यह एक धार्मिक परम्परा है कि ब्राह्म मुझ में उपाकाल में उठ नित्य कम से निवृत्त हो, सूर्योदय से पहले स्नान आदि करे। पूजा कीर्तन,

पाठ प्रायना सध्यादि अन्वी निष्ठा के अनुसार करे। फिर ला पीकर अपन व्यावहारिक जीवन में आश्रम मर्यादा के अनुसार लग जाय। सध्या के बाद और गयन के पहले अपन इष्ट में पूज जास्था रखते हुए ससार का भला चाहते हुए आराम से सो जाय। जब यदि इस दैनिक कामधर्म का विश्लेषी करण कोई करे तो उसे मालूम होगा कि मुग्यत वे शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के नियम है। समाज का एक पुष्ट शरीर व पुष्ट मस्तिष्क देने की यह एक सामाजिक योजना मात्र है जिसे कायरूप में मानते हुए समाजहीन यत्नित्व से हेय नहीं होता। भारतीय बनने के लिए यह जरूरी नहीं कि वह एक ईश्वर का ही मान साकार को माने, निराकार को माने दोनों को माने। किसी प्रकार की भायता अभिव्यक्ति भारतीय के लिए धर्म-दृष्टि से बाधक नहीं है। यहा मष्टि के आदि साहित्य बना ने प्रश्न किया यह गमन क्या है क्या है क्या है? कल्पना की साचा मनन किया और बाले— यत्न विश्व प्रकृति के एक सनातन नियम में बधा हुआ है और प्राकृति नियम ही एवमात्र सत्य है। गन-ज्ञान यह सत्य एक गति बन गया। यही शक्ति समयान्तर में श्रद्धा विष्णु, महेश और फिर इन्द्रादि देव शैवियों की विभिन्न शक्तियों में प्रतीका में परिवर्तित हो गई। जिन मनीषियों ने इन प्रतीकों को सजाया अथवा संहारा के हमारे ऋषि महर्षि अथवा आचार्य बना गए। हमारी तलितकनाए साहित्य सगीत धाम्नु निमाण त्रि— गभा इन प्रतीकों में परिवर्तित बन गए। परन्तु हमारे धर्म संहति अथवा जीवन का प्रभाव बड़ा रहा नहीं। प्रगति विज्ञान उद्भव में हम जीवित व मर्यादा मूल्या से उन्मत्त नहीं हुए। हम उन गिर फिर उठे जीर बड़की हमारी संहति का इतिहास है। आत्र म पूजा पाठ सध्या त्नी करण परन्तु स्वयं जीवना हमारा सध्या पूजा हा है है। हम प्राधान्य गीर्षों पर त्नी जा। परन्तु अपना सहायक के लिए हमारा भाग्य नागत आदि सुगतामात योत्र तात्रा को तल तादस्यता में परिवर्तित बन गया है। अदि पूर्णिमा! विषय ताता शिवा है कि अभी जगतगत में बना त्नी शिवा जा गता। और यही गत ग। त म तम हमारे कुमार में जान गता हा।

पूर्णिमा नकुमार का जार रगा। बरु बाता—

अदि पूर्णिमा! तु इतिवदन्तु काय मर्यादा है कि व अन्वी

उपस्थिति में हम जस धुंध बुद्धि को बोलने मुनने का जवमर देने हैं। वास्तविक तथ्य तो यह है कि वे थोड़े में बहुत कुछ कह गये। हमारे जीवन के अनेक अंग का उन्होंने अपने सक्षिप्त वक्तव्य में स्पष्ट कर दिया है। मानव की आन्तरिक भावनाओं को उसके प्राकृतिक आवेशों को, उत्साहित रूप में पेश करने का नाम ही कला है चाहे वह साहित्य से हो, संगीत के जरिये से हो अथवा चित्र और मूर्तिकला में हो। उत्साहित रूप में ही भावावेश का सबद अथवा प्रतिवेदन कलाकार की सामाजिकता है। जिस भावावेश को हम अपने गृहस्थ में अजीजा और बुजुर्गों के सामने, छोटे बच्चे की उपस्थिति में स्वतंत्रता से बिना हिचक के नहीं रख सकते उस समाज के समक्ष भी रखने में हम पर रोक हानी चाहिए। हमारी कला अथवा कोई कला अथवा उसका रूप तभी गतिशाली और प्राणवान है, यदि वह एक अभीष्ट उत्साहित आवरण कलाकार को, उस भावावेश को समाज के समक्ष पेश करने का अवसर दे सके। हमारी राग रागिनियाँ न सात स्वरो की विशिष्ट प्रणाली में इस भावना को व्यक्त किया है। साहित्य ने शब्दों में इसकी अभिव्यक्ति की है। चित्रकला में रत्नों और रंगों से इसको मूर्त किया गया है। अनीत और आगत परिस्थितियों के साथ यदि अनागत के लिए भी इसमें प्रेरणा है तो यह एक प्रगतिशील कला का उदात्तरण सिद्ध होगा।

पूर्णिमा मन्त्रमुग्ध सी कुमार की बातों को सुनती रही। कुमार ने क्षणिक के लिए अपनी विनोद श्रोत्री पूर्णिमा की आँखों में देखा। कुछ विरमकर यह पुनः बोल उठा—

‘देवि पूर्णिमा ! शांत सागर के आवेशों का ज्वलांत हम उसमें उठने वाली लहरी से लगाते हैं। शांत हृदय में उठने वाले आवेशों की अभिव्यक्ति ये हमारे कलारूप हैं। इन रूपा से हम परस्पर एक दूसरे को पहचानते हैं एक-दूसरे को पुकारते हैं प्यार करते हैं मांग-दान देने हैं। एक युग की वेदना को परम्परा की अथ युगों की पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रखते हैं। जो युग युग की पुकार है युग युग के लिए सवेदाशील है साथ ही सामाजिक व प्रगतिशील है वही वास्तविक और सनातन कला का मूर्त रूप है।

अपने वचनव्य को पूर्णिमा ने कहा तक हृदयगम किया है इसे देखने

के लिए कुमार कुछ एक क्षण पुन चुप हो गया। परन्तु, जब उस "म बात का यरीन हा गया कि पूर्णिमा की कही हुई बात अरुणरोत्न नगी है उसन पुन कहना गुन किया—

रबी पूर्णिमा । सूर्यम समान की जात हमारी कलाए पगति करती हैं। इ सान क हृदय म उठन वाले भाव जथवा आवेग गति सूक्ष्म हात हैं। व्यक्ति उन उठन वाल आवगा के अनुकूल बातता है पुरारता है चाउता है स्मित होता ह हसता है आदि जादि। इन आवगोका अपना कला म, अपनी गगीतकला म सात स्वरा की एक विगेष बदिग स एन रागिनी म हम यथा आवेग एक उत्सान्ति रूप लेते ह। इम उत्सान्ति रूप को और अधिक मूत्त बनाने क लिए हम साहित्य का शररचना का, भाषा का सहारा लेत है। उरी आवगा को आर अधिक मूत्त बनाने क लिए हमारा चित्रकला क मत्तिकला है। जार इन समस्त उत्सादित आवेगा की सम्पूण कलामय सगम हमारी नत्यगली है।

कुमार ने पुन पूर्णिमा पर अपनी बात का प्रभाव दग्ने की दृष्टि सं कुछ क्षण क लिए चुप्पी साध ली। उमन सुना—

जाप फरमादये। वह वाना—

सिवाय भारत के ससार म आज तक ससारचक्र को सृष्टि के प्राकृतिक नियम को, सम्पूण विश्व की सबलित और सजटिल क्रिया गति एव गली को किसी कलाकार न अपनी कला मे मत्त नही किया है। उस सामन की मूर्त्ति का दसो पूर्णिमा। हमारे दक्षिण भारत की यह विश्व को एक देन है। नटराज शंकर की यह कलामूर्त्ति वहा तक उस सूक्ष्मतम नियम की परिचायक है यह ता एक दार्शनिक ही कह सकता है फिर भी इतना आभास सरलता से एक साधारण विवेकशील व्यक्ति का भी मित जाता ह कि कलाकार न सृष्टि सचातन की अभिव्यक्ति एन साकार रूप म किम प्रकार की है। विश्व एक गालाकारधर म चटित है। उसर चारा आर सजीव जग्नि गिखाए—ज्वालाए मौजूद है जो विविध प्रकार की बातजनिनी हैं। घेरे म बीचाबीच जादित्व गकर एन सबन गतिगाल नत्य मुद्रा म प्रदग्ित है। य जग्नि गिमाए दश-वान की असीमितता का एक असीम का व्यवन करती हैं। स्वय गकर अपन अग की हर मुद्रा म गनिगीत हैं। उदता

प्रिय मातृ डमरू उनके अलवाररूपी मय, उनके वस्त्र मय एक सजीव गति क सूचक हैं। उनके हाथा की मुद्राएँ कल्याण सूचक नियम-वाचक और जीवन और मयु की द्योतर हैं। मूर्तिभार का अभिप्राय है कि साग विश्व एक प्राकृतिक नियम में बंधा हुआ है जो कल्याणकारी है। जीवन और मयु विश्व में एक अमर कहानी हैं। उत्पत्ति और नाश विषय सजीव प्रकृति की घटनाओं का मचीबत्ता है। न जीवन है न मरण है न दाना घटनाएँ हैं। विश्व में घटनाओं का मिश्रण और कुछ नहीं होता और ये घटनाएँ कारण-कारण के रूप में विश्व गति का एक प्रवाह माने हैं। यह प्रवाह अमर है। अज्ञान रोना नहीं जा सकता। इसके विरुद्ध चला नहीं जा सकता। प्रकृति का नियम का अनुकूल चलने में साधकता है। यही जीवन है यही ज्ञान है, व्यक्ति है सामाजिकता है। इन नियमों का प्रतिफलता अज्ञान है यथा 'दुःख है भूतना है निपमता है। मूर्ति की आरंभ दो, त्रि पूर्णिमा'। 'म मित्रा की प्रताप यह शिव मूर्ति एक ठाम जमीन पर पड़ी है। मसार की मारों विभिन्नता का जो घरे की शून्यता में प्रकृतित है जो माय ही तन ज्ञान और अज्ञान समय का सूचक है 'म एक प्राकृतिक सिद्धांत में स्थानांतरण, निवचन और व्याख्या की जा सकती है। व्यक्ति, समाज, नाति धर्म, राष्ट्र विश्व—मार इस प्राकृतिक नियम के अधीन है। इनके उत्पन्न में अज्ञान प्रकृतिकता में बंधा है विपमता है अस्वायीपन है। यदि तुमने श्रावण भगवद्गोता की पत्नी या सुना है तो तुम्हें प्राकृतिक द्वारा ज्ञान का स्पष्ट विराट् रूप के ज्ञान करने की बात अवश्य ध्यान देनी चाहिए। जमा विराट् रूप का मूर्तिकला में यह प्रतिनिधि मूर्ति है। और क्या कहूँ? यदि तुम कुछ प्रश्न करो तो मैं इस मूर्ति का आरंभ स्पष्टीकरण तुमसे कर सकता हूँ।

‘मसार में ता विभिन्न स्वर बोधिया हैं।

अवश्य। 'राकरणाचार्य पाणिनि ने समस्त स्वरों का—शक्ति स्वर व्यंजना का उत्पत्ति गिन के समस्त-नाम ही माना है। 'अ इ उ ण स ह न तन सूत्रा का व्याख्या यदि कोई सिद्धांत रामुणी व्याकरण से पड़े तो जो यह प्रश्न करने की आवश्यकता ही नहीं होगी। अज्ञान को पूर्णरूप से समझने के लिए समुचित पृष्ठभूमि भी तो चाहिए, त्रि पूर्णिमा'।



‘ विभिन्न रग ?

‘ आग की ज्वाला आ म की गाय रह जाता है \*रि पूणिमा ?

‘ मैं गमन गई । परन्तु गगार की विभिन्न गूणों \*र ?

‘ मूर्ति स्वयं मूर्त जोर \*र का प्रतीक नहीं है \*रि पूणिमा ?  
यह ना पुण्य का प्रतीक है ।

‘ और ज्वाला द्वारा रीत गता ?

मैं गमभी ।

जोर गुना । स्वयं गिय अन्वारा स मुग्जित है । य अन्वारा विभिन्न सौत्य क प्रताप है । उरा वस्त्र ससार म गामाजिकता का आवरण है । मस्तिष्क पर अध बालाद्र पनी कल्पना निरन्तर बढ़ती गति, सौत्य विहार और भाग र परिचायक है ।

मुनकर पूणिमा प्रहसित हा उठी । क्षणएक क विराम के बा उसन पुन गुना—

ध्यान स दखो पूणिमा ! स्वयं आदिदेव गकर एक नत्य की मुद्रा म हैं जा एक विगप भाव की छातक है । इगमें स्वर है लय है ताल है मुना है व्यक्तित्व है । यन् जिवाला क रगा की भावा का प्रतीक माना तो तुम्ह हरे म आगा नील म गहराई लाल म भय, पील म जान काल म अज्ञान की प्रतिनिधि भावनाए प्रविष्ट मिलेंगी । कला को जानन जोर हृदयगम करन के लिए यह आवश्यक है कि जिनामु तत्सम्बन्धी प्रताका का पहले समझे उनका जान प्राप्त करे । यह सब कलाआ मे ललितकलाआ म विगेपकर भारतीय ललितकलाआ म प्रवेग पाने क लिए आवश्यक है ।

कुमार का वक्तव्य गायद अभी समाप्त हुआ था । परन्तु ठीक अपने वाक्य की समाप्ति पर उसने मुना कि किसी ने तानपूरे पर सा प स्वरो को छेडना गुरु कर दिया है । कुमार बहुत कुछ और कहना चाहता था । पूणिमा भी और सुनना चाहती थी मगर स्वरो के आलाप को सुनकर वे चुपचाप एक पास के ही आसन पर बठ गय । सूर जोर मीरा के दो भजन गायक न गाये । सुनकर उपस्थित समाज के हृदयो मे आनन्द की लहर सी दौड गई । साधुवाद के गब्द चारो ओर मुनाई देने लगे तालिया बजी ।

कुमार के मुह स इस बार शब्द निकले—

‘स्वण ! सुना तुमन ?’

पूणिमा सुनकर एकाएक चौंक पड़ी। उमन कुमार की आंखा में देखा। वह बोली—

‘क्या नाम पुकारा तुमन ?’

‘देवि पूणिमा !’

‘नहीं, नहीं। तुमने अभी क्या नाम लिया। यह नाम तुम्हें किसने बताया ?’

‘मुझसे गलती हो गई।’

‘नहीं, कुमार। तुमने मुझे पहचाना क्या ?’

‘देवि पूणिमा, यह समाज है।’

‘यह मैं जानती हूँ। तुम सत्य के जलावा और काई नहीं हो सकते। बीना, कुमार। तुम सत्य जान ? कहा रह तुम अब तक, बोला ? मैं जानती हूँ, भरे इस नाम का दुनिया में और काई नहीं जानता।’

‘देवि पूणिमा !’

‘हम बाहर चलें, सत्य। मैं आवेग मैं हूँ। यदि दुनिया का खयाल है, समाज का सकोच है तो अविलम्ब तुम भर पीछे-पीछे आ जाओ। और किसी तरह मैं सामाजिकता नहीं रख सकती।’ वह उठ खड़ी हुई। कुमार बग रहा। मगर उसने सुना—

‘सुना नहीं, कुमार ?’

‘वह कहा कि बाहर चली गई। कुमार जब पीछे पीछे चला गया।

बाहर बड़ा मुहावना मौसम था। बग में मधुर संगीत चल रहा था। चण्डमा की रोगनी में महकने हुए फूलों की भाडिया के बीच से एक गुदर हीज के सहार चले गए। पूणिमा बोली—

‘आज शरीर दस वर्ष में भी अधिक् हो गए। सत्य ! तुम कहा चल गए थे ? पिताजी की मृत्यु के बाद सोनेना माने मुझे घर से निकलने पर मजबूर कर दिया। मुझे आश्रय की जरूरत थी। परन्तु, मह सब बहुत लंबी कहाना है। तुम नहीं सुन सकते। मैं कह भी नहीं सकती।’

उसका आंखों में आंसू आ गए। उसने अपनी बांह सत्य के गले दान दी। उसकी गरम-गरमा को उमन अपने बग पर

पूणिमा की आखास निकल हुए जामू गरम थे यह उसे उनके अपने बाजुआ पर पडने से मालूम हा गया। उमन अपने हाथा से पूणिमा की आखें पाड दी। कइ शण वे इसी स्थिति म बठे रह। कुछ क्षणा के बाद पूणिमा पुन स्वस्थ चित्त हो गई। वह बोली—

‘मने बहुत प्रतीक्षा की। घर से निकलन के बाद तुम्हारे बहुत तलाश की।

‘अब सब ठीक हो जायगा स्वण !

‘तुमा बहुत ढेरी कर दी सत्य ! पूणिमा ने पुन कुमार का पकड लिगा। वह बोला—

जब कही नहीं जाऊगा स्वण !

तुम नहीं जानते सत्य, जब तक क्या क्या हो गया है ?

कुत्र भी हुआ हो तुम मरी हो स्वण !

‘नहीं सत्य तुम नहीं समझत। मैं कह नहीं सकती। तुम सुन भी नहीं सकागे।

बीती हुई बात की जान दो आज भी हम एक दूसरे को प्यार करते हैं, इससे यह मिद्ध है कि गत कुछ भी सराव नहीं था। कम से कम उमन हमारी जात्माजा का नहीं गिराया। परम्पर हमारी भावनाए आज भी बसी ही है इसलिए जो कुछ गुजरा वह सब सुच्छ था नगण्य था। कुछ क्षण के लिए पुन वे एक दूसरे की वाहा म उलझ-से गये। कुमार बोला—

स्वण हम यहा एकांत म आये बहुत दरी हो गई है।

‘समाज का भय रमकर मर माव रह सकागे ?

मुझे अपने लिए कोई भय नहा है।

‘समाज के भय को तो मैं कभी का त्याग चुकी।

‘क्या मतलब ?

“दुनिया बहुत सराव है सत्य। विशेषकर नारी के लिए। आथय के बिना जीवन और सो इय उमके लिए अभिगाप हैं। मैंन नारीव को छोडकर इस अभिगाप जीवन को बचाया है। नारा के य अभिगाप आज भी गेप है। जब य पूजा के पून नहीं रह। उपहार की वस्तुए भी नहीं रहा। बाजार गौरे को तुम्हारे अपण कम कर, सत्य ? इन अमामाजिक पापमयी जीवनी

का ममपण अब कैसे होगा ?”

पूर्णिमा न अपने आवेश में पुन एक बार मृत्यु को अपनी बाहों में बांध लिया। इस बार वह मृत्यु के चेहरे में, उसकी जात्रा में एक दयनायक भूति बनी देग रही थी। मृत्यु न देखा कि उसकी जात्रा में मजलता है प्यास है एक अभाव की। उसने चाद की ओर देखा। वह चमक रहा था। उसने महसूस किया कि पूर्णिमा का मुह उसकी ओर अधिक समीप आ गया है। उसने पूर्णिमा को अपना सबल बाहों में बसा लिया। दोनों की श्वाभों तारतम्य हाँ चलीं। उसने अपने हाथ पूर्णिमा के अधरा पर लगा दिये। एक विरम्बित चुम्बन के बाद जब उसने पूर्णिमा पर अपनी पकड़ गिथिल की, उसने महसूस किया कि उसके हाथ गरम थे। उसकी ऊँचा अब तक वह अपने हाथ पर महसूस कर रहा था। उसे मालूम हुआ कि पूर्णिमा का सारा शरीर एक तप हुए साह की तरह जल रहा है। उसने पुकारा—

‘स्वण !’ मगर स्वण चुप थी। कुमार के मुह से पुन गूँ निकले—  
पूर्णिमा !’

‘एक बार और, मृत्यु !’ कुमार ने महसूस किया कि उसका स्वण—  
पूर्णिमा—गिथिल सौ उसकी बाहों में आरों बन्द किये हुए पडी है। उसने पुन एक चुम्बन उसके अधरा पर द दिया। देकर ज्या ही उसने अपनी पकड़ गिथिल करनी चाही कि उगने सुना—

‘कम ?’ कुमार ने पुन चुम्बन की वही प्रिया दाहराई। इस बार उसने भयभीत लगा दी थी। कुछ ही क्षणों में उसने महसूस किया कि पूर्णिमा का शरीर पमीत में तर होकर गीतल हाँ घना है। उगने महसूस किया कि उसका अधरा में भी हजकी-भी शीतलता व्याप्त न गई है। उसने पूर्णिमा पर अपनी पकड़ छाड़ दी। उसने सुना—

‘मुझे माफ करो, सत्य !’ मगर मृत्यु न कहा—

‘इस इन्मान के लिए मैं शत्रुगुबार हूँ।

‘इन्मान का तुमने किया है कि मुझे बबूल पन्माया।

‘नन्, स्वण ! इन्मान की यह अमर प्यास है।

कुछ क्षण के लिए वह एक दूगर से विरग हाँ समीप व होज व तिनार का-भाग बट गए।

“तुम्हे पता कस चला कि मैं स्वण हूँ ?”

‘अभिनय के प्रथम दिन।

“कसे ?”

अभिनय का संचालन मैंने ही किया था।’

‘पर तुम तो वहा दिखाई नहीं दिये।

‘तुम्हें पहचानने के बाद मैं तुरंत वहा से चत दिया। उस वाभत्सता को देखने का मुझमें साहस नहीं था स्वण। तुम्हारी पीठ पर पड़े ताडना के दाग ने मुझे मौमी की याद दिलाई। तुम्हारी गदन और चेहर क काल तिला ने तुम्हें साक्षात् रूप में मेरी आँखों के सामने खडा कर दिया।

सत्य ! मैं बहुत गिर गई हूँ। मुझे उठाओ। मेरा क्या प्रायश्चित्त हागा ? क्या प्रायश्चित्त करूँ ? मैं कसे योग्य बन सकती हूँ ?

‘सब ठीक हो जायगा स्वण ! यह समय मगर उसने सुना—

‘कब ? कस ? उसकी आँखा में दयनीय याचना थी।

इसी क्षण कक्ष की ओर से पूर्णिमा ! देवि पूर्णिमा —पुकारें आइ ! प्रतिपल पुकार के साथ स्वर समीप आता हुआ मालूम दिया। स्वण और सत्य—पूर्णिमा और कुमार उठकर कलाकक्ष की आर चल दिए।

पूर्णिमा का ठाकुर जयसिंह के साथ राजस्थान में आए करीब एक सप्ताह गुजर गया। उमकी पुरानी जागीर के गांव विजयपुर के गड में इस समय पूर्णिमा का आवास निवास था। ठाकुर जयसिंह ने अपने बचन और वायदे के अनुसार पूर्णिमा के भविष्य-जीवन की सुरक्षा के लिए उमके खाने में खर्च जमा करा दी थी। पूर्णिमा ने जागीर की हैसियत के अनुरूप जेवर, कपड़े तथा अन्य आवश्यक गन्थ की वस्तुएं खरीद कर लिए। ठाकुर जयसिंह ने महानगरी बंबई से खाना खाने के पूव अपने कामदार का आवास निवास के सम्बन्ध में उचित एवं आवश्यक आदेश दे दिये। गड के पुराने आवासों को नया रूप देने की योजना को तो वे पूर्णिमा की रुचि के अनुकूल ही उसकी देखरेख उपस्थिति और व्यवस्था में ही क्रियारित करना चाहते थे। फिर भी इस सम्बन्ध में उनका स्पष्ट आदेश था कि नगर में रहने वाले व्यक्तियों को वहां जान पर गहरी सुत्रिधाआ की कमी महसूस न हो।

उनके इस विजयपुर गांव में करीब तीन चारमौ घरा की बस्ती थी। उनका कामदार ने उनके आने के पूव ही नव निर्माण और मरम्मत के लिए आवश्यक सामान और मजदूर कारीगरों के प्रबंध कर दिये थे। गड की प्राचीरों की मरम्मत तथा रंगे जान के बाद उसका एक नया रंग मिल गया था। गड के चारों ओर छोटी छोटी गलियां और उनमें बड़े-छोटे भापड़े भापड़िया बिखर हुए थे। थोड़ी ही दूर चारा तर्फ रेत के धारे थे। इन्हें यदि रेत के पहाड़ कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

सवारा के लिए इस गड में ऊट रथ बलिया घाड़े पहले से ही मौजूद थे। परन्तु ठाकुर जयसिंह रेलवे रास्ता की कठिनाइया को ध्यान में रखते हुए शीघ्र गमनागमन के लिए एक जीप और एक स्टेसन बगन और खराद कर ले आए थे। गड में दो कुएँ थे। तेल इजन की सहायता से इनमें से आवश्यकतानुसार पानी निकाला जा सकता था। बिजली की व्यवस्था भी

गन् की मुख्य इमारतों में तेल इजिन द्वारा की हुई थी।

पूर्णिमा न विप्रमपुर पहुँचते ही यह अनुभव किया कि गाव का यह गड प्राचीन मामन्ती युग की सस्कृति का एक अवशेष है। ऐसे अवशेष राजस्थान भर में यत्र-तत्र भवने वाले हुए पड़े हैं यह भी उभ बताया गया। ठाकुर जयसिंह के गड में पहुँचते ही गाव में उपस्थित लाग अपना-अपना नाम छाड़कर उन्हें यथायोग्य इज्जत देने के लिए गड में इकट्ठे हो गये। जब उन्होंने यह सूचना दी गई कि उनके साथ में जाई हुई स्त्री उनकी नई ठकुरानी है तो गाव वाला का विस्मय तो हुआ परन्तु पूर्णिमा को योग्य आदर देने में उनकी ओर से कोई गलती नहीं हुई। पूर्णिमा न भी जो उसने सपके में आया उसका उचित आदर सत्कार किया। पूर्णिमा आते समय अपने साथ मिठाई की गोशिया के अनेक डिब्बे पुस्तकें बच्चा और स्त्रिया के लिए छोटे छोटे उपहार आदि कई किस्म की अनेक वस्तुएँ ले आई थी। पर्याप्त और अभाव दोनों का अनुभव हान के कारण उस उन वस्तुओं का भी सवाल आने समय था जो गहरी जीवन में दूर उपलब्ध नहीं हो सकती। ऐसा वस्तुओं में उसके साथ विभिन्न फलाक रस मुर व अचार चटनिया गवत फल मव आदि सुरक्षित सीलवन्त डिब्बों में मौजूद थे। अपना आवागमन के लिए वह अपनी पसन्द की अनेक छोटी बटा तस्वारों और राजा घट की चीजें अपने साथ ले आई थी। पिछले एक सप्ताह वह अपने जागम का अपने योग्य निवास के लिए ठीक करन में व्यस्त रही। ठाकुर जयसिंह का उनकी हर अच्छा की पूर्ति में पूर्ण योग रहा।

पूर्णिमा न विप्रमपुर पहुँचने की प्रथम रात ही यह अनुभव किया कि राजस्थान के इन रानी न भगना की गावन गात रातों में आय स्थानों के सुरासन में कितना अधिन आकषण तथा सुग है। प्राचीन संधिरे गन् के भगना का विस्तृत छन पर जब वह चन्द्रमा की शुभ चान्ती में प्रथम बार पहुँची तो उभ अनुभव हुआ कि वह पथ्या के धरातल में उठार एक स्वर्गीय गगन के धरातल पर पहुँच गई है। इस समय उगत वात सुन हुए थे। पुष्ट गौर गरीर पर एक भानी-भीगाही तथा चानी के अनास और बुद्ध गरी था। छन के विस्तृत भगन में दो पलग नवन चान्ती में गे गे हुए विद्युत् थे। सिंहरानों पर रगे तरिमा का स्थानिया ना गन् ही थी।





सौभाग्यशाली हूँ पूर्णिमा ।”

‘तशरीफ़ लाइए ।’

‘तुम न हिलो पूर्णिमा । गूर सामंता क इम गल म आज प्रथम बार यह अलौकिक सुन्दर दृश्य मुझे देरान का मिला है । अपन सारे सौभाग्य का भी मैं इस पर याछावर कर दू तो भी मुझ दु ख न होगा ।

चंद्रिका कितनी सुन्दर और सुहावनी है ।’ मगर उमने सुना—  
तुम यहा रह सकोगी पूर्णिमा ?

क्या नही ?’

कभी-कभी मैं अपन सौभाग्य पर सुरा पर, गक करन लग जाता हूँ ।’  
मुझ डराओ नही ।

नही, पूर्णिमा । मैं तो स्वय डरता हूँ कि कहा यहा की वीरानगी,  
गूयता तुम्हारी तबियत यहा से न उखाड द । जब भा तुम उसे अनुभव  
करन लगो मुझे बतता देना । हम यहा से और कही चल दग । मैंने अपने  
कमचारिया को यह भी आदेश दे दिय हैं कि वे दग कोणिस म रहे जिनक  
विभिन्न कार्यक्रम गाव म होते रहे ।

आप बहुत महरवान हैं ।

मैं बहुत कृतज्ञ हूँ । और इतना कह वह पूर्णिमा क समीप आ गया ।  
पूर्णिमा भी उमक समीप सरक गई । कुछ क्षण सब दोना दूर अपन सामने  
क विस्तार का दस्तते रहे । जयगिह न पूर्णिमा क गल म अपनी बांह डाल  
रगी थी । दूर गितिज पर एक उठने हुए बाग म बिजनी धमकी । हलकी  
सो गरज भी मुनाई ली आमपाम क पटों पर बठ भार याग उठ । जयगिह  
ने पूर्णिमा का आगाम देखा और उन चूम किया । पकट-पकड़ ही बर  
उम अपन पलंग की आर ले गया ।

सुबह जयगिह पूर्णिमा म पलंग जग गया था । उमका बाटू पर पूर्णिमा  
का गिर और बिस्तार हुए बात थ । उमने रग्या कि पूर्णिमा उमक महारे  
उमका मनुगा तररमाई हूँ है । वह नीं म था । उमका एक हाथ उमक  
पग म्यन पर था । जयगिह नग चाहता था कि वह कोई हलगत करके  
उमका नां म गवम हाव । उमक अन्न अन्न अचना का भी उमने इगी  
अनिद्राव म ममाता नगी । उम कुछ हा गन अपना दम परिस्थिति म बीन

थ कि गन्ध के मुख्य द्वार पर हमें गंगा की सामंती प्रथा के मुताबिक गड के खानपानी कलाकार ने सहनाई पर रागिनी भैरवी के कोमल स्वर छेड़ दिये। उह सुने ही पूर्णिमा जग पडी। उसने दबा जयसिंह हस रहा ह। वह भी मुस्करा उठी। अपन प्यार म दोना ने एक-दूसरे को चूम लिया। दोना पनग परसे उठ बैठे। अपने वस्त्र सभालकर दोना नीचे चल दिये। बार इम तरह रातें बीतती गई।

पूर्णिमा का दिन अपने आवाम को व्यवस्थित करने मे बीत जाता। अपन निवास-स्थान को नया रूप देने म उसे कई बार वस्तुओ को इधर उधर करना पडा। गाव की गरीब औरतें प्राय दिनभर ही उसकी सेवा म रती। सात दिना के थोडे से अरम मे ही उसने अनफा को अपना सुपरिचित बना लिया। धीरे धीरे उमने गाव की आर्थिक और सामाजिक परिस्थिति जान ली। गाव मे गरीबी की क्या आवश्यकताए हैं यह उससे छिपा नुआ नहीं रहा। परस्पर परिचित हो जाने के बाद उमने एक दिन यह निश्चय किया कि गाव म जाकर वह प्रामोणा को दगा देसे। जयसिंह से अनुमति लेने म उसे देर न ली। एक दिन गाव की कुछ स्त्रिया जब उमके पास अवकाश के समय आइ उसने उह अपन बच्चा के साथ आने को कहा। उसे आश्चर्य था कि गाव मे बिना आमदनी के लोग कसे रहते हैं। एक दिन दोपहर को खा-पीकर जब वह अपन कमरे म बठी थी कि एक प्रौढ अपनी बाटिका को लेकर उसके पास आ बैठी। पारस्परिक कुशल प्रश्न के बाद पूर्णिमा ने पूछा—

‘तुम्हारा यह गाव कितने घरा की बस्ती है ?

‘तीनसौ की।

‘लोग निर्वाह कैसे करते हैं ?’

‘खेती से।।

‘सबके पास जमीन है ?’

‘नहीं।

‘फिर ?

‘मजदूरी करलत हैं।

‘यहां मजदूरी क्या है ?’

“क्या नहीं ?”

‘मरा गया था या जि तुम यहाँ न रह सतागा।’

‘क्या ?’

जीवन का इस तरह का परिणाम परिवर्तित करने का मुझ आगा नहीं थी।

“अब तो विश्वास हा गया ?”

‘पूर्णमा। आज जब मैंने गुना जि तुम इस गाव क लिए बरतान हातर आर्द हो मैंने अपने जीवन म सबसे बड गुन का अनुमति की। मैं माव भी नहीं सक्ता था जि तम अन्तरी गाव म एन जीवन उपन कर सक्ता हा। आज सुबह जब मैं गाव म निरना ता मैंने दगा जि कमर की मा का घर एक सुपरी वाटिका की गवन अन्वितार कर रहा हे। उसक घर क पडा क नीचे की चौकी पर बठने क लिए आज सम्य-स सम्य व्यक्ति का जी चाहता है। उसकी भापडी की गवल नी जच्छी हो गई है। मुख्य द्वार पर पत्थर के खम्भे लग जाने स सारा अहाना एक नई गवन पा गया है। मैं आग गया तो सारी गली की गवन मुझ बदली हुई मानूम दी। साफ-सुधरा चौक लोपी पोती ऊची चौकी सुधरा हुआ प्रवेश-द्वार एक पवित्र म मीवी बाउं हवादार मजबूत भापडी यही मत्र मुझे दिखाई दिया। पूछा ता गाव वाल वाले— भाभी के मजदूर कारीगरा की सहायता से यह सब कराया गया है। उन्होंने मुझे आश्वासन दिया है जि क खाड हा निना मे मारे गाव के घरों को गलिया तथा चौका को उपवना और वाटिकाआ म परिवर्तित कर देंग। घर गली और चौक की जमीन का केवल सम कर देने मान से इतना सौदय आ सक्ता है यह तो कोई मोच ही नहीं सक्ता था।’

आपको पसंद आया जमक लिए शुक्रिया ?

तुम्हारे काम म मैं याग कस दे सक्ता हू ?

यह सब तो आपकी ही आर स है।

या कहने से मुझे सतोष नहीं होगा।

‘यह राजस्थान है रेगिस्तान भी। पर वह रेगिस्तान नहीं जहा कुछ न हो सक्ता हो। सुनती हू यहा कभी वीरा की खेती होती थी। मातभूमि की रक्षा म मपूता की फसलें की फसलें कट जाती थी। मदान खून स तर

हो जाते थे। सुना है, यहा का कण-कण अणु अणु वीरा के खून से सिंचा हुआ है। यहा की मिट्टी में त्यागशील वीरागनाभा की भस्मी मिली हुई है। ठाकुर साहब ! वह समय तो चला गया। जापका यह गढ़ भी राजस्थान में यत्र तत्र फले हुए गढा की तरह त्याग, तपस्या, बलिदाना का प्रतीक है। इस गढ़ में भी शौर्य, सौंदर्य, प्रेम, बलिदाना का इतिहास दोहराया गया होगा। यहा की प्राचीरा पर महला में तपस्वि, जतपस्वि, वासना, राग रग की कहानिया बरती और कही गई हागी। क्या जपन-पूबजो की इस लीला भूमि को—भारत के इस पुण्य-तीर्थ को—हम अपने प्रयासा में सजाने में सफल रहेंगे ? यह एक भावना मुझे जपन प्रयास में प्रेरित कर रही है। मैं चाहती हूँ यह गढ़ और यह गाव आदश गढ़ और आदश गाव बने।'

“पूणिमा !”

'ठाकुर साहब ! गढ़ के महला की छाना पर जब मैं सोती हूँ तो अनन्त बार मुझे एक सुख-अलौकिक दृश्यावलि-भी दृष्टिगोचर हाती रहती है। मुझे दिखाई जाता है जम महला के अन्तरवास में जनक राजा, महाराजा, महारानिया, राजकुमारिया उनकी सहलिया, बानिया आत-जाते हैं। महल सूस करती हूँ जमे एक सामन्ती स्वर्ण युग मरी आखा के सामने गुजर रहा है। लम्बे चौड़े पुष्ट शरीर, बड़ी-बड़ी मन्दग-बाहिना आँखें, गौर वण, केग रिया कसूमल पगडिया, लम्बे-लम्बे बाग कमर बाधी हुई चूड़ीदार पाजामे स्वर्ण डारो से मज्जित रग विरगा जूनिया मोती माणिक, हीरे, पत्थो के अलंकार, ढाल, तलवार, कटार से मुमज्जित ऐसी मूर्तिया उम वातावरण में मरा आह्वान करती हैं। मैं शामिल हा जाता हूँ। पर, दूगरे ही क्षण जमे हम सब इन प्राचीरा से गाव की आर दलत ह। और दखते देखते मारा दृश्य बदल जाता है। उसे मैं दोहरा नहा सकती ठाकुर साहब। वही दृश्य एक दयनीय मरघट की मूर्तिया में परिवर्तित हा जाता है। फिर ऐसा मालूम होता है जैसे हम सब पर नितान गरीबी छा गई है। एक रोटी के लिए हम सब परस्पर लड़ते भगड़त हैं। न कोई राजा है, न कोई रानी। सब नगे भूखे, जर-जर वस्त्र उदाम मुख, अभिप्रायहीन आखो में एक-दूगरे की ओर निराशा से दखते हैं। एक चीख उठता है। मैं भी चीखती हूँ और जग जाती हूँ।'

“बडा भयकर दृश्य तुम देखती हो।”

“हा ठाकुर साहब ! जा कहती हू उससे अधिक भयकर मैं देखती हू। वह सब कहा भी तो नहीं जाता। वह सब याद भी नहा रहता है। अभाव भरी कहानी अपने अनेक रूपों में, विविध दयनीय दुःशाखा में अपनी आत्मा के सामने बार बार दोहराती रहती हू।

‘तुम्हें डर नहीं लगता?’

“लगता है।”

‘हम इस स्थान को छोड़ सकते हैं पूर्णिमा।’

‘यह तो निराकरण नहीं हुआ, ठाकुर साहब।’

‘फिर?’

क्या हम अपने काम और भावना से इस इतिहासमयी भूमि को फिर राजा नहीं सकते? समुचित साधन न सही। जोरा क हाथा में सही। गरा के, स्वाधपूण तत्वा क हाथा में नहीं परंतु फिर भी कोई भी हम श्रम क फल से तो वंचित नहीं रख सकता। आप देख रहे हैं कि थोड़े से प्रयास से गाव के लोगो ने किस प्रकार गाव की शक्ति बदल दी है। गन्ध आसपास के मकानों के उमके आसपास की गलिया के साफ और सीनी हो जाने से उमरी गोभा बढ गई है। वषा क प्रारम्भ होन में थाड हा दिन हैं। यदि हम गाव के लोगो को उन पडा का पता दे सकें जा कम पाना में जल्दी हो सकने हा ता क कुछ ही दिनो में इन काटा की बाढा से छुकारा पा सकत हैं। साथ ही उममे सारा गाव हरा भरा दिखन लगगा।

तुमने तो आते ही गाव के लिए बहुत साचना शुरू कर दिया।

“हर प्राणी की कुछ इच्छाएँ होती हैं। मेरी भी इच्छा है कि कुछ काम एगा कर जाऊँ जिसे मुझे भी लागू याद करें।”

“पूर्णिमा !

‘हा, ठाकुर साहब ! मैं न पढ़ा है कि नपोलियन क एक सनापति के जब युद्ध में गोली लगी और वह मरने लगा तो उसने नहीं कहा कि उस मरने का अफसाम नहीं है। है तो सिर्फ इस बात का कि जीवन में वह कुछ और काय एमे न कर सारा जिसे जान वाली पीढी उम लम्बे समय तक याद रख सके।’

“पर सबकी इच्छाएँ तो एक-जैसी नहीं होतीं।”

‘निश्चय ही। अपने अभाव के जीवन में मुझे पता सब कुछ लगता था। आपकी वृथा से मरा वह अभाव दूर हो गया। आज मुझे उससे मोह नहीं है। अपनी वित्तपणा की पूर्ति के लिए मैं आपकी गुरुगुञ्जर हूँ। यश प्राप्ति की भावना वित्तपणा की पूर्ति मेरे विनापको ने कर दी। कामेष्णा के लिए मुझे कुछ कहना नहीं है। फिर भी जीवन अभाव में है ठाकुर साहब। आज तक के जीवन में मैं केवल लेकर खुश हुई हूँ। देकर सुखी होने की अनुभूति मुझे यहाँ आकर ही हुई है। उदारता के आनंद का यहाँ आकर ही मुझे समास्वास्ती मिला है। कितने भाग्यवान है वे जिनमें उदारता आ गई है सब कुछ देने की शक्ति उत्पन्न हो गई है जो सबस्व जुटा कर सुखी और प्रसन्न रह सकने हैं।’ क्षणएक चुप रहकर वह फिर बोल उठी—

‘अभाव की अनुभूति ही गरीबी है। सिवाय एक मानसिक परिस्थिति के इसे और कुछ नहीं कहा जा सकता। प्रकृति की खुनी पुस्तक का यदि हम पढ़ें तो हम तुरंत यह अनुभव होगा कि कोई प्राणी यहाँ गरीब नहीं है। जमा सिंह है बना ही मियार है। जमा हाथी है बना ही हरिण है। यदि इसी प्राकृतिक परिस्थिति को हम अपने पर घटाएँ तो अपनी विषम परिस्थिति का बोध हमें तुरंत हो जायगा।

इतने में ही पूणिमा ने देखा कि उममें बातचीत करने के लिए एक गरीब औरत कमरे के बाहर खड़ी है। उसे देखते ही वह उठकर उममें पास चली गई। पूछने पर भालूम हुआ कि उसके बच्चे को बुखार आ गया है। ठाकुर जयसिंह ने आगे ले वह कुछ दवाई कुछ गिनौन कुछ मिठाई लेकर उममें शाय चनी गई।

कुछ घंट बाद ठाकुर जयसिंह पूणिमा की बापिनी में विलंब देन जब पूर्वांगभुका ने घर गया तो उन्होंने देखा कि पूणिमा बानस का अपनी गाद में लिए हुए है और उममें मिर पर ठंडे पानी की पट्टा लगा रही है। ठाकुर जयसिंह ने देखा कि बानस भी पूणिमा की गोद में गया हुआ गुन का अनुभूति कर रहा है। उममें चारा ओर गिनौन और बानसप्रिय मिठाई खादि पड़े हुए थे। आश्चर्य आता था कि पूणिमा ठाकुर जयसिंह से साथ घर में

लोट आई ।

इसी रात को भोजन आदि से निवृत्त होकर जब पूर्णिमा जीर जय मिह महला की छत पर चादनी में घूम रहे थे पूर्णिमा ने पूछा—

‘हमारे यहाँ जाने से पूव वह समाराह की रात आपको याद है ?’

‘जशर ।’

वह लापरवाह कलाकार भी याद है ?

कुमार ?’

हा ! उसका नाम सत्यकुमार है ।’

‘मो ?’

कला सम्बन्ध में उसकी सूझ-बूझ बिलकुल अनोखी है ।

यह तो उसकी बाता से मालूम होता था ।

मैं उससे बहुत प्रभावित हू ।

यह तो उसी दिन सबको मालूम हो गया था ।’

यदि मुझे अपने स्वप्ना का साकार देखना है तो मुझे उसके पास

लौटना होगा ।

‘पूर्णिमा ! तुम्हें क्या हा गया है ?’

हर जीवन में एक प्यास होती है ठाकुर साहब ! मेरी उस प्यास को एक वही मिटा सकता है ।

तुमने कहा नहीं । हम उसे साथ ही ल आते ।

क्या अब उस नहीं बुनाया जा सकता ?

और यदि वह न आये ?

यह नहीं हा सकता ।

उसका पता ?

चित्रकार कुमार दे सकता है ।

मैं कत ही चला जाता हू । पूर्णिमा ने ठाकुर जयमिहकी आर अथ मेरी निगाह में क्षणएक के लिए दया । वाली—

मुझे एसी ही आना था । और साथ ही सरकर वह जयमिह के महार लट गई । जयमिह ने पूर्णिमा का पकड़कर चम लिया । वह बोला—

बाद काम ऐसा नहीं है जिन जयमिह पूर्णिमा के लिए न कर

मरता हो ।

दूसरे ही दिन जयसिंह बबई के लिए रवाना हो गया । सत्यकुमार को नकर कृद्वन्ति के बाद जब वह वापिस अपन गढ म पहुचा उस समय मध्या की अघेरी सबन छा चुकी थी । इस समय पूर्णिमा अपन कमरे म रंगी मिलाई मंगीन पर बच्चा के कपडे सी रही थी । विभिन्न आकार प्रकार क अनका वस्त्र इस समय उसके कमरे म पडे थे । गाव की चार पाच बोगों, उनके बच्चे इस समय उसके पास इसी कमरे म थे । जयसिंह और कुमार को अपने मामने देखकर वह बोली—

बेचर की सहली की शादी है । दोना के पास पूरे कपडे नहीं थे । मैं नया शाना जमा अवसर ता जावन म बार बार नहीं आता । मर पास फिजूल म पटिया मरी थी । मैं उहे काम म ले लिमा । बालक बालिकाओ न जब उह पहनकर दवा तो उनकी खुशी का अदाञ्चा नहा लगाया जा सकता था । उह पहनकर मुझे उनक मुकाबल म एक प्रतिशत खुशी भी पायद नहा होती । उह खुश और नप्त देखकर मेरी खुशी का टिकाना नहीं रहा । मैं चाहती हू कि मेरी खुशी का यह स्रोत, मेरी यह भावना सनातन रूप मे एसी ही बनी रहे ।'

पर पूर्णिमा 'यं सब तो तुम्हारी अपनी पसंद के वस्त्र थ ।

इसी म ता मुझे जीर भी अधिक खुशी है ।'

और कुमार माहब 'आपको हमन बहुत कष्ट दिया ।

आप भूली नहीं याद फरमाया । इसमे जयिक खुश किस्मती और रा हो सकती है ?'

फिर हमारे लिए अफसोस की कोई बात नहीं है ।

'निश्चय ही नहीं ।

पूर्णिमा अब तक मंगीन बद करक उठ पडी हुई थी । जय जीगत और बच्चे भी एक जार हो गय थ । पूर्णिमा न उह सबीजन करत हुए कहा—

बहिनो ! अब अपन कल मिलेंगे । इन वस्त्रा को ममटकर एक ओर प्य दो । आज अपने घरों पर आप मा सकती हैं । और इतना कन्जर वह जयसिंह और कुमार क साथ हमरे कमरे म चली गई । तीना न एक ही कमरे म बचकर खाना खाया और रात म देर तक बातें करत रून् । पूर्णिमा



न कुमार का इस बीच सक्षय में यह बना लिया कि वह गड और गाँव का किस प्रकार प्रकृति और कला के मौल्य का मगम बनाना चाहता है। कुमार को गड के हाँ एक प्रामाद में आवास दे दिया गया।

कुमार का अपना काय प्रारम्भ करत-करत वर्षा ऋतु आ गई। गाँव में सब एक विनाय प्रकार के जगला कीकर के बीज उम्बी लम्बी बनाराम एक विनि य याचना के अनुसार बो दिया गया। दमने लम्बे पोथे निकल आय और ताप गति में नई जमीन पर बटने लग। जगल को चारा भाग हरा और आधिक दक्षिण में उपजाऊ बनाने के लिए उमम मीना गर लिंगाभा में फोग कीकर बगी और सजडा के मना बीज गिरा दिया गया।

“मतलब ?”

‘स्वण ! चादनी राता म जयसिंह के माय महला की छना पर तुम्ह अकना जान मैं देख नहीं सकता । मुझे राता जागना पड रहा है । जी चाटना है तुम्ह रोक दू ।’ पूर्णिमा ने मुनकर मुस्करा दिया । वह उठकर एन आर चलने लगा । कुमार उसके पीछे चल दिया । वह बाला—

“संघि के प्रारम्भिक प्यार की यह हरकत आज भी उमी प्रकार सत्य है स्वण ! तुम उठी । एक अदृश्य टोर मे ववा हुआ मैं तुम्हारे पाछे पीछे हो गया । तुम रुका मैं भी रुक गया । जी चाहता है तुम्ह देखता रहू ।” वः बठ गई वह भी बठ गया । बाला—

दा आत्माओं की यह छोटी सी हरकत गन्दा म साहित्य बन गई । स्वरा म मुखरित हुई ता वही गीत बन गई । लय म बाध दी गई—तो वह नाच हा गई । इसा का यदि किसी पट पर जकित कर दिया जाए ता यह कलाचित्र बन जाएगा ।’

कुमार !

हा स्वण ! य मानव भावनाए, उनसे प्रेरित म प्राकृतिक हरकत ही हमारी नलितक नात्रा की आधार गिलाए हैं । जिस दिन एक प्राणी ने दूसरे प्राणी का प्रथम बार प्यार स देखा वही दिन हमारी लनितकला का प्रारम्भिन थि था । आज भी इंसान उमी तरह दखना है उसा तरह सोचता है उसा तरह मःसूम करता है । मनुष्य होकर हम संघि स भिन नहीं हा गए, पूर्णिमा । शणक विरमकर उसन कहा— हृदय की वही प्रारभिक पुकार चीम, माग, भावना उत्माहित रूप म आज भी हमारा मास्कृतिक बना है । नागवनक प्रमर गात, जयः का गीत गोविः तुलसी के कवित्त मूरक पः, मीरा के भजन, विद्यारति की पीठ रवीद्र का गीताजलि हमारी उगा प्रारम्भिक पुकार के प्रतीक है । कुमार न महसूम किया कि पूर्णिमा उमकी बात ध्यान स मुन रही है । वह कहना गया—

मदिया गुजर गई । हजारों लखक मर गए कवि ममाप्य हो गए, मगीतन रीर मायक चन गय चित्रकार और मूर्तिकार अस्त हा गए । मगर, वः पुकार वह भावना आज भी जाकित है ।’

‘मत्य ! मानूम होना है तुम बहुत उद्विग्न हा ।’

अतप्य हूँ, स्वप्न ।'

मुझ आना दो ।'

'मैं तुम्हारे पास आ सकता हूँ ?'

'क्या आपत्ति है ?' वह पूर्णिमा के पास सरक गया ।

'तुम्हें स्पष्ट कर सकता हूँ ?'

क्या नहीं ? सत्य न पूर्णिमा का हाथ पकड़ लिया ।

स्वप्न ! मैं तुम्हें अपनी कब कह सकूँगा ?

मैं तुम्हारी हाँ हूँ सत्य ।

स्वप्न ! मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ । अनेक बार मैंने तुम्हें स्पष्ट किया है । मगर जब भी मैं तुम्हें अपना बनाने की कोशिश की मरी जाँसें तुल गइ जम स्वप्न देख रहा था । सत्य कहो स्वप्न ! आज भी वह स्वप्न तो नहीं है ?

मगर इसी क्षण उहाने प्रतिक्षण पास आती हुई जीप की रांगी देखी । पूर्णिमा उठ खड़ी हुई । कुमार भी उठ बठा । परंतु उसने सुना—

सत्य ! गड में रहते अब कोई रात ऐसी नहीं गुजरेगी जब मैं तुम्हारे पास न जाऊँ । ठाकुर साहब सवारी ले आए हूँ । अभी अपन चल ।

उहाने बच्चा को इकट्ठा किया और जीप के पास आकर ठहरते हाँ अब उस पर बैठकर गाव का ओर चल दिये ।

कुमार ने यहाँ जाने के बाद कई विषय बनाकर गड के महिला और उमक गलियारा को सामंती वातावरण के अनुकूल सजा दिया था । उस समय वह अपन जावाम पर ही कुछ मूर्तियाँ पर काम कर रहा था । ठाकुर जयमिह और पूर्णिमा की इच्छाओं और मतभेदों को समझते हुए उगन को तीन मूर्तियाँ बनाकर गाव के सांस्कृतिक स्थानों पर स्थापित भी कर दी थी । उस समय जिन मूर्तियाँ पर वह काम कर रहा था वे पूर्णिमा का थी । पूर्णिमा और ठाकुर जयमिह कई बार दिन और रात में साय-भाय तथा रात-न-रुकेने भी कुमार के आवास पर उमक निर्माण कार्य का दखल देता जान था । इधर कई रातों से जयमिह दंग रहा था कि पूर्णिमा पूर्ण रूप से अपनम नहीं है । एक दिन उमने नींद में गायक स्वप्न में उम यह कान्ने ए भी सुना—

'मरय ! मैंने विवाह नहीं किया । यह प्यार का बंधन नहीं है । सुविधा का सम्बन्ध है ।' सुनकर जर्जासह को बाकी रात काटनी हराम हा गई । इस समय पूर्णिमा गहरा नींद में सा रही थी । महला की इन छत्ता परसिवाय इन दो के और कोई नहीं था । उमन उठकर दो गिलास पानी पिया । फिर चादनी के स्वच्छ प्रकाश में मोई हुई पूर्णिमा का उसके बिस्तर पर पास बैठ दखने लगा । क्षणएक क लिए उसने चाहा कि उम जगा द । मगर उसने उसे जगाना नहीं । उसके मुह की ओर झुका परंतु पुन बिना स्पश किये उठ बैठा । जो थोड़ा सा अचल पूर्णिमा के शरीर को ढक रहा था वह भी उसने दूर कर दिया । कई क्षण वह उसे उस निवसन स्थिति में देखना रहा । आज न जाने उसकी इच्छा क्या उसे स्पश तक करने की न हो रही थी । कुछ ही क्षण में उसने उसे पुन आवरित कर दिया । वह छन पर अपनी किसी विचारधारा में घूमने लगा । उसने देखा कुछ बादल चाद को कभी-कभी आकर ढक देते हैं । थोड़ी गरज हुई । बिजली चमकी । कुछ बदे गिरी । आस पास के पेडा पर बडे मार एक एक करक बाल उठे । पूर्णिमा की नींद खुल गई । उसने देखा जर्जासह अपने बिस्तर पर नहीं है । खुने गिथिल वस्त्र उसने ठाक किए । उठा तो देखा जर्जासह दूर छत क एक किनारे अपनी किसी विचार-मुद्रा में खडा है । वह उठकर उसके पास आई । बोनी —

"नींद नहीं आई ?"

"तुम भा ता उठ खडी हो ।

"बादल की गरज, बूँदें ये मार सोने थोड़े ही देते हैं । क्या साव रहे थे ?"

'बता दूंगा ।

'कब ?

"एक बात पूछू ?"

जरूर ।

मैं तुम्हें चाहता था तुम मिल गई पूर्णिमा ! क्या तुम्हारा प्यार भी मुझे मिला ?

"क्या नहीं ?"

'मगर कितना !

‘सरोवर से कोई प्यासा यदि पानी पी लता सरोवर का पानी घटता नहीं है। सागर सरिता यह चादनी ससार को सब कुछ देकर भी अपने में पूर्ण है। नारी प्यार लुटाकर भी सवप्रमयी है ठाकुर साहब ! आपको कितना प्यार चाहिए ?

‘पूर्णिमा ?’

‘हां ठाकुर साहब ! प्यार को आप सीमाओं में बाधना चाहते हैं ? नारा का प्यार जथाहू है अमाभ है ! आप उस सामित करना चाहते हैं। नारी के लिए यह असम्भव है ठाकुर साहब।”

‘पूर्णिमा !

जी !’

‘आज मैं तुम्हें इस चान्नी में निवसना के रूप में देखा।’ पूर्णिमा चुप रही। उसने सुना—

‘मैं साचता था कि इस तरह रखकर शायद भरी प्यास कुछ कम होगी, पर तु, वह और अधिक हो गई है।’

‘प्यास पीन से मिटती है ठाकुर साहब !

‘मैं भा यही साचता था पूर्णिमा !’

‘फिर ?’

‘इधर कुछ शिना से देखता हू तुम्हारे स्पष्ट में चुम्बन में वह पहले जमी गरमी नहीं है। शीतल गरीर शीतल अधर बाद आसे यह वसा प्यार है, पूर्णिमा ?

सघप में तीव्रता, गरमी होती है ठाकुर साहब ! समपण सदब ज्ञान जोर शीतल हाता ह।

जयसिंह ने पूर्णिमा की आवाज में देखा। उसने पूर्णिमा के अधरो पर अपने अधर लगा लिया। पूर्णिमा का जाँचें इस समय बन्द थी। जयसिंह इस रहस्य को न समझ सका। इसी क्षण पुन बूँ गिरने लगी। जयसिंह और पूर्णिमा नीचे महला में चल गये।

पूर्णिमा को जब भी अवसर मिलता, वह कुमार व आकाम में अवश्य जाती। उसका शिना प्राय गाव व जमहाय बरूचा व लिए आवश्यक वस्तुएं बनाने और उनकी जरूरतें जांचने में दीन जाता। उसने गाने-गहनने

और व्यवहार में गरीबा जमी मांगी आ गई थी। इधर कई दिना से उमन अपने बहुमूल्य वस्त्रों को बालक-बालिकाओं के वस्त्रों में परिवर्तित कर दिया था। अपने अनक छोटे माटे जेवर भी उसने जलग-अलग रखकर गाव के बच्चा के नाम उनक ऊपर क जावरणा पर लिख निय थ।

जयसिंह की सुनावर ही वह अपने समय में कुमार के पास जाती। यह उसका नित्य का नियम बन गया था। मदद की भाति आज भी जब वह कुमार क आवास में पहुँची ता उसने देखा कि कुमार उसी की मूर्ति पर काम कर रहा है। आज यह उसके पास नहीं गई बल्कि दूर से अधरे में खड़ी हाकर दखन लगी। उसने दखा कि कुमार मूर्ति के बाला का बार बार सहना रहा है। दूर ही क्षण उसने उमक कपाला को चूमते दसा। अगने क्षण उसके अधर उमक अधर पर थ। गहन उराक कमर कपोल, नयन, नलाट—कई भा जग ऐमा नहीं था जिस पर उसने प्यार न दिय हा प्यार की वर्षा न की हो। पूर्णिमा दूर खड़ी यह मव देखती रही।

उधर जयसिंह की आख खुल गई। पूर्णिमा को अपन पास न पाकर पहन ता उसने इधर उधर देखा, मगर वह उसे दिखाइ नहीं दी। कुछ क्षण की प्रतीक्षा के बाद उमका ध्यान छन क प्रवेश द्वार की जोर गया। पूर्णिमा की चप्पन बिस्तर के पास नहीं थी। प्रवेश द्वार भी खुला हुआ था। वह सीधा कुमार के आवास की जोर चन दिया। वहा पहुँचकर उसने देखा कि पूर्णिमा कुमार क सामन खड़ी है। वह अधरे में एक आर खडा हो गया। उसने सुना—

‘मैं तुम्हारे सुख को अस्थायी बनाना नहीं चाहता स्वण।

‘अस्थायी जीवन में म्थायी सुख की बात करने हा सत्य।’

फिर भी मैं इन याग्य नहा हू कि तुम्हारा हानि की किसी अश में पूर्ति कर सकूँ।’

‘मत्य’ मुझे दु ख है कि तुम्हें अपन मिद्वानता पर अपन विचारपूण निणय पर विश्वास नहीं है। क्या एक दिन तुमने उही कहा था कि हम जीवन में मवम बना नुकमान स्वय दम जीवन का है जोर इस नुकमान क आगे उमके मुकावने में ज म और मत्यु के बीच होने बाल मारे नुकमान नगण्य हैं। मैं तम्हारी दम वान पर बहुत प्रभावित हुई थी और आज मुम्ही

इसे अथहीन साबित कर रहूँ ही। देखती हूँ या तो यह सिद्धांत तुम्हारा अपना नहीं है, या तुम्हें अपने सिद्धांत पर जीने की आश्रित नहीं है।

स्वप्न !

‘हा मय । नारी का प्रेम मजाक नहा ह । म जा कहती हूँ वहा जय भा रखती हूँ । तुम बालक क्या नहीं ? नुप क्या हा । कितना बार मैं एक ही प्रश्न तुमसे कर चुकी हूँ । क्या तुमने पूछा था कि वह हमारा मिलन स्वप्न ता नहा था ? तुम्हारे स्वप्न पर ता मरा अधिकार नहीं है सत्य । पर मेरे जीवन पर तुम्हारा अधिकार है । यह आज स्वप्न नहीं है । जीवन है । विश्वास करो सत्य । बोला क्या चाहते हा ? कुमार पूर्णिमा की ओर अपलक दखन लगा । उमने उसे अपन बाहुना म कसकर बाध लिया और उसके अधरा पर अपने अधर एक जतप्त जावग म लगा लिया ।

जयमिह के शरीर म आग लग गई । वह घणा क्रोध म पागल हा उठा । उमके लिए यह अवृत्तता असहनीय थी । उसने मुना—

‘स्वप्न ! तुम जयमिह म प्यार करता हा ?’

‘मै उनकी इज्जत करती हूँ सत्य !’

प्यार नहीं ?

‘प्यार जावग है, इज्जत करे य । पर तुम इन प्रश्ना म न राजा सत्य !’

जयमिह ने देखा कि पुन दाना एक गून् जात्रिगन म एक हो गय है । इस बार पहल पूर्णिमा न की । उमने कुमार म अनरा पर अपने अधर लगा लिया थ । देखकर जयमिह बहा स चल गया । वह प्यार कितना बार दोहराया गया किस तरह यवदूत हुआ जयमिह ने नहीं दया । वह वापिस लाटा उम ममय उमने पाग अपना ब दून थी । उमकी आग प्रति हिमा म तल रही थी । पूर्णिमा और कुमार दग ममय एक ही पलक पर बठे हुए थे । उसने क्या कि पूर्णिमा उमके जानुआ पर मा रहा है । कुमार उमके खुल वाला का महना रहा था । कुछएक क्षण के बाद जयमिह ने मुना—

‘जब मैं जा सकता = ?’

‘जटा स्वप्न ! फिर क्या आश्राना ?’

“कल। इसी समय।

वह उठी। मगर इन समय उहनि देखा कि जयसिंह ब दूक ताने सामने खड़ा है। वह बोला—

‘वह बल तुम्ह नहीं आयागा, कुमार !’

‘क्या ?’ जावाज पूणिमा की थी। वह कुमार और जयसिंह के बीच म आ गई। बोली—

“प्रतिहिमा मे पागल न बना, जयसिंह। एक ओर अपराध है ता दूसरी ओर क्षमा भी है। क्रोध के आवेग मे काम करने से क्षमा स मिलने वाली शक्ति और जान द नष्ट हो जाते हैं।’

‘पूणिमा ! हट जाओ। अवृत्तन।’

कभी नहीं। जयसिंह की ब दूक की नली अपन सीने पर लगाकर वह बोली—

‘यदि पतित्व वितरण किया जा सकता है ता पत्नीत्व के वितरण म भी कोई आपत्ति नहीं हो सकती ठाकुर साहब ! पुष्प का प्यार और नारी का प्यार परस्पर भिन्न नहीं हैं। दोनों इमान हैं।’

जयसिंह के हाथ से ब दूक गिर गई। वह हतबुद्धि ननमस्तक कुमार के आवाज से चल दिया।



पूर्णिमा ! उस रात मुझमे भूल हो गई।

कोई ध्यान नहीं।

‘मैं चाहता नहीं था कि उस पटना को फिर टाहराऊ। पूर्णिमा चुप रही। उमने सुना पर उसे कह बिना जस जा मानता नहीं है। एक जगति-सी उस रात क बान बनी रहता है।

“कहिय।

तुम्हारा मरत्य तो चना गया।

उस जाना ही चाहिए था।

‘तुम्ह दु ग है ?

अपन लिये नहीं उमक लिए।

एक दिन स्वप्नम तुम कह रही थी— मेरा सम्बन्ध प्यार का नहीं मुविधा का है। ’

स्वप्न की बात पर तो इ मान का अधिकार नहीं रहता। ’

अचेतन का सत्य सत्य नहीं होता ?

‘हो भी सकता है नहीं भी हो सकता।

अब तुम क्या कहती हो ?

यह बात विश्लेषण क योग्य नहीं होती। ठाकुर साहब। ’

पूर्णिमा ! सत्य के साथ तुम्हारा अकने जाना मुझे अच्छा नहीं लगता था। रात को उसके कमरे म तुम्हारी उपस्थिति मेर लिए असहनीय थी।

पूर्णिमा चुप रही। उसने सुना— ‘पूर्णिमा ! तुम नहीं जानती कि तुम्हारे मुह से एक बात सुनने क लिए मैं कितना आतुर हू।

परमाइये।

क्या तुम एक बार भी यह नहीं कह सकती कि तुम मुझ प्यार करती हो ? पूर्णिमा ने जयसिंह की आर एक अथपूण दण्डि मे दया। वह बोली

नहीं। उसने सुना— 'बोली।

'क्या मैंने आपका प्यार नहीं दिया ?'

फिर कहा न, पूर्णिमा कि तुमने मुझे प्यार किया, प्यार किया।'

'ठाकुर साहब ! मुझे कहने में आपत्ति नहीं है, पर उस कहने का मूल्य भी कुछ नहीं है कारण आपकी उदात्ता के लिए मैं आपकी आभारी हूँ।'

'फिर तुम वही बात करती हो जो मेरे दुःख का कारण है। तुम कहती क्या नहीं कि तुम मुझे प्यार करती हो। पूर्णिमा ! रगभूमि का वह प्रथम प्रदान दिन याद करो जब तुम्हारी और मेरी प्रथम भेंट हुई थी। उस रात ही मुझे यह निश्चय हो गया था कि एक दिन मैं तुम्हें अपनी बना सकूँगा।

आपकी उदारता ने मुझे खरीद लिया। मैं आपकी आभारी हूँ।

प्यार खरीदा नहीं जा सकता। आज मैं महसूस करता हूँ पूर्णिमा। उदारता कृतज्ञता पदा कर सकती है। प्यार नहीं। एक दिन तुम्हारे चुबने में आर्निगन में गरमी थी। तुम्हारी श्वास एक आवेश में तीव्र चने लग जाता था। पर आज वह स्थिति नहीं है। तुम्हारे अघर गरम नहीं रहते। तुम्हारे आर्निगन में शीतलता है। तुम्हारे श्वास की वह ऊँचा चली गई है। मैं क्या समझूँ पूर्णिमा ?'

मैं यहाँ से चली जाऊँगी ठाकुर साहब।

'यह मैंने कब कहा पूर्णिमा ?

अच्छे आल्मी हर बात कल्प थाड़े हा है ?

गलत न समझो पूर्णिमा। मैं तो केवल तुम्हारा प्यार चाहता हूँ। वह प्यार जो तुमने सय को उस रात दिया था। यदि उम न भी द सका तो तुम्हारे केवल यह कहने मात्र से कि तुम मुझे प्यार करती हो मैं सताप कर लूँगा।

उस प्यार से सताप न कर सकाग ठाकुर साहब !'

मतलब ?

जिन दिनों मैंने समर्पण किया वह स्वीकार न कर सका। जिस दिन उसने समर्पण मागा, मैं न द सकी।

“वारण ?”

‘मैं बीमार हूँ ठाकुर साहब ।

पूणिमा ।’

‘सत्य दया का पात्र है ठाकुर साहब । मुझ दुःख है कि मैं उसे अपने आपको समर्पित करने की दारोरीक स्थिति में नहीं हूँ । उस रात भी नहीं थी । वह चाहता तो भी नहीं । आप-जैसे उदार व्यक्ति के जीवन को भी मैं अब खतरे में नहीं डाल सकती ।’

‘पूणिमा ?’

“सत्य कहती हूँ ठाकुर साहब ।

“पूणिमा ! बात क्या है ?”

‘मैं यक्ष्मा से पीड़ित हूँ ।

किसने कहा ?’

‘मैं जानती हूँ ।’

कैसे ?

‘मरे सास में सून जाता है ।

‘कबसे ?’

पूणिमा बनी उसके पहल से । बीच में बाद हो गया था । सत्य के यहाँ जान के बाद फिर शुरू हो गया ।’

और इसीलिए तुम मुझसे दूर

‘मुझे अफसोस है, ठाकुर साहब ।’

‘इलाज के लिए अपने वापिस बम्बई चल सकते हैं ।

‘गरीर तो सदा रहता नहीं है ।

अपने सम्बन्ध में मुझे यह न सुनाओ पूणिमा । मैं यह सहन न कर सकूँगा ।

‘गाव के पाच सात घरा में भी यह रोग व्याप्त है ठाकुर साहब । बालक बालिकाएँ ग्रसित न हो इसलिए उनका प्रबन्ध पहले कर देना चाहिए ।

ज्वर कल्पा, पूणिमा । जर्जसिंह ने देखा कि पूणिमा की आँखें सजल हो गई हैं । उसने उन्हें प्यार से पोछ दिया ।

ठीक इसी समय जर्जसिंह को सूचना मिली कि अभी अभी उनकी पत्नी

शुरानी साहिवा गढ म तगरीफ ले आई है। पूर्णिमा ने भी उनके स्वागत के लिए जयसिंह के साथ जाना चाहा परन्तु जयसिंह ने आग्रह पर वह वही रखा रही। कुछ ही क्षणों में उसने महला में एक विवादपूर्ण परिस्थिति की उत्पत्ति महसूस की। पूर्णिमा ने वान दिया ता सुना—

य राजमहल है। यहाँ उन धीरागनाजा का जावास निवान रहा है जिहान अपनी सतीत्व रक्षा के निग्न अपनका आग की लपटा की भेंट चडा दिया। गौर, शूरता, वलिदान की इस जन्म और कौडास्थली पर व्यभिचार के अड्डे कायम नहीं किय जा सकते। यह नाटक अथवा मिनेमात्रर नहीं है जटा ऐसी तस्वीरों और मूर्तिया लगाई जाव। मेरे रनवाम को इस तरह अपवित्र करन का आपको किमन अधिकार दिया ?

आप चुप नही रह सकती ? धार नही बोल सकती ?

'बिलकुल नही। मन मब सुन लिया। विन्मपुर की रानी अभी जिदा है। उसकी नर्मों में भी महामतिया का राजूनी रवन दौडता ह। अपने रावाम का वह नाचन गाने वाली वेश्याआ के आवास में परिवर्तित नही कर सकती।'

इन्सानियत न रन मकें तो व्यवहार ता उ छोरे।

अपने भेज में मुझे सनाह की जरूरत नही है। विन्म आग की पूर्ति के लिए आप इस गाव में लाए है ? किम आचरण की शिक्षा के लिए इन तस्वीरों की आवश्यकता है ? शूर सामन्तों की मन्ताना को य आपकी तस्वीरों और मूर्तिया क्या प्रेरणा देंगी यह भी आपने सोचा है ?

'आप समझने की चेष्टा करें।'

'व्यभिचार को समझने की चेष्टा कर ? पाप का अपने घर में लान की बात कर ? अगोभनीय अत्याचार का सह ? नज्जाजनक अमात्रा जिवता को अपनाऊ ? क्या अब यही आपकी विचारधारा बन गई है ?'

आप बस देंगे। अबसर समझे। जा घर में महमान हैं उनका भी खयाल करें उनकी भावनाजा का सम्मान करें। अप्रिय बात कहने से आपकी इज्जत अधिक बनेगी। किसान की आत्मा को दुःख पहुंचाने से आपका कोई लाभ नहीं होगा।'

ठाकुर साहब ! थाड स सम्पक म हा कितना परिवतन आपम आ गया है उस पर आप विचार करे । ग्ही बात मेहमान की वह बराबर की हैसियत पर आश्रित है । पाप को बीमारी का, मेहमान बनाने की बात आपस नई सुनी है । अपने आदश पर अपने अधिकार पर अपनी भावना पर मुझे कोई बहस स्वीकार नहीं है । व तस्वीर व मूर्तिया यह सजावट इनी क्षण यहाँ म, इन महला स इम गढ म हट जाने चाहिए ।'

आप कुछ भी धय नहीं रख सकती ?'

'इन महला के जलावा और कोई भी स्थान उनके लिए उपयुक्त नहीं है ?'

समय भी ता चाहिए ।

और मुझे अपने लिए स्थान नहीं चाहिए ? देखती हूँ ये कैसे नहीं हटते हैं ?'

और यह कहते बहने ठकुरानी ने अपने रोप के आवेग में पूर्णिमा की एक नवनिर्मित मूर्ति का धक्का देकर नीचे गिरा दिया । ज्या ज्या ठाकुर जयसिंह ने उस राकने की, ममभाने की कोशिश की उसका क्रोध और अधिक बढ़ता गया और देखते देखते उसने मुनज्जित इस कला-कथा में अपने ध्वंस विभवम से तवाही मचा दी । कोई तस्वार कोई कलाचित्र कोई मूर्ति कोई सजा का सामान उसने एमा नहीं छाटा जिस पर उसके विनाश की छाप न हो । अपना बाय पूण करत उसने पुनारा—कोई है "

जी ! जावाज आई ।

इन सरका इकट्ठा करके गाव के बूटागान पर डलवा दा ।

जी ! एक दामी ने प्रवण करके कहा ।

'मुना नहीं ? मैं हुक्म देता हूँ । जल्दी करा ।

मुझे इजाजत फरमाये ता यह मत्रा मैं करूँ । आवाज पूर्णिमा की थी ।

'तुम ?

'मरा नाम पूर्णिमा है ।'

'तुम ही वह नानी हा ?

मैं आनकी दामी हूँ ठाकुर साहब मुझे अपना साथी बताकर लाये थे ।

‘मिने कहा वह सब सुन लिया ?’

‘और भी चाहे जो कुछ आप फरमा सकती हैं। आपका घर है। आप मालिक हैं।’

जिस जिस जगह इन महिला में तुमने अपने पाव रखे हैं वे सब फटा टम घुनवाने हामे।

‘अच्छा ही है रानी साहबा।

मरे सामने आने को तुम्हें किमने कहा ?’

अपन आप ही मैं हाजिर हा गई।’

अपने आप ही चली क्या न गइ जब तुपन मत्र कुछ सुन लिया था।”

मजबूरी थी, ठकुरानी साहबा। पर, जल्दी ही चली जाऊगी। पहले चनी जाना तो आपके दगन कैसे होत ?”

ननकी ! गढ़ के इन महिला का इनकी दोबारा को फर्कों को, दया को तुमन अपनी उपस्थिति से अपवित्र कर दिया है।

‘क्षमा चाहती हूँ ठकुरानी साहबा। पर, क्या इन महिला में पहले कभी नृत्य नहीं हुआ ?’

हुआ है।

‘क्या मेरे आने से पहले इन महलों की दीबारा मसगीत राग रागिनी गुञ्जिन नगी हुए ?’

‘हुए हैं।’

‘क्या गढ़ के इस प्राणण में, इन महिला में राग रग विलास की अनेक अमस्य घटनाएँ नहीं घनी ?’

क्या नहीं ?’

फिर मेरे आने से क्या अतर आ गया ? मैं भी ता एक नागी हूँ।

नारी के नाम पर बत्तक हो। भोग को वस्तु। नारी।’

कौन नारी भोग की वस्तु नहीं है रानी साहबा। अपन पति की सम्पत्ति की प्रतीका और प्रदरानी के अलावा और भी कुछ वह कभी बन पाई है ? विवाह की एक आवश्यक घटना पर किसी भी नारी को अपना नाज नहीं होना चाहिए। जन्म और विवाह

“पूणिमा ! तुम अभिनेत्री हो। तुम्हें सवाद बोलने आते हैं। पाप को व्यभिचार को एक सुन्दर शली में बणन करना तुम जानती हो। पर, इसमें तुम्हारी स्थिति में तुम्हारे व्यक्तित्व में कोई उत्थान नहीं जा सकता। अपने पाप को तुम पुण्य की सजा दो तो वह पुण्य अथवा गुण नहीं बन जायगा। पाप की परिभाषा बल देन से उनका अर्थ नहीं बदल जाते। वासना को प्यार कह देने से वह प्यार नहीं बन जाती। परन्तु उसने देखा कि पूणिमा उसके सामने कथम नहीं है। ठकुरानी के आखिरी वक्तव्य के प्रारम्भ से पहले ही वह उसकी उपस्थिति से दूर महलो के नीचे जा चुकी थी।

ठाकुर जयसिंह अब तक कुछ बोले नहीं थे। वे किसी को कुछ भी कहने की परिस्थिति में नहीं थे। पूणिमा के चल जाने के बाद उन्होंने कहा—

‘आज आते ही इस तरह का अवसर आप न लेतीं तो कुछ बुरा न हो जाता।’ मगर, ठकुरानी साहवा उन्हें कुछ कहती उससे पहले ही वे भी महलो के नीचे आ गये।

उन्होंने देखा कि पूणिमा की मन स्थिति ठीक नहीं है। स्वयं उससे कुछ कहने के पहले वे उससे कुछ सुनना चाहते थे जिससे उसकी इच्छा का भान उन्हें हो जाय। वे उसके पास आये उस समय वह थकी हुई सी बिलकुल शांत एक खटिया पर पटी हुई थी। उसकी आँखें बन्द थी और उसका एक हाथ उसके सिर पर था। ठाकुर जयसिंह जाकर उसी के पास बैठ गये थे। पूणिमा ने आँखें खोली और जब उसने जयसिंह को धठे देखा उसके चेहरे पर एक सूखी अथहीन निर्जीव सी मुस्कराहट दौड़ गई। क्षणिक में ही उसने कहा—

‘मैं इस स्थान को आज ही छोड़ना चाहती हूँ। आप सवारी का इन्तजाम करमा सकेंगे?’

‘ऐसी कोई बात नहीं है, पूणिमा ! इतने सामान को इतनी जल्दी में हम ठीक भी नहीं कर सकते।’

‘सामान कुछ नहीं है, ठाकुर साहब ! मेरे लिए दो साड़ियाँ और एक शाल बहुत हैं।’

‘और बाकी?’

‘वह सब तो मैं कभी की दे चुकी। सिर्फ वितरण बाकी है जा केसर की मा कर देगी।’

‘जेवर आदि?’

‘उा सब पर मैंने जिस जिमको जो देना था अलग अलग नाम लिख गिय है। उनकी शादी विवाह का काम उनसे चत जायगा।’

‘पूणिमा यह तुमने क्या किया?’

‘मेरा उन पर अधिकार नहीं था?’

“अधिकार था। पर, वे तुम्हारा बहुत प्रिय वस्तुए थी।”

‘आप समझते हैं कि वे बच्चे और स्त्रिया मुझे उन वस्तुओ से कम प्रिय थे? ठाकुर साहब। उनके देने मे, उनके वितरण म जो खुशी मुझे हुई है उसका एक पूरा अंश भी मुझे उह रखकर नहीं होती। हा, तो आप प्रबन्ध कर सकेंगे?’

‘पूणिमा! आज जो कुछ हुआ उसके लिए मुझे बहुत दुःख है।

“रानी साहबा मुझे कुछ कहकर हलकी हा गइ। उन्होंने अपने विचार प्रकट किए। कोई असत्य बात भी नहीं कही। दुःख किस बात का?’

फिर भा मैं महसूस करता हू कि उन्हें ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए था।’

जा कुछ हुआ वह तो बीत गया। हम तो अब भविष्य की बात करनी चाहिए। आप तयार है?’

“आप निश्चय कर चुकी?’

“हा। केसर की मा को बुला दोजिये। वह गाव की स्त्रिया और बालक-बालिकाओ को इकट्ठा कर देंगी। चीन्हे भी उनके सुपुद कर दूंगी और मिथना भी हो जायगा।

‘पूणिमा! मेरी प्रायना पर पुनर्विचार नहीं कर सकती?’

‘मर लिये इतनी जिद को भी आप नहीं निभायेंगे?’

सुनकर ठाकुर जयसिंह निरुत्तर हो गया। उन्होंने सब प्रबन्ध पूणिमा के आदेशों के अनुसार कर दिया।

जल्दी ही आप गढ़ के दरवाजे के आग रवाना होने के लिए सज्जा हो गई। पूणिमा को उस पर बड़े अभी कुछ ही क्षण बीते थे। गाव के अनेक



“जीवन और मृत्यु दोनों आकस्मिक घटनाएँ हैं। इन पर प्राणी का कोई प्रभुत्व नहीं है। इसलिए व्यक्ति को चाहिए कि जिस इच्छा की वह पूर्ति न कर सके उसकी पूर्ति उस जिम्मेदार हाथों में छोड़ दे जो उसी के समान सचेतनशील हो। इससे एक प्रकार की शांति मिलती है।” सुन कर ठाकुर जयसिंह चुप हो गये। पूर्णिमा ने देखा कि उसकी इस बात से ठाकुर साहब को कोई सुशी नहीं हुई है बल्कि रज हो हुआ है। वह बोली—

‘मेरी संपत्ति पर मेरा अधिकार नहीं है ?

क्या नहीं, पूर्णिमा ?

‘आपको मुझसे पूरी कीमत नहीं मिली ?

“मैंने सोचा नहीं किया था, पूर्णिमा। तुम भी मुझे गलत समझागी ऐसी आशा मुझे नहीं थी।’

फिर वसोयत में आपकी आपत्ति क्या है ?”

“तुम्हारे जन्म की किसी बात को मैं बदलित नहीं कर सकता पूर्णिमा। सुनकर वह हस पड़ी। ठाकुर जयसिंह की आसों में आसू छलकने लग। वह बोली—

‘एक दिन जन्म आना ही है ठाकुर साहब। जिसने जन्म लिया है वह उस दिन से बच नहीं सकता। फिर अपसोस क्या बचो ? जन्म और मृत्यु दोनों जीवन की प्राकृतिक घटनाएँ हैं। मैं आप और दुनिया के समस्त प्राणी इस प्राकृतिक नियम के अपवाद नहीं। प्राणी की सचेतनाओं में उनका आदान प्रदान में उसका जीवन है। बाकी सब यही रह जाता है। जीवन के साथ न कुछ लाया जा सकता है न साथ कुछ ले जाया ही जा सकता।’

‘तुमको ऐसी बातें करते सुनकर मैं अपनेको काबू में नहीं रख सकता पूर्णिमा। मुझे समय से पहले निराश न करो।

वह पुनः मुस्करा उठी। जयसिंह का आसों में जधु प्रवाह चलने लगा। उसने ठाकुर जयसिंह का हाथ अपनी हथेली में ले लिया। कुछ क्षण विरमकर वह बोली—

‘समय की इस मर्याद में परस्पर भिन्नता, बोलना, समझना ही एकमात्र सत्य है ठाकुर साहब ! कलाकार सत्यकुमार का गायन

अपने महा लौटने की खबर नहीं है।”

‘उन्हें बुला दू?’

“आपन उसे माफ़ कर दिया?”

हां, पूर्णिमा! व्यक्तिगत स्वाथ के लिए किमी का दण्ड देना मैं अमानुषिक समझन लगा हू। ऐसी क्षमा में एक अजीब शक्ति है जो उस व्यवहार में लाने वाला ही समझ सकता है।’

‘ठाकुर साहब! आप कितन अच्छे हैं।’ क्षणएक विरमकर वह बोली— ‘उस घम शिक्षा, विद्या, बुद्धि से इमान का क्या फायदा जिसे वह अपने जीवन में व्यवहार में न ला सके। क्या आप राक्षस सत्यकुमार की तलाश करेंगे?’

क्या नहीं, पूर्णिमा। मैं जरूर उस महा लाऊंगा। सुनकर पूर्णिमा की आंखें क्षणएक के लिए सजल हो गईं।

ठाकुर जयसिंह ने सत्यकुमार की इसके बाद तलाश शुरू की मगर उसे वह न मिल सका। पूर्णिमा जानती थी कि सत्य का खबर मैं कोई निश्चित पता नहीं है और इसलिए वह जयसिंह को उसके न खान के लिए दोष नहीं दे सकती थी। इतना अवश्य था कि जब भी जयसिंह बाहर से घर लौटता सत्य का जिन उनको पारस्परिक चार्ता में हो जाता।

एक दिन पूर्णिमा चाय पीकर मुवह सुवह अपने कमर में बठी एक पुस्तक पढ़ रही थी कि उसे सूचना मिली कि स्थानीय एक कला परिषद का गिफ्टमडल उसमें मिलने के लिए जाया है। इस सूचना में उसे खुशी और आश्चर्य दोनों हुए। कमर में आकर बैठने के बाद एक प्रनिनिधि ने कहा—

दबी पूर्णिमा! हमारी परिषद में न कोई धनवान व्यक्ति इसका मर शक अथवा मदम्य है और न कोई ख्यातिप्राप्त बलाकार ही हमारी मदद में है जिसके नाम के सहारे हम कुछ आर्थिक लाभ उठा सकें। छोट माट विविध सांस्कृतिक कार्यक्रम इधर उधर देकर हम किसी तरह अपना गुजारा चलाने हैं। धनवान उद्योगपतिया व्यापारियों और सठा के पास जब भी हम चढ़े के लिए गये हैं उन्होंने हम खाली हाथ लौटाया है। पूछने हैं तुम्हें किसने भेजा है हम तुमसे क्या फायदा हो सकता है हम तुम्हें क्या दे जायेंगे। अकेले अर्थभाव ने हम स्वाम्यहीन बुद्धिहीन, धानहीन, बन्धु चरित्रहीन

पूणिमा के कानों में उसके शब्द स्वर आ रहे थे। उसने आगे सुना—  
 क्या विवशता थी, कि तुम न बाल पाए ?  
 क्या विवशता थी कि हम न रोक पाए ?  
 मधु मिलन वरगन, अभिशाप न हुआ।  
 नैन आसू गिर न पाया, अचना फिर क्या हुई ?

शां और वाणी, दोनों परिचित निरंतर पूणिमा के कानों में आ रहे थे मगर, वह कुछ भी कहने-करने में असमर्थ थी। उसने आगे और सुना—  
 रूप यौवन प्रेम प्रतिमा निखर आय,  
 नन शीघ्र आग्नी में पथ सजाय,  
 श्वास सरगम, अश्रुमय गायन हुआ।  
 तुमको अपना कर न पाया साधना फिर क्या हुई ?

मगर जब उपकी आँखें बंद हो रही थी। उनमें जामू टपक रहे थे। गीत भी बंद हो गया था। डाक्टर ने जाकर देखा कि पूणिमा का शरीर शीतल पड़ा है। उसमें ऊष्मा नहीं थी। उसने हृदय की गति का टटोला। वह धीरे धीरे बंद हो रही थी। प्रशाल में पूणिमा के नारे लग रहे थे। पूणिमा शीतल शांत मंच के एक कमरे में लेटी हुई थी। डाक्टर की सलाह से तुरंत उसे अस्पताल ले जाया गया। वहाँ चिकित्सक उस पर अपना प्रयास की प्रतिश्रिया देखते रहे। जर्मिह और सत्य उनके निणय की प्रतीक्षा में रात भर आँगा और निराशा में जगते रहे। कुछ समय के लिए जर्मिह की आँख लग गई। उठा तो मालूम हुआ कि शवघर में किसी को भेजा गया है। जाकर देखा तो पाँच इन्सान पास पास एक-दूसरे के सहारे पड़े थे एक पुरुष एक स्त्री, एक जीवित एक मृत सत्य और पूणिमा।



यदि आप चाहते हैं  
कि राष्ट्रभाषा में प्रकाशित होने वाली  
नित नई उत्कृष्ट पुस्तकों का परिचय  
आपको मिलता रहे  
तो कृपया अपना पूरा पता  
हम लिख भेजें ।  
हम आपको इस विषय में  
नियमित सूचना देते रहेंगे ।

---

सूय प्रकाशन मंदिर बिस्मो का चौक बीकानेर